गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, राजस्थान से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
सितम्बर 2022
Vol. 10, Issue 9 (2)

Impact Factor : 2.636

# Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

## हिन्दी भाषा : शिक्षा, साहित्य और संस्कृति के संदर्भ में

संपादक :
डॉ. रेखा सोनी

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग
एडवोकेट

विशेषांक संपादक :
डॉ. अरूणा अंचल

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

# संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed & Refereed Journal

वर्ष : 10 अंक : 9 (2) सितम्बर : 2022 आईएसएसएन : 2321–8037

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष डॉ. विश्वकीर्ति

संरक्षक :
हरविन्द्र कमल, पटियाला

मार्गदर्शन :
डॉ. राजेन्द्र गोदारा
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

इन्जीनियर सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड कम्युनिकेशन, सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज पफॉर गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्रेष्ठ चौधरी
सीनियर मैनेजर, स्टेट बैंक ऑपफ इंडिया, साहिबजादा अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब।

प्रधन सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीनादेवी शोध संस्थान, भिवानी, हरियाणा

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर–335001, राज.

परीक्षण समिति (Peer Reviewed Committee)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी, हरियाणा

डॉ. सुमित्रा देवी
गीता को–एजुकेशन टीटी कॉलेज, घरसाणा, राजस्थान।

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर, राजस्थान

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय भिलवडी, महाराष्ट्र

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज धारवाड़, कर्नाटक

डॉ. मोहनलाल जाट
पीजी कन्या महाविद्यालय, सैक्टर–11, चंडीगढ।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार।

डॉ. सतपाल स्वामी
गीता को–एजुकेशन टीटी कॉलेज, घरसाणा, राजस्थान।

डॉ. पूजा धमीजा
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग तोशाम, हरियाणा

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राजस्थान

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय, सूरतगढ़, राजस्थान

डॉ. मुकेश चंद
राजकीय महाविद्यालय, बाडी, धौलपुर, राजस्थान।

डॉ. पवन ठाकुर
बरेली, उत्तर प्रदेश

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

कानूनी सलाहकार :–
डॉ. रामफल दलाल एडवोकेट, भिवानी
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट, पटियाला।



सम्पादकीय कार्यालय :
6–एच 30, जवाहर नगर, श्रीगंगानगर, राजस्थान–335001

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग,** एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज,** पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाउफसिंग बोर्ड, भिवानी–127021 ;हरियाणा से जारी किया।

# संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed & Refereed Journal

An International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences



सचिव :

**डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट**

**202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,**

**भिवानी–127021 (हरियाणा)**

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152


**संगम मासिक पत्रिका** में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी ;हरियाणा होगा।


*Published by :*

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152



All Right Reserved by Publisher & Editor


Price: Individual/Institutional : 1300/-

*Disclaimer :*

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.


*Printed by :* Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

# गीना देवी शोध संस्थान

## द्वारा प्रकाशित विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

ISSN : 2321-8037

# संगम शोध पत्रिका

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक

## विशेष :-

आलेख भेजने की अन्तिम तिथि :- प्रत्येक माह की 13 तारीख

सहयोग राशि भेजने की अंतिम तिथि :- प्रत्येक माह की 20 तारीख

निर्धारित तिथि के बाद प्राप्त पेपर पर विचार नहीं किया जाएगा।

आपको अगले अंक के लिए पुनः सारी प्रक्रिया करनी होगी।

शोध आलेख भेजने के लिए मेल आईडी : grngobwn@gmail.com

### नियम एवं शर्तें :

1. शोध आलेख की सीमा 1500-2000 शब्दों की है। पेपर के टाइटल के नीचे अपना नाम, पता, मोबाईल, मेल आईडी अवश्य लिखें इसके अभाव में आपका पेपर स्वीकार नहीं किया जाएगा।
2. साहित्य, कला, संस्कृति, मानविकी एवं समाज विज्ञान से सम्बन्धित किसी भी विषय पर शोध आलेख भेज सकते हैं। शोध आलेख कृतिदेव 10, मंगल फॉन्ट में एमएस वर्ड फाइल में टाईप करवाकर ही भेजें। पीडीएफ या हाथ से लिखा पेपर स्वीकार नहीं किया जाएगा।
3. शोध आलेख केवल अपनी ईमेल से ही भेजें क्योंकि हम तमाम प्रकार की जानकारी जिस मेल से हमे पेपर प्राप्त होता है उसी पर देते हैं व्यक्तिगत फोन करके नहीं।
4. एक से अधिक बार भेजे गए शोध आलेख/अशुद्ध आलेख स्वीकृत नहीं होंगे। सम्पादक मंडल का निर्णय सर्वमान्य एवं अन्तिम होगा।
5. अशुद्धियों, प्लेगरिज़्म एवं मौलिकता के लिए आप स्वयं जिम्मेदार होंगे। आलेख प्रूफ रीडिंग के बाद भेजें, बाद में किसी भी प्रकार का सुधार संभव नहीं होगा।
6. पत्रिका की हार्ड/प्रिंट कॉपी के लिए प्रकाशन/सहयोग राशि 1300/- देनी होगी। प्रत्येक लेखक को संस्थान द्वारा प्रकाशित एक पुस्तक सप्रेम भेंट की जाएगी।

सेमिनार/संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध आलेखों को विशेषांक रूप में प्रकाशित करवाने के इच्छुक व्यक्ति/संस्थान सम्पर्क करें-8708822674

संपादक एवं निर्देशक :
डॉ. रेखा सोनी

प्रबंध संपादक एवं सचिव :
डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट

## अनुक्रमाणिका


| क्र. | विषय | लेखक | पृष्ठ |
|---|---|---|---|
| 1. | **सम्पादकीय** | डॉ. अरुणा अन्चल | 7 |
| 2. | पर्यावरण चिंतन इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता के सन्दर्भ में | नलिनी शर्मा | 8–12 |
| 3. | द्विवेदीयुगीन हिंदी काव्य में महिला रचनाकारों का योगदान | गीता खोलिया | 13–20 |
| 4. | हिन्दी पत्रकारिता | राज श्री भारद्वाज | 21–25 |
| 5. | हिन्दी पत्रकारिता | नरेन्द्र कुमार सलूजा | 26–30 |
| 6. | मुण्डा जनजाति समुदाय में पूर्वजों की पूजा : विभिन्न पर्व–त्योहारों के संदर्भ में | माधुरी सामन्त | 31–34 |
| 7. | हिन्दी सेवी महिला लेखिकाएं : एक परिचय (द्विवेदीयुग के संदर्भ में) | गीता खोलिया | 35–42 |
| 8. | सामाजिक परिवर्तन में मीडिया की भूमिका | डॉ० ललित चंद्र जोशी | 43–50 |
| 9. | स्वातंत्र्योत्तर हिंदी सिने–गीतों में राष्ट्रीय चेतना | डॉ० राजेश कुमार | 51–56 |
| 10. | अन्तर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस और कुमाउनी, गढ़वाली भाषा | भावना वर्मा | 57–60 |
| 11. | महात्मा गांधी का शिक्षा दर्शन एवं राष्ट्रिय शिक्षानीति–2020 | डॉ० श्याम प्रसाद.के.एन | 61–64 |
| 12. | आधुनिक भारत में हिन्दी की स्थिति | स्नेहलता शर्मा | 65–67 |
| 13. | राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रथम कर्णधार : स्वामी दयानंद सरस्वती | नेहा प्रधान | 68–71 |
| 14. | हिन्दी जनसंचार | भावना महेश रोचलानी | 72–74 |
| 15. | हिन्दी पत्रकारिता | कृतिका चौधरी | 75–78 |
| 16. | महाप्रस्थान में मिथक और नये संदर्भ का अध्ययन | नटराज गुप्ता | 79–83 |
| 17. | राष्ट्रीय क्षितिज पर हिंदी का बहुआयामी स्वरूप | डॉ० जंग बहादुर पाण्डेय | 84–86 |
| 18. | विश्व का तोरण द्वार है हिंदी– राष्ट्रभाषा बनाम राजभाषा | श्रीमती तारामणि पाण्डेय | 87–88 |
| 19. | स्वामी दयानन्द और हिन्दी | मनमोहन कुमार आर्य | 89–92 |
| 20. | हरयाणे के त्यागमूर्ती आर्य नेता का हिन्दी सत्याग्रह में महान योग | प्रो० शेर सिंह | 93–97 |
| 21. | औपनिवेशिक भारत में रेलवे के विकास पर गोपाल कृष्ण गोखले के विचार | डॉ० अखिल कुमार गुप्ता | 98–104 |
| 22. | हिंदी में रोजगार की संभावना एवं चुनौतियाँ | सरिता | 105–108 |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 23. | वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा और संभावनाएं | डॉ० रेणु कंसल | 109–111 |
| 24. | प्रेमचंद का गोदानः समाज– उत्थान के लिए 'वरदान' | रीतू रानी | 112–115 |
| 25. | भारतीय संविधान और हिंदी भाषा का विकास | डॉ० अर्चना कुमारी | 116–119 |
| 26. | स्वामी दयानंद और आर्यसमाज की हिन्दी भाषा को देन | डॉ० विवेक आर्य | 120–122 |
| 27. | हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श | निरुत्पल बोरा | 123–126 |

# सम्पादकीय

विशेषांक संपादक

डॉ. अरुणा अन्चल की कलम से.....

"हिंदी एक ऐसी माला है जिसमे सम्पूर्ण देश के साहित्य और संस्कृति को पिरोया जा सकता है।"

हिंदी अपने आप में पूरी संस्कृति है। इसके विकास के लिए आवश्यक है कि हम इस पर गर्व करें। इसके लिए बच्चों को बचपन से ही हिंदी साहित्य और मूल्यों से अवगत कराना जरूरी है। उन्हें सही हिंदी लिखना–बोलना सिखाएं और बेहतर हिंदी बोलने पर प्रोत्साहित करना चाहिए। राष्ट्र के विकास की नींव और सर्वांगीण विकास की कल्पना भाषा के जरिए ही शुरू होती है। हिंदी का विकास करना सिर्फ एक वर्ग का दायित्व नहीं बल्कि यह जनमानस का सामूहिक प्रयास होना चाहिए। भाषा का सही प्रयोग, उच्चारण, शब्दों का चयन, शिक्षण में भाषा का समुचित संकलन, साहित्य में हिंदी भाषा को प्रमुखता मिलनी चाहिए। हिन्दी भाषा का विकास संस्कृत से हुआ है और इसकी पुरातन विकास धारा वैदिक संस्कृत से लौकिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत से पाली, पाली से प्राकृत, प्राकृत से अपभ्रंश और शौरसेनी अपभ्रंश से हिन्दी भाषा के विकास की मानी जाती है। हिन्दी भाषा की लिपि देवनागरी है जो ध्वनि प्रधान हैं। इसे विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक, सरल एवं सुबोध भाषा माना गया है। यदि हमें हिन्दी का विस्तार विश्वपटल पर रेखांकित करना है तो इसकी भाषाई व सांस्कृतिक उत्कृष्टता को आत्मसात करने की प्रवृत्ति को भी विश्व पटल तक विस्तृत करने के प्रयास इसकी मानकता को सुनिश्चित करते हुए करने होंगे।

हिंदी दिवस पर गुरु फाउंडेशन, रोहतक, संगम अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका, श्रीगंगानगर तथा बाबा मस्तनाथ विश्व विद्यालय के शिक्षा विभाग द्वारा एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। जिसमें हिंदी : भाषा, शिक्षा, साहित्य और संस्कृति के शोध पत्र आमंत्रित किए गए। इस संगोष्ठी में देश के विभिन्न राज्यों से प्राध्यापक व शोधार्थियो?

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठ :8-12

# पर्यावरण चिंतन इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता के सन्दर्भ में

–नलिनी शर्मा
शोधार्थी, वनस्थली विद्यापीठ, निवाई, टोंक, राजस्थान

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

**प्रस्तावनाः**–इक्कीसवीं सदी में विकास एवं प्रौद्योगिकी के अनवरत क्रम के चलते आज का मनुष्य भोगवादी संस्कृति में आकण्ठ तक डूब चुका है। वैश्विक स्तर पर पर्यावरण संकट का जो गंभीर मुद्दा उभर कर सामने आया है वह विज्ञान और तकनीकी में विकास का ही परिणाम है। पूंजीवाद की स्वार्थ–प्रेरित जीवन दृष्टि लाभ और भोगवाद का अवलम्बन लेकर प्राकृतिक संसाधनों को विनष्ट कर भौतिक उपलब्धियों को परिपुष्ट बना रही हैं इस विकास की गति ने मनुष्य को इतना संवेदनहीन बना दिया की वह प्रकृति की अपरिमित शक्तियों को अनदेखा कर उनके दोहन से यन्त्रीकृत व्यवस्था को पोषित करते हुए नैसर्गिक नियमों को भी ध्वस्त कर रहा है।[1] इस चिंतन में डुबा इक्कीसवीं सदी का कवि अपनी कविताओं के माध्यम से जनमानस में चेतना का संचार करता है। कवि 'महेश आलोक' अपनी कविता' पृथ्वी हिल गयी' में चिन्ता व्यक्त करते हैं कि तूफान या भूकंप आने पर पृथ्वी हिल जाती है। घर ढह जाते हैं और लोग मर जाते हैं–

"पृथ्वी के हिलने से पृथ्वी हिल गयी
घरों के ढहने से घर ढ़ह गये
लोगों के मरने से लोग मर गये।"[2]

इक्कीसवीं सदी के कवि की दृष्टि में पर्यावरणीय सुव्यवस्था के लिए सबका संतुलन और सबका जीवन संरक्षणीय है।[3] कविता 'कुदरती करिश्मा' में केशव विवेकी लिखते हैं–

"मानवों को प्रकृति का सहयोगी बनना है,
निस्वार्थता से स्वास्थ्य पर कार्य करना है।
मानव जीवन को पुनः बनना दिहंदा है,
है कुदरत का करिश्मा, मानव अभी जिन्दा है।"[4]

मानव प्रकृति का सहयोगी बन कर ही अपने व प्रकृति के स्वास्थ्य की रक्षा कर सकेगा। इक्कीसवीं सदी की कविता चाहती है कि वनस्पतियों, जीव–जन्तुओ एवं प्राणियों की प्रजातियों का अस्तित्व कायम रहे। इक्कीसवीं सदी के कवि डॉ.'रमेशचन्द्र' कविता 'हमें पर्यावरण बचाना होगा' में हम पर्यावरण को प्रदूषित करने की बहुत नादानी कर चुके है। जिससे हवा, पानी अशुद्ध हो गये अब पर्यावरण को बचाने के लिए हमे संकल्प लेना होगा।

"हम बहुत कर चुके नादानी और करेगे कितनी मनमानी,
न हवा शुद्ध रही है अपनी, न शुद्ध रहा है अपना पानी,
हमें पर्यावरण बचाना होगा,

सबकों मिलकर एक साथ संकल्प यही दोहराना होगा।"[5]

कवि अपनी 'पर्यावरण बचाओ' कविता में अपने जीवन को बचाने के लिए पर्यावरण बचाओ की गुहार लगा रहा है–

"पर्यावरण बचेगा तभी कल बचेगा
अपना जीवन बचाना है तो पर्यावरण बचाओ ।
जीवन में सुख पाना है तो पर्यावरण बचाओ
जल जीवन है तो अपने पेड़ो को न काटों
बहती नदी को रोको नही, न उसके बहाव को
प्रकृति है अनमोल निधि, नष्ट न होने पाए
पाटों नदी, सरोवर, पेड़–पौधो को न आपस में बांटो
अपना कल सजाना है तो पर्यावरण बचाओ ।"[6]

इक्कीसवीं सदी के कवि का मानना है कि प्रकृति से स्वतः प्राप्त संसाधनों द्वारा मानव का भरण –पोषण होता रहा है, लेकिन अपने स्वार्थ के लिए उपभोग की वस्तुओं में गुणात्मक अभिवृद्धि द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के अस्तित्व को समाप्त करना उच्च बौद्धिक स्तर से परिपूर्ण मानव का कृत्य नहीं हो सकता। प्रकृति के प्रत्येक जैविक घटक का महत्व समझ कर ही पर्यावरणीय नैतिकता को अपनाया जा सकता है। इक्कीसवीं सदी के कवि आर्थिक विकास के लिए प्रकृति के अंधाधुंध दोहन को अनैतिक मानते हैं। इन्हीं दुष्प्रभावों को वर्णित करते हुए भविष्य में आने वाले प्राकृतिक प्रकोप की संम्भावना जता कर मानव को सचेत करते हैं कि–

"पिंघल जायेंगे ग्लेशियर, उफन आयेगा समुद्र,
तटीय शहरों की होगी जल समाधि,
तब भागकर आयेंगे लोग पहाड़ों की ओर
आधी सदी के बाद।"[7]

साम्राज्यवाद ने हमें खनिजों के अंधाधुंध दोहन के लिए प्रेरित कर उसके आर्थिक पक्ष के प्रति इतना लोभी बना दिया कि हम उचित संरक्षण नीतियों एवं उनकी प्रतिस्थापना की दुर्लभता की तरफ भी ध्यान नहीं दे रहें। साम्राज्यवाद के फैलते अर्थ पिशाच से सावधान करते हुए इक्कीसवीं सदी की कविता अपने देश की धरती के भीतर निहित भण्डारों और अमृत कुण्डों को संरक्षित करने का बीडा उठाती है। चूंकि पूरी तरह से विकसित हो चुकी शोषण श्रृंखला को तोड़ना आज आसान नहीं है फिर भी कवि ज्ञानेन्द्र पति अपनी कविता, 'अधरातघास गन्ध' में सत्य को प्रकट करते हैं–

"अपने देश की माटी को गूंथ बनाना चाहते
देश की प्रतिमा नई, देश की माटी खनिजोर्वर
लगी जिसमें साम्राज्यवाद की सेन्ध
जिसके वक्ष के अमृतकुण्ड में गहरे धँसा शोषण का अदृश्य साइफन
अमरीकी अर्थ पिशाच की आक्टोपस सूँड।"[8]

प्रकृति से अनावश्यक छेड़छाड़ और अंधाधुंध विदोहन करने वाली घटनाएं आज दैनिक जीवन का हिस्सा बन गयी है। पर्वतों को काट कर विस्फोट से उड़ाना अत्यन्त सुनियोजित ढंग से हो रहा है। पर्वतों को चकनाचूर करने की प्रक्रिया में पूरी तरह से जुटे मानव समूहों के कृत्यों और उनके विषाक्त परिणामों से भली–भांति परिचित करवाते हुए इक्कीसवीं सदी की कविता 'झारखंड के पहाड़ों का अरण्यरोदन में कहती हैं–

"वे एक नये दिन के लिए तैयार कर रहें हैं
अब आयेंगे पर्वतों के पंख काटने वाले वज्रधर
इन्द्र के वंशज अपनी फटफटिया में भड़भड़िया मे
और फटाफट धड़ाधड़ चालू हो जायेंगे क्रेशर
बारूद की गन्ध फैल जायेगी हवा में
उनके टूटने की गन्ध के उपर।"[9]

इक्कीसवीं सदी की कविता वैश्विक–ताप वृद्धि एवं तेजाबी वर्षा जैसी पर्यावरणीय समस्याओं की ओर संकेत करती है। 'युद्ध के विरुद्ध' कविता में कवि 'ज्ञानेन्द्रपति' ने खाड़ी युद्ध के प्रभाव स्वरूप काली तेजाबी वर्षा से होने वाले पर्यावरण प्रदूषण को विषय बनाया है। वे कहते हैं, जब बमों, मिसाइलों के विस्फोट के परिणाम स्वरूप वायुमंडल से तेजाब, वर्षा के रूप में धरती पर बरसता है, तो ऐसे वायुमंडल के गर्म जल में सांस लेने वाला, पृथ्वी गोलक रूपी शिशु कैसे स्वस्थ रह सकता है, अर्थात पृथ्वी की झीलों, नदियों तालाबों आदि का प्रदूषण और वहाँ के प्राणी तथा पादप संपदा का विनष्ट होना तय हैं–

"काली वर्षा, एसिड वर्षा, आसमान रोता हैं
काले तेजाबी आँसू, युद्ध का धुआँ आकाश के
अन्तस में भरा हुआ है, वायुमंडल के
गर्म जल में साँसे लेता हुआ शिशु ही तो हैं
यह पृथ्वी गोलक अनन्त आकाश के लिए।"[10]

प्रकृति के साथ तादात्म्य एवं आत्मीयता का अभाव होने के कारण पंछी भी छत पर दाना चुगने नहीं आते। कवयित्री पंछी नहीं आते' शीर्षक कविता में कहती है–

"आती है सुबह और धूप भी छत पर
पर पंछी नहीं आते."[11]

सामाजिक असमानता की चिंता, पर्यावरण व प्रकृति के प्रति मनुष्य के व्यवहार, साम्प्रदायिक और हिंसा के मसले आदि सब कविता की इस दुनियाँ में शामिल हैं। ये सभी हमारे परिवेश और यथार्थ का हिस्सा है। कवयित्री' अनामिका 'अपनी 'थर्मामीटर' शीर्षक कविता में कहती है–

"आज जब धरती का माथा गरम है
जल स्रोतों की पट्टी पूरी नहीं पड़ती
निश्पत्र पेड़ हो गए है थर्मामीटर।"[12]

इक्कीसवीं सदी की सबसे खतरनाक समस्या मानव का संवेदनहीन होना ही है इसका प्रमुख कारण मनुष्य और प्रकृति के बीच के संबंध का टूटना है। 'मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद' नामक कविता में कवि कहते हैं–

"ओ चिड़िया तुम बोलों बारम्बार गाँव में, घर में,
घाट में, वन में, पत्थर हो चुके आदमी के मन में।"[13]

इक्कीसवीं सदी का कवि कहता है कि मनुष्य ही अपने पैर के नीचे की धरती को भूल जाते हैं। बाकी सभी जीव– जन्तु प्रकृति से जुड़ कर ही रहते हैं। अपनी लम्बी कविता 'नागकेसर का देश यह' में कवि कहते हैं–

"मछली अपना जल नहीं छोड़ती पक्षी अपना पेड़
और तुम छोड़ देते हो अपनी धरती।"[14]

इक्कीसवीं सदी की कविता जब आज के स्वार्थी मानव को समाजहित का ढोंग करते देखती है, तो उसे उसके 'पृथ्वी सूक्त' के रचयिता के वंशज होने पर संदेह होता है, जिस देश में कंद–मूल तोड़ने से पहले वृक्षों से अनुमति ली जाती थी, पृथ्वी पर चलने पर उसे रोंदने के लिए क्षमा माँगी जाती थी, ऐसे राष्ट्र की शान्ति साधना का ढोंग करने वाले अग्रणी नेता प्रकृति एवं मानव का विनाश करने पर आमादा हैं। पृथ्वी को अपनी अंगुलियों पर नचाने वाले शक्तिशाली राष्ट्र के सिरमौर विशिष्ट वातावरण में बैठकर पृथ्वी का भविष्य तय करते हैं। एक ओर भूमिगत परीक्षणों से पृथ्वी को तार–तार करते हुए विश्व में परचम लहराना चाहते हैं तो दूसरी ओर निरस्त्रीकरण का दावा करते हैं ऐसे मानव की सच्चाई प्रकट करते हुए कवि' ज्ञानेन्द्रपति 'कविता' यह पृथ्वी केवल तुम्हारी है' में कहते हैं–

"थर्राते हो पृथ्वी की मिट्टी देह
पयस्वती पृथ्वी के गर्भस्थल में मारकर घूंसा
विश्व मानव–समुदाय में अपनी ब्रज मुट्ठी लहराते हो
नृशंस विजेता की, बर्बर मुद्रा में निरस्त्रीकरण वार्ताओं के दौरान
कैमरों के योग्य चकाचौंधी उजाले में
सभ्य– सौम्य निश्पाप दिखते भी हरबार।"[15]

**निष्कर्षः–**निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कविता ने प्रकृति की समस्त जैविक–अजैविक इकाईयों के महत्त्व को अंगीकार कर पर्यावरणीय चेतना द्वारा मानव और मानवेत्तर जगत के संबंध को महत्त्व दिया है। साथ ही इसमें बाह्य भौतिक–पर्यावरण और मानवीय जीवनानुभूतियों के बीच के अन्तर्संबंध को केन्द्र में रख कर प्रकृति या पर्यावरण में मानव हस्तक्षेप से होने वाले निषेधात्मक परिवर्तन के कार्य–कारण संबंधों की भावनात्मक व्याख्या की गई है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ–सूचीः–**

1. भनोत, डॉ० नवज्योतः पारिस्थितिक असन्तुलन के संदर्भ में हिंदी की प्रकृतिपरक कविता, अक्षय प्रकाशन,जयपुर संस्करण, पृष्ठ संख्या–1
2. आलोक, महेशः छाया का समुद्र, सेतु प्रकाशन, प्रा. लि. दिल्ली प्रथम संस्करण, 2019 पृष्ठ संख्या–43
3. रस्तोगी, डॉ वन्दना : प्राचीन भारत में पर्यावरण चिंतन, पब्लिकेशन स्कीम, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2000 पृष्ठ संख्या–30–31
4. विवेकी, केशव : परिवर्तन लहरी, एजुकेशन पब्लिशिंग, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2019 पृष्ठ संख्या–17

5. डॉ. रमेशचन्द्र : बदलाव का मौसम, बोधि प्रकाशन जयपुर, प्रथम संस्करण, 2019 पृष्ठ संख्या–93
6. डॉ. रमेशचन्द्र : बदलाव का मौसम, बोधि प्रकाशन जयपुर, प्रथम संस्करण, 2019 पृष्ठ संख्या–94
7. राघवेन्द्र : पहाड़ खुश है, मधुमति, मार्च, 2010, पृष्ठ संख्या–24
8. ज्ञानेन्द्रपति : संशयात्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004, पृष्ठ संख्या–114
9. ज्ञानेन्द्रपति : संशयात्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि.,दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004, पृष्ठ संख्या–22
10. ज्ञानेन्द्रपति : संशयात्मा, राधा कृष्ण प्रकाशन प्रा. लि.,दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004 पृष्ठ संख्या–102
11. भटनागर, अलका :तपती रेत पर, बोधि प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण–2013 पृष्ठ संख्या–41
12. अनामिका : टोकरी में दिगंत, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि.नई दिल्ली, संस्करण 2022 पृष्ठ संख्या–17
13. श्रीवास्तव, एकांत : मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण, 2016 पृष्ठ संख्या–15
14. श्रीवास्तव, एकांत : नागकेसर का देश यह, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण, 2016 पृष्ठ संख्या–10
15. ज्ञानेन्द्रपति : संशयात्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि.,दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004 पृष्ठ संख्या–137

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः13-20

# द्विवेदीयुगीन हिंदी काव्य में महिला रचनाकारों का योगदान

–गीता खोलिया

एसो0 प्रोफे0 (हिंदी) हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना परिसर, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)–263601

♦♦♦

दीन दुखियों के दुख दर्द को सुनकर उनकी सेवा में निमग्न होना इन्हें अधिक अच्छा लगता था। धनी–निर्धन का भेदभाव इनमें छू तक भी नहीं गया था। यही कारण है कि समय–समय पर अनेक नारी संस्थाओं की सभानेत्री के पद पर आसीन रहीं। संगीत पर भी इनका विशेष प्रेम था। तत्कालीन प्रमुख पत्र–पत्रिकाओं में इनकी रचनायें द्रष्टव्य होती हैं। अपने सम्पूर्ण जीवन को स्त्री समाज सुधार , साहित्य सेवा में अर्पित कर राजरानी देवी सम्वत् 1985 (सन् 1928) को अपना शरीर त्याग कर परमात्मा में विलीन हो गयीं।

**रचनाएँ –** इनके काव्य ग्रंथ 'प्रमदा–प्रमोद' व 'सती संयुक्ता' नाम से द्रष्टव्य होते हैं। कई पत्रिकाओं में इन्होंने 'वियोगिनी' उपनाम से भी कविताएँ प्रकाशित कराई हैं।

कवयित्री ने भारतेन्दु के समान ही स्त्री कवयित्रियों को कविता के प्रति नवीन दृष्टि, नवीन दिशा दी साथ ही नव जागरण प्रदान किया। इनकी कविता का भाव नूतन है व वेदना नई है।

**विषय–(1) राधा कृष्णप्रेम –** इनकी स्फुट रचना में कहीं–कहीं राधा कृष्णका वर्णन दिखायी देता है। राधा, कृष्ण के प्रेम जाल में आबद्ध हैं। कृष्ण उन्हें विस्मृत कर चुके हैं। विरहिणी राधा उन्मादिनी सी हो गयी है। वह सोचती है कि कृष्णने मुझे वियोग तो अवश्य दे डाला है किन्तु मेरी इस अवस्था में सांत्वना देने आयेंगे अथवा नहीं––

**विषम प्रभन्जन के प्रकोप से, बिखरेंगे जब केश कलाप।**
**ज्योत्सनानल के प्रखर ताप से , मन में होगा संताप।।**
**तब क्या बन माली आ कर दुख नद से मुझे उबारेंगे।**
**अपने कोमल हाथों से मष्दु , अलकावलि सुधारेंगे।**[1]

किन्तु राधा तो उन्मादिनी हो गयी हैं। उनकी स्थिति इतनी शोचनीय हो गयी है कि उन्हें अपने क्रिया–कलापों में भी भ्रम होने लगा है––

**भ्रम है मुझे, ललित लतिका को, समझ न जाऊँ मैं बन माल।**
**कृष्ण समझ कर बड़े प्रेम से, चूम न लूँ मैं कहीं तमाल।।**[2]

यद्यपि इनकी स्फुट रचनाओं में कहीं–कहीं प्रसंग मात्र राधा–कृष्ण का वर्णन अवश्य द्रष्टव्य है तथापि उनकी रचनाएँ वेदना, श्रृंगार व प्रेम से ही आपूरित नहीं है वरन् राष्ट्र व समाज प्रेम ही इनकी भक्ति वेदना है। **(2) स्त्री दुर्दशा–**कवयित्री स्त्री सुलभ कोमल हृदया हैं। इनका अन्तरमन समाज के पीड़ित, शोषित वर्ग को देखकर हाहाकार कर उठता है। कवयित्री समाज में नारी की दशा को देखकर बेचौन व्याकुल हो उठी हैं। अतः अन्य स्त्रियों को सम्बोधित करते हुई कहती हैं––

**देवियो! क्या पतन अपना देखकर, नेत्र से आंसू निकलते हैं नहीं?**
**भाग्यहीना क्या स्वयं को लेख कर, पाप से कलुषित हृदय जलते नहीं ?**
**क्या तुम्हारी बदन श्री सब खो गई, उच्चगौरव का नहीं कुछ ध्यान है।।**[3]

तत्कालीन समाज में स्त्रियों को हेय दृष्टि से देखा जाता था। ईश्वर तक भी उनकी सहायता करने में असमर्थ था। कोमल, सुकुमारियों पर भीषण अत्याचार हो रहे थे। कवयित्री उस स्थिति से परिचित कराती हुई कहती हैं।

**क्या तुम्हारी आज अवनति हो गयी ?**
**क्या सहायक भी नहीं भगवान हैं ?**
**हो रहे क्यों भीषण अत्याचार हैं,**
**इस तुम्हारे फूल से मृदु गात पर।।**[4]

कवयित्री की दृष्टि में इन समस्याओं के निवारण हेतु प्रत्येक नारी को क्रियाशील रहना चाहिये। यह समय सुकोमल, सुकुमारी बनने का नहीं वरन् महाचण्डी का रूप धारण कर नारी समाज को पतन के गर्त से निकालने काहै–

**सोच लो संसार के कान्तार में,**
**बद्ध होकर यदि जियें तो क्या जियें।**
**कर्म के स्वछन्द सुखमय क्षेत्र में**
**किंकणी के साथ भी तलवार हो**
**हार पहनो तो विजय का हार हो**
**मुक्त फणियों के सदृश कच जाल हों**
**कामियों को शीघ्र डसने लिये।।**[5]

**(3) राष्ट्र प्रेम का स्वर**–भारत के प्राचीन गौरव का स्मरण दिलाने के साथ–साथ भारत पर हुवे अनेक अत्याचारों का चित्र उपस्थित करने में कवयित्री सक्षम हैं

**भव्य भारत की स्वाधीनता,**
**जब यवन से पद दलित थी हो चुकी।**
**दीखती सर्वत्र थी अति दीनता,**
**फूट कर विश बेली भी थी बो चुकी।।**
**पूर्व यश की क्षीण स्मृति ही शेष थी**
**वीरता केवल कहानी ही रही।।**[6]

जब सर्वत्र क्रन्दन, हाहाकार, कलह हो रहे थे उसी समय पृथ्वीराज जैसे महान योद्धाओं ने जन्म लेकर इस देश की मर्यादा को जीवित रखा –

**इस तरह जब तेजहत थे नृप सभी,**
**तब बली थे एक दो नृपति कहीं।**
**एक श्री राठौर नृप जयचन्द थे,**
**राजधानी थी बनी कन्नौज में।।**
**दूसरे चौहान पृथ्वीराज थे,**
**वे समुद दिल्ली निवासी थे बने।।**[7]

भारत की दुर्दशा से क्षुब्ध हो उठी हैं अतः ईश्वर से बिनती करती हैं कि जैसा पतन इस देश का हुआ वैसा शत्रु देश का भी न हो–

**देव! भारत का पतन जैसे हुआ, पतित वैसे हो न अरि का देश भी।**
**भाग्य परिवर्तन महा ऐसा हुआ, नाम दिखता आज है विश्वाश भी।।**[8]

## (2) जुगल प्रिया

**जीवन वृत्त –** श्रीमती जुगलप्रिया का जन्म सम्वत् 1928 (सन् 1871 ई0) में हुआ था। इनका वास्तविक नाम 'कमलकुमारी' था। बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध ओरछा राज्य जिसको कि कालचक में फंसकर टीकमगढ़ में अपनी राजधानी स्थापित करनी पड़ी, उसी के महाराज प्रताप सिंह देव बहादुर इनके पिता श्री थे। उनकी माता का नाम रानी वृशभानु कुंवरि था जो कि भक्त हृदया थीं। अयोध्या का सुविख्यात कनक भवन इन्होंने ही भक्ति भावना के वशीभूत होकर बनवाया।

श्रीमती जुगलप्रिया अपनी माता–पिता की पहली सन्तान थीं। इसी के कारण दोनों का इन पर अगाध स्नेह था। इनके पिता इन्हें वात्सल्य एवं स्नेहासिक्त होकर नैय्या कह कर पुकारते थे। अपनी माता की वैश्णवभक्ति का इन पर भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा। इनकी माता नित्य राम नाम की पाँच मालाएं जप लेने के बाद ही इन्हें कलेवा देती थीं। जिसे देखकर इनके पिता व्यंग किया करते थे,

**''क्या बेटी को भी अपनी ही तरह वैरागिन बनाना चाहती हो?''**

इनका विवाह छतरपुर राज्य के नरेश श्रीमान विश्वनाथ सिंह के साथ हुआ। विवाहोपरान्त भी ईश्वर भक्ति की ओर इनका झुकाव कम नहीं हुआ। दिन प्रति दिन ईश्वर के प्रति आसक्ति बढ़ने लगी। पहले ये अयोध्या में श्री वैष्णव सम्प्रदाय में दीक्षित हूई थीं किन्तु बाद में वृन्दावन में श्रीकृष्णलीला की अनुगामिनी हो गयीं। शंकर सम्प्रदाय से भी इनकी पर्याप्त सहानुभूति थी। प्रत्येक सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का इन्होंने इतना सूक्ष्म अनुशीलन किया था कि बाद विवाद में अनेक विद्वतजनों को भी पराजित कर देती थीं। 'स्त्री कवि कौमुदी' में उनकी दिनचर्या के विषय में लिखा गया है ''नित्य प्रातः काल चार बजे मंगल मूर्ति जर्नादन का ध्यान करती हई आप उठा करती थीं। नित्य कर्म के बाद संध्या पूजा पर बैठ जाती थीं सात घंटे के लगभग भगवत् सेवा में संलग्न रहती थीं। भोजन बिल्कुल साधारण था। अन्तिम सात वर्षों में फलाहार करती थीं। भोजनान्तर धार्मिक पुस्तकों का अवलोकन अथवा किसी संत के साथ सत्संग होता था। संध्या से नौ–दस बजे तक फिर वहीं भगवत् सेवा हरि कीर्तन या सत्संग हुआ करता था। निद्रा अधिक से अधिक चार घण्टे की थी। यही आपकी दिनचर्या थी।[9]

इन्होंने अपने जीवन के अधिकांश वर्ष तीर्थयात्रा में व्यतीत किये। कामद नाथ, गोर्वद्धन, बैंकटादि, ब्रह्मांचल आदि बीहड़ और घनघोर पर्वतों की पैदल यात्रा की। ये प्राकृतिक वातावरण में स्वयं को ढाल लेती थीं। अतः शीत, ग्रीष्म, वर्षा किसी का भी दुष्प्रभाव इन पर नहीं पड़ता था। आतिथ्य सेवा में ये तत्पर थीं स्वयं सादा भोजन करती थीं किन्तु अतिथि को नाना प्रकार के व्यंजनों से तृप्त कर देती थीं। इनका जीवन अधिकांशतः दुख की छाया में व्यतीत हुआ। धार्मिक उत्सवों को आनन्दपूर्वक मनाती थीं। सन्त महात्माओं की अमर वाणियों को एकत्रित कर कंठाग्र करने में इनकी रूचि थी। भावपूर्ण पदों के गायन के समय इनके नेत्र प्रेमाश्रु बहाने लगते थे। परोपकार में निमग्न रहना इनका मुख्य ध्येय था।

इस प्रकार सदैव परोपकार भगवान भक्ति में निमग्न रहने वाली कवयित्री अपने अक्षुण्ण साहित्य भण्डार को अर्पित कर सम्बत् 1978 (सन् 1921 ई०) को विक्रम की चैत्र शुक्ल सप्तमी की रात्रि में टीकमगढ़ में सदा के लिये सो गयीं।

**रचनायें –** हिंदी के सुविख्यात हस्ताक्षर श्रीयुत वियोगी हरि इनके अनन्य शिष्य थे। इनके द्वारा गाये गये पदों को श्री हरि जी ने संग्रहीत कर दिया था और 'जुगल प्रिया पदावली' नाम देकर इसे चिरकाल के लिये अमर कर दिया।

**विषय–(1) श्रीकृष्ण और राधा –** श्रीकृष्ण और राधा के चरणों को अपनी कविता का माध्यम बनाया है। यही नहीं वे ब्रज के पशु पक्षी , चेतन जड़, प्रकृति , यमुना , विपिन सभी में अपनी श्रद्धा व्यक्त करती हैं

**जयति रसकिनी राधिकाजयति रसिक नन्द–नन्द।**

**जयति चारू चन्द्रावलि जय वृन्दावन चन्द।।**

**जय बृज–रज जय यमुन–जल जय गिरिवर नन्द–ग्राम।**

**बरसानो वृन्दा विपिन नित्य केलि के धाम।।**[10]

कृष्ण और राधा को नायक–नायिका नहीं मानती वरन् कृष्ण की ईश्वर के रूप में प्रतिष्ठा करना उन्हें अधिक प्रिय था। इन्होंने कृष्णचरित्र का वर्णन भक्ति भाव से युक्त होकर किया है–

**नैन मोहन रूप छकेरी।**

**सेत श्याम रतनारे प्यारे, ललित सलोने रंग रगे री।**

**वा की चितवनी चंचल तारे, मानो कंज पे खेज अरे री।।**

**'जुगल प्रिया' जाके उर भाये अधिक बाँवले सोई भये री।।**[11]

कृष्ण और राधा की युगल जोड़ी को देखने की साध मन में लिये हुवे हैं। उसे कृष्ण के मोर मुकुट, माथे में लट, गले में गुंजों की माला, पीताम्बर वस्त्र आदि श्रृंगार व आभूषण से युक्त हो कर श्रीकृष्णको देखने की उत्कृट अभिलाषा है तभी तो वह कहती हैं–

**जुगल छवि कब नैनन में आवे।**

**मोर मुकुट की लटक चन्द्रिका, सरकारी लट भावे।**

**गर गुंजा गजरा फूलन के, फूल से बैन सुनावे।**

**नील दुकूल पीत पट भूषण, मनभावन दर्शावे।।**

**कटि किंकिन कंकन कर कमलनि कनित मधुर धुन छावै।**

**'जुगल प्रिया' पद पदुम परसि कै अनत नहीं सच पावै।।**[12]

**2. ईश भक्ति–**कवयित्री का मन ईश्वर के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं नहीं रमा। इनके काव्य की भावनाएं विशाल व उच्च हैं। संसार से विरक्त होकर भक्ति की दृढ़ता के साथ–साथ उच्च भावनाएं मानो स्वयं ही अभिव्यक्त हो गयी हैं। विषय के चित्रण के साथ व्यापक सिद्धान्त और आदर्श पाया जाता है। इसलिये कवयित्री सर्वत्र उच्च से उच्चतर होती जा रही हैं––

**यह तन एक दिन होय जुछारा।**

**नाम निशान न रहि है रंचक भूलि जायगो सब संसारा।**

**काल घटि पूरी जब ह्वै है लगे न छिन छाड़त भ्रम जारा।।**

**या माया नटिकी के बस में भूलि गयो सुख सिन्धु अपारा।।**[13]

कवयित्री की दृष्टि में सांसारिक सुख–वैभव सब तुच्छ हैं। इनका कथन है कि भक्ति रूपी धन ही सबसे श्रेष्ठ है। प्रत्येक व्यक्ति को इसी धन को अपनी निधि समझना चाहिये तभी सांसारिक मुक्ति संभव है ––

**माई मोकों जुगल नाम निधि भाई।**

**सुख सम्पदा जगत की झूठी आई संग न जाई।**

**लोभी को धन काम न आवै अन्त काल दुख दाई।।**

**जो जोरे धन अर्धम कर्म तैं सर्वस चलै न साई।**

**कुल को धरम कहा लै कीजै भक्ति न मन में आई।**

**'जुगल प्रिया' सब तजौ भजौ हरि चरन कमल मन लाई।।**[14]

**(3) चन्द्रकला बाई 'बूँदी'**

**जीवन वृत्त –** चन्द्रकला बाई का जन्म सम्वत् 1930 (सन् 1873) में बूंदी राज्य में हुआ था। पिता की मृत्यु के पश्चात् अपनी मां के साथ 'बूंदी नरेश' के राजकवि गुलाब सिंह जी के यहां दासी के रूप में रहीं। उन्होंने इन्हीं की छत्रछाया में रह कर काव्य प्रेरणा प्राप्त की। स्मरण शक्ति अत्यंत तीव्र होने के कारण इन्हें सैकड़ों कवित्त एवं सवैये कंठस्थ थे। 'काव्य सुधाधर, 'कवि और चित्रकार', 'रसिक मित्र', काशी कवि मण्डल' आदि पत्र–पत्रिकाओं में ये बहुत अच्छी समस्या पूर्ति करती थीं।

इनकी रचनाओं से प्रभावित होकर बिसवां ग्राम के कवि मण्डल को ओर से इन्हें 'वसुन्धरा रत्न' की उपाधि द्वारा विभूषित किया गया। ये असाधारण प्रतिभाशाली कवयित्री थीं। अनेक ग्रन्थों यथा 'महिला मृदुवाणी' 'राजस्थान का पिंगल साहित्य', 'स्त्री कवि कौमुदी' में इनका उल्लेख मिलता है। किन्तु इन सभी में इनकी जन्म तिथि के सम्बन्ध में पर्याप्त मतभेद दृष्टिगोचर होता है। श्री ज्योतिप्रसाद 'निर्मल' एवं डा0 मोती लाल मेनारिया ने इनका जन्म सम्वत् 1923 माना है। परन्तु कवयित्री ने 'राम चरित' नामक काव्य ग्रन्थ की रचना करते समय अपनी आयु चौदह–पन्द्रह वर्ष कही है। रामचरित की रचना सम्वत् 1945 में हुई है। अतः इस आधार पर 1945 में से 15 वर्ष कम कर देने पर इनका जन्म संवत् 1930 स्पष्ट होता है

**वर संवत् उनईस से पैंतालिस कुवॉर।**

**दशमी रवि मिंत पक्ष में भयो ग्रन्थ अवतार।।**

**हो गुलाब कवि की चेरी, वर्ष पंच दश भय वय मोरी।**[15]

विशेष पढ़ी लिखी न होने पर भी काव्य क्षेत्र में इनका ज्ञान अनुपमेय था। 'तुलसी रामायण', 'रामचन्द्रिका' आदि का सूक्ष्म अध्ययन करके एवं उससे प्रेरित होकर मात्र चौदह–पन्द्रह वर्ष की अवस्था में सात काण्डों में रामचरित को काव्यबद्ध कर देना ही उनकी काव्य कुशलता का प्रमाण है। उनकी योग्यता के सम्बन्ध में कविराय गुलाब सिंह जी की ये पंक्तियां द्रष्टव्य हैं।

**तुलसी केशव ग्रन्थ लखि, लेय सबन को सार।**

**चन्द्रकला ने प्रथम यह रच्यौ चरित हित कार।।**[16]

सहृदयता इनके चरित्र का प्रमुख गुण था। बिसवाँ के कवि मण्डल द्वारा इन्हें बहुत प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। प्रतापगढ़ के राजकवि पं0 बलदेव प्रसाद अवस्थी 'द्विज बलदेव' जी से इनका बहत अच्छा सम्बन्ध था। इनकी रचनाओं से भी ये प्रभावित हूई। चन्द्रकला ने स्वयं इनसे मिलने का अनुरोध किया था––

**दीन दयाल दया कै मिले दरसे बिनु बीतत है समय सोचत।**

**चन्द्रकला के बने बल देव जी बाबरे से महा लालची लोचन।।**[17]

यद्यपि इस अनुरोध को भी बलदेव जी ने टाल दिया वह उनके पास नहीं गये तथापि उन्होंने 'चन्द्रकला' नामक काव्य रच दिया। जिसमें की चन्द्रकला बाई के विषय में प्रसंशनीय छन्दों का प्रणयन हुआ है। यह 20 पृष्ठों की पुस्तक सम्वत् 1953 में लिखी गयी। इसके प्रत्येक छन्द में प्रायः चन्द्रकला शब्द का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। यथा–

**खुर्द्र घटै बढ़े राहु गसै बिरही हियरे घने धाम हाला है।**

**सौ तो कलंकित लयौ बिश वपु निसाचर बारिज वारि बला है।।**

**प्रेम समुद बढ़ै बलदेव के चित चकोर को चोप चला है।**

**काव्य सुधा बरसै निकंलक उदै जस सी तुही चन्द्रकला है।।**[18]

काव्य सुधाकर नामक पत्रिका में एक बार 'चन्द्रकला' नामक समस्या प्रकाशित हुई। फलस्वरूप सीतापुर के भैरव प्रसाद बाजपेयी 'विशाल कवि' ने इन्हीं चन्द्रकला को लक्ष्य करके सुन्दर पूर्ति लिख भेजी––

**एक बास करै नित शंभू के शीश में,**

**दूजी है अम्बर में विमला।**

**पुनि तीजी बघम्बर बूंदी के बीच है,**

**जो बल्देव जी की प्रेम पला।।**

**अब हाल विशाल कृपा करिके,**

**कवि दत्त जी मोको बताओ भला।**

**इसमें बिसवा रवि मण्डल में।।**

**यह कौन सी राजति चन्द्रकला।।**[19]

**रचनाएँ –** इन्होंने कई ग्रन्थों की रचना की जिनमें 'करूण शतक', 'राम–चरित्र', 'पदवी प्रकाश' और 'महोत्सव प्रकाश' प्रमुख हैं। रामचरित नामक काव्य ग्रंथ अलग–अलग सात खण्डों में सम्वत् 1950 में जगत प्रकाशन फतेहगढ़ से प्रकाशित हुआ।

इन्होंने रचना का प्रेरणा स्रोत 'रूखभीनी संमति' (गुरु गंग) को माना है साथ ही काव्य पर बाल्मीकि रामायण, अध्यात्म, अग्निवेश, पद्मपुराण, नृसिंह पुराण, अद्भुद तुलसी कृत राम चन्द्रिका आदि के प्रभाव को पूर्णतया स्वीकृत किया है। इस काव्य की रचना, दोहा, चौपाई, छप्पय आदि छन्दों में की गयी है। इसकी भाषा अवधी की प्रौढ़ रूप भाषा न होकर सामान्य बालचाल की भाषा है। कथा का निर्वाह एवं चरित्र चित्रण मानस से प्रभावित है।

**विषय : राधा और कृष्ण –** कवयित्री ने राधा–कृष्ण को नायक नायिका के रूप में मान कर उनके चरित्र को पाठकों के सम्मुख उपस्थित कर दिया है। इनके काव्य में श्रृंगार का पुट अधिक नहीं है। श्रीकृष्ण और राधा की लीलाओं का वर्णन अत्यंत सरलता से किया है–

**बैठे हैं गुपाल लाल प्यारी बर बालन में,**

**करत कलोल महा मोद मन भरिंगे,**

**ताहि समय आति राधिका को दूर ही तें देखि,**

**सौतिन के समल गुमान गुन जारिंगे**

**चन्द्रकला सारस से तिरछी चित्तौ निवारे,**

**नैन अनियारे नैकु पी की ओर ढरिगे।**

**नेह नहैं नायक के ऊपर तत्छन्न ही,**

**तीच्छन मनोभव के पाँचों बान झरिगे।**[20]

इनके श्रृंगार वर्णन में एक प्रकार का स्त्री सुलभ संकोच द्रष्टव्य होता है। कवीयत्री ने राधा–कृष्ण के श्रृंगार वर्णन में जिन उक्तियों व उपमाओं को अपनाया है उनमें एक नवीनता है –

**नैको एक वैश की न समता सुकेशीन है,**
**नैनन के आगे लाग कमल रूमालची**
**तिल सी तिलोत्तमा छू रति हू रत्ती सी लागे।।**
**सनमुख ठाढ़ रहे लाल हित लालची**
**वैभव के आगे लागे इन्द्र हू कुदालची**
**धन्य–धन्य राधे वृशभानु की दुलारी तोहि**
**जाके रूप आगे लगे चन्द्रमा मसालची।।**[21]

**राम और सीता –** कृष्ण और राधा के अतिरिक्त राम और सीता भी इनके काव्याधार हैं –

**सीतहिं तेहि महाधन देय कहौ हित राम रमेश हरी है।**
**जो नहि मानहगे मति मोर तु आपत्ति भाति अथाह भरी है।**
**चन्द्रकला तुमही न कहहु उनबालि महाबल मष्त्यु कटी है।**
**रावण नारि कहै पिय सौ सिय ह्वै विशबैलि प्रचंड परी हौ।।**[22]

इनके काव्य में प्रतिभा व चमत्कार के सर्वत्र दर्शन होते हैं। शब्द योजना सुगठित , सरल व माधुर्य से सर्वथा ओत–प्रोत है। इस प्रकार तत्कालीन कवि समाज में अपना उज्जवल प्रकाश विकीर्ण कर संवत् 1975 (सन् 1918) में असीम में विलीन हो गई।

**संदर्भ सूचीः**


1. देवी, राजरानी, स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–227
2. देवी राजरानी, स्त्री कवि कौमुदी, पृ–0227
3. वही, पृ0–227
4. वही, पृ0–228
5. देवी, राजरानी, स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–228–229
6. देवी राजरानी, स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–228–229
7. वहीं, पृ0–231–232
8. वही, पृ0–233
9. स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–180
10. प्रिया, जुगल, स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–189–90
11. वही, पृ0–187
12. प्रिया, जुगल, स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–187
13. प्रिया, जुगल, स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–190
14. प्रिया, जुगल, स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–188
15. बाई, चंद्रकला, रामचरित, पृ0–1–3
16. बाई, चंद्रकला, रामचरित, पृ0–1
17. मनोरमा फरवरी, 1926, पृ0–583–84–85
18. स्त्री कवि कौमुदी, पृ0–167–177
19. अवस्थी, बलदेव प्रसाद, चद्रकला
20. स्त्री कवि कौमुनी, पृ0–171
21. स्त्री कवि कौमुनी, पृ0–170–171
22. स्त्री कवि कौमुनी, पृ0–176–177

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः21-25

# हिन्दी पत्रकारिता

**–राज श्री भारद्वाज**
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
सत्यनारायण अग्रवाल शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय कोहका नेवरा रायपुर छत्तीसगढ

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

समाचार–पत्र सामयिक घटनाओं पर आधारित होते हैं। जिनका संबंध हमारे जीवन से प्रभावित होना चाहिए। साहित्यिक अभिरुचि इस बात पर निर्भर करती है कि लेखक सरल शब्दों में मानस अनुभूतियों को पाठक की संवेदनाओं को इस प्रकार अभिव्यक्त करे कि लेखक की अनुभूति और संवेदना पाठक की अनुभूति और संवेदना से एकमेव हो जाय। साथ ही वह प्रबुद्ध वर्ग के साथ सामान्य जन को भी प्रभावित करे। पत्र–पत्रिकाओं ने धर्म, नीति, दर्शन समाज, साहित्य, पर्व, त्योहार और मनोरंजन आदि विषयों द्वारा सांस्कृतिक अभिरुचियों को विकसित किया है। अलग–अलग व्यक्तियों की रुचियों से संबंधित जैसे खेल, स्वास्थ्य, मनोरंजन , संगीत, ज्ञान–विज्ञान या दैनिक क्रियाकलाप से संबंधित घटनाओं का वर्णन होता है। मौसम से संबंधित समाचार, विज्ञान समाचार,संसद समाचार, राष्ट्रीय –अंतर्राष्ट्रीय समाचार, उद्योग समाचार प्रकाशित होते हैं। हिन्दी पत्रकारिता की भाषा सरल,सहज, बोधगम्य और सामान्य जन की भाषा होती है। हिन्दी की व्याकरण शैलियों का प्रयोग किया। हिन्दी पत्रकारिता ने मानव मन को स्वाभिमान, आत्मरक्षा का भाव अस्तित्व के प्रति चिंता, बौद्धिक क्षमता की भावना को विकसित किया। उनमें समानता, भातृत्व, स्वतंत्रता के साथ मानवता की भावना को जागृत किया है। हिन्दी पत्रकारिता ने समाज में व्याप्त बुराइयों बाल–विवाह, दहेज–प्रथा, शिशु–हत्या, छुआछूत जैसी कुप्रथाओं को दूर करने में योगदान दिया है। अंधविश्वास कम हुए हैं। भारत में पुर्तगालियों द्वारा 1550 में धार्मिक पुस्तकें छापने के लिए प्रेस की स्थापना की गई थी। इसाई धर्म की पुस्तकें मलयालम भाषा में प्रकाशित हुई थी। 1780 में 'बंगाल गजट' पत्र जे.के. हिक्की के संपादन में प्रारंभ हुआ।

1816 में 'बंगाल गजट' गंगाधर भट्टाचार्य द्वारा प्रकाशित पहला किसी भारतीय द्वारा समाचार पत्र था। 'दिग्दर्शन' मार्शमेन ने बंगाली भाषा में प्रकाशित किया। भारत में पहला समाचार पत्र बंगाली भाषा और कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था। धीरे–धीरे इसका विस्तार भारत के सभी प्रांतों में हुआ। राजा राम मोहन राय ने 1822 में मिरात–उल–अखबार फारसी भाषा में प्रारंभ की। हिन्दी पत्रकारिता का प्रारंभ 1826 में युगल किशोर की उदत्त मार्तण्ड को माना जाता है। यह हिन्दी का प्रथम साप्ताहिक पत्र था। हिन्दी का दूसरा समाचार पत्र था 'बंगदूत' जिसके संपादक नीलरतन हालदार थे। पहला दैनिक हिन्दी समाचार पत्र' समाचार सुधावर्षण'1854 में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था जिसके संपादक श्यामसुंदर थे। 'संपूर्ण हिन्दी पत्रकारिता को पॉच युगों में विभाजित किया गया है। सन् 1826–1867 तक का समय प्रारंभिक युग, सन् 1867 से 1900 तक भारतेन्दु युग, सन् 1900 से 1920 तक द्विवेदी युग,सन् 1920 से 1947 तक गांधी युग तथा 1974 से आगे स्वातंत्र्योत्तर युग के नाम से जाना जाता

है।'' (1) प्रारंभिक काल की हिन्दी पत्रकारिता संघर्षपूर्ण स्थितियों का सामना करती हुई आगे बढ़ रही थी। भारतेंदु कालीन पत्रकारिता नवजागरण का युग था। परंतु सरकार का सहयोग प्राप्त न होने, प्रचार–प्रसार के पर्याप्त साधनों का अभाव तथा बुद्धिजीवी वर्ग हिन्दी समाचार पत्रों की अपेक्षा अंग्रेजी पत्रों को अधिक महत्व देते थे। सीमित साधनों के होते हुए भी हिन्दी पत्र संपादकों में दृढ़ संकल्प और उच्च आदर्श थे जिसके कारण इतनी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी पत्र प्रकाशित होते रहे। भारतेन्दु कालीन पत्रों में लेख मूल्य, नियमादि छपते थे। लेखों के शीर्ष आकर्षक होते थे जिनका उद्देश्य पाठकों को आकृष्ट करना, विज्ञापन प्रारंभिक काल में कम बाद में पत्रों में विज्ञापन की वृद्धि होने लगी। प्रश्नोत्तर भारतेन्दु काल की पत्रों की प्रमुख विशेषता थी। ''उपर्युक्त लेखों के अतिरिक्त तत्कालीन हिन्दी पत्रकारिता में यत्र–तत्र मनोरंजक प्रश्नोत्तर भी प्रकाशित होते थे। लेखक का उद्देश्य बड़े ही सीधे ढंग से अपनी बात जनता तक पहुंचाना होता था। अतः प्रश्नोत्तरों में हास्य और व्यंग्य की छटा दर्शनीय है।

भारतेन्दु की मुकरियॉ प्रश्नोत्तर के रूप में उस समय बड़ी लोकप्रिय थीं। प्रश्नोत्तर के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं – स्वर्ग क्या है ? विलायत। महापाप का फल क्या ? हिन्दुस्तान में जन्म लेना। महापापी कौन ? देश भाषा के अखबारों का एडिटर। धर्म क्या ? चौका लगाकर खाना, स्वार्थ साधन में न चूकना। करम का फुटहा कौन ? हिन्दी। ''(2) राष्ट्रीय चेतना, एकनिष्ठ संकल्प, आदर्शवादिता और अलंकृत भाषा आदि भारतेन्दु कालीन पत्रकारिता की विशेषता है। भारतेन्दु काल में हिन्दी पत्रकारिता के विविध रूप विकसित हुए साहित्य की विधाओं का जन्म हुआ। ईसाइयों ने अपनी प्रचार कार्य के लिए देशी भाषा को अपनाया। ''ईसाइयों के प्रचारकार्य का प्रभाव हिन्दुओं की जनसंख्या पर ही पड़ रहा था। अतः हिन्दुओं के शिक्षित वर्ग के बीच स्वधर्म रक्षा की आकुलता दिखाई पड़ने लगी। ईसाई उपदेशक हिन्दू धर्म की स्थूल और बाहरी बातों को लेकर ही अपना खंडन–मंडन चलाते आ रहे थे। अतः राममोहन राय ने इन पातों को अलग करके शुद्ध ब्रह्मोपासना का प्रवर्तन करने के लिए 'ब्रह्मसमाज' की नींव डाली। संवत् 1872 में उन्होंने वेदांत सुत्रों के भाषा का हिन्दी अनुवाद करके प्रकाशित कराया था। संवत् 1886 में उन्होंने 'बंगदूत' नाम का एक संवादपत्र भी हिन्दी में निकाला।''(3) संवाददाता लोक संपर्क से समाचार एकत्रित करते समय स्वतंत्रता, निष्पक्षता और निरपेक्षता का सफलतापूर्वक निर्वाह करने पर आधारित होता है। हिन्दी पत्रकारिता का प्रारंभ बंगाल में हुआ उदंत्त मार्तण्ड से 4 दिसंबर 1827 में बंद हो गया क्योंकि बंगाल में हिन्दी पत्रकारिता का विकास नहीं हो सका। उत्तरप्रदेश के हिन्दी प्रांत में कुछ समय बाद प्रारंभ हुआ। उत्तरप्रदेश में राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद ने बनारस अखबार निकाला यह साप्ताहिक हिन्दी पत्रिका थी। जिसमें हिन्दी लिपि और उर्दू भाषा, अरबी–फारसी शब्द अधिकता से प्रयोग होते थे। राजा लक्ष्मण सिंह ने प्रजा हितैषी पत्रिका में शकुन्तला एवं मेघदूत आदि नाटकों का हिन्दी में अनुवाद किया। 'लोकमत' पत्र में बाइबिल का हिन्दी में अनुवाद किया जाता था।

पत्रकारिता के क्षेत्र में ईसाई धर्म प्रचारकों ने हिन्दी भाषा में बाइबिल का अनुवाद हिन्दी में किया जिससे हिन्दी पत्रकारिता का विकास हुआ। भारत में विदेशी विचार पद्धति और शिक्षा उत्कर्ष पर थी ऐसे में परंपरावादी शिक्षा लुप्त हो रही थी। जिसके लिए ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोशोफिकल सोसायटी आदि सुधारवादी संपादन कार्य कर रही थी।'' भारतेन्दु हरिश्चन्द्र वर्तमान हिन्दी के जनक कहे जाते हैं। उन्होंने उस समय भाषा का जो स्वरूप निर्धारित किया था, वही स्वरूप लगभग 75 वर्ष तक चलता रहा। आज भी हम उसी भाषा को मूल आधार मानते हैं, जिन दिनों के बाद सुधा का प्रकाशन हुआ इसके बहुत बाद पत्र निकलने शुरू हुए थे। भारतेन्दु जी का नाम पत्रकारिता के क्षेत्र में अविस्मरणीय पत्रकारिता तथा संपादन के लिए सदैव याद

रखा जाएगा। भारतेन्दु जी से प्रभारित होकर कई पत्र पत्रिकाएं निकलने लगी थीं। ''(4) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पत्रकारिता को एक नई दिशा दी।' कवि वचन सुधा' मासिक पत्रिका आरंभ किया और पत्रकारिता को विकसित करने में सराहनीय कार्य किया। 1871 के बाद हिन्दी समाचार पत्रों में वृद्धि हुई अनेक पत्र प्रकाशित होने लगे। भारतेन्दु ने हरिश्चन्द्र मैगजीन मासिक पत्रिका प्रारंभ की जिसमें पुरातत्व, उपन्यास, कविता, आलोचना, ऐतिहासिक, राजनीतिक, साहित्यिक, दार्शनिक लेख कहानियां एवं व्यंग्य आदि प्रकाशित की जाती थी। भारतेन्दु ने स्त्री शिक्षा पर आधारित बाल–बोधनी नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित की। बाल कृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी–प्रदीप' मासिक पत्रिका प्रकाशित की जिसमें विनोद व्यंग्यात्मक शैली, सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक विषयों को लेकर लेख प्रकाशित होती थी। 1900 में हिन्दी की पहली मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जिसकी छपाई, सफाई, कागज और चित्र की वजह से लोकप्रिय हो गयी। चिंतामणी घोष ने प्रकाशित किया था काशी नागरी प्रचारिणी सभा का अनुमोदन प्राप्त था। इसे बाबू राधा कृष्णदास, जगन्नाथ दास रत्नाकर, श्याम सुंदर दास, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि ने संपादित करने का कार्य किया। ''अतः यह कहा जा सकता है कि 19 वीं शताब्दी की हिन्दी पत्रकारिता का उद्‌भव एवं विकास बड़ी विषम परिस्थितियों में हुआ। समय–समय पर पत्र–पत्रिकाएं जन्म लेतीं परंतु परिस्थिति उसके रास्ते में दीवार की तरह बाधा बनकर खड़ी हो जाती। इसके बढ़ते चरणों में उर्दू व अंग्रेजी आदि भाषाएँ तथा सरकारी मशीनरी मुख्यतया रुकावटें पैदा कर रही थीं।

ब्रिटिश सरकार आये दिन नये–नये प्रशासनिक तथा वैधानिक कानून बनाकर इसे पंगु बना रही थी, परंतु हिन्दी–प्रेमी, साहित्यकार एवं देश भक्त, संस्थाओं के माध्यम से शनैः शनैः इसे प्रगति प्रदान कर रहे थे।''(5) सन् 1913 में स्त्रीयोपयोगी, चिकित्सा एवं साहित्यिक विषयों से संबंधित पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। स्त्री शिक्षा पर आधारित महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में एवं कन्या मनोरंजन, कन्या सर्वस्व, आरोग्य सिंधु राधा वल्लभ वैद्यराज के संपादन में साथ ही सम्मेलन पत्रिका, नवनीत, प्रथा, काव्य पताका और हिन्दी साहित्य नाम से पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ।'' सन् 1932 में 'जागरण' नामक पाक्षिक पत्र का प्रकाशन हुआ। इसके संपादक शिव पूजन सहाय और प्रेमचंद जी थे। इसी वर्ष' रंगीला' नामक साहित्यिक पत्र का उद्‌भव हुआ। जिसके संपादक–पं. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' थे। सन् 1936 में प्रसिद्ध 'विश्व भारती पत्रिका' का प्रकाशन शांतिनिकेतन से हुआ।जो एक शोधपरक साहित्यिक पत्रिका है। सन् 1938 में 'रुपाभ' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। संपादक थे सुमित्रानंदन पंत। 40 के दशक में 'अज्ञेय' द्वारा संपादित 'प्रतीक' विख्यात है। 47 के बाद प्रकाश में आने वाली पत्रिकाओं की संख्या में काफी वृद्धि हुई जिनमें कतिपय प्रमुख पत्रिकाओं के नाम है –'धर्मयुग', 'सप्ताहिक हिन्दुस्तान','आजकल','नयी कविता','आलोचना', 'निष्कृष','नयी धारा', 'कल्पना','ज्ञानोदय','माध्यम', 'सारिका', 'कहानी','नयी कहानियॉ','नवनीत', 'कादंबिनी', 'लहर', 'पूर्वग्रह', 'दस्तावेज' आदि। इनमें कई बंद हो गयीं। दो राजनीतिक साहित्यिक साप्ताहिकों के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं–दिनमान और रविवार।'' (6) 20 वीं शताब्दी में अनेक देशी–विदेशी घटनाओं ने पत्रकारिता को प्रभावित किया। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, स्वदेशी आंदोलन, लार्ड कर्जन की त्रुटिपूर्ण नीतियां, जापान द्वारा रुसियों की पराजय आदि ने बौद्धिक वर्ग को प्रभावित किया। स्वतंत्रता प्राप्ति और समाज सुधार के लिए पत्रकारिता का आश्रय लिया।

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 1900 में सरस्वती पत्रिका का प्रकाशन कर हिन्दी पत्रकारिता के प्रति अभूतपूर्व कार्य किया। जिसमें नागरी प्रचारिणी सभा के संचालकों का विशिष्ट योगदान था। छपाई, सफाई, कागज और चित्रों के कारण पाठक वर्ग के बीच शीघ्र लोकप्रिय हो गयी। चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने समालोचक पत्र को संपादित

किया और आलोचनात्मक दृष्टि से विशेष लोकप्रिय हुए। बीसवीं सदी की पत्रकारिता में साहित्य की अनेक विधाओं का जन्म हुआ। जिससे साहित्य संपन्न और समृद्ध हुआ। द्विवेदी युग में आलोचना की शैली का प्रादुर्भाव हुआ। प्रत्येक युग का साहित्य अपने युग का प्रतिनिधित्व करता है जिसकी अभिव्यक्ति में पत्रकारिता श्रेष्ठ माध्यम है। पत्रकारिता में मनुष्य से संबंधित सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक राजनीतिक आदि अभिरुचियों को ध्यान में रखी जाती है।'' प्रत्येक युग की पत्रिका समकालीन प्रतिभाओं का पोषण करती है। यही पत्रकारिता साहित्य की परम उपलब्धि है। उस युग का पत्रकार अपना सर्वस्व न्यौछावर कर पत्रिका का संचालन–संपादन करना चाहता था। अभी भी तत्कालीन साहित्य पत्र–पत्रिकाओं में बिखरा पड़ा है। अगर उन प्रकाशित लेखों, कविताओं, कहानियों और काव्यों का संयोजन किया जाय, तो साहित्य–संसार को एक अमूल्य निधि प्राप्त हो सकती है।इन पत्रिकाओं में प्रकाशित समकालीन साहित्य में जितनी ऊर्जा और संवेदना है, उतनी उस समय की प्रकाशित पुस्तकों में नहीं। हिन्दी पत्रकारिता इस दृष्टि से परम सौभाग्यशाली है कि उसके द्वारा लेखकों को पोषण एवं प्रोत्साहन मिलता रहा। लेकिन जब प्रमुख–पत्रिकाओं में कुछ लेखकों को स्थान नहीं मिला, तब वे लेखक अपनी अभिव्यक्ति हेतु छोटी–छोटी पत्रिकाओं का आलंबन लेने लगे। ये लघु पत्रिकायें हर छोटे–बड़े शहरों और कस्बों से प्रकाशित होने लगीं जिनमें प्रकाशित कवि और रचनाकार प्रतिष्ठित हुए। परंतु इन लघु पत्रिकाओं ने हिन्दी–पत्रकारिता के महत्व को काफी हानि पहुंचायी। ''(7)

छायावादी काल की प्रमुख पत्रिकाएं सरस्वती, इंदु, प्रभा, चांद, माधुरी, समन्वय, सुधा, विशाल भारत, वीणा, हंस, जागरण और रुपाभ आदि हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल में रेखाचित्र, संस्मरण, रिपोर्ताज, फीचर, यात्रावृत्त, आत्मकथा, डायरी लेखन शैलियों का विकास हुआ। पत्र–पत्रिकाओं ने साहित्य की सभी विधाओं को समृद्ध और विकसित किया। मनोरंजन के विषयों पर हास–परिहास, व्यंग्य –विनोद, प्रश्नोत्तर, फुलझड़ी, चुटकुले, सिनेमा, खेलकूद आदि पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित किए जाते हैं। हिन्दी पत्रकारिता ने सांस्कृतिक अभिरुचियों के साथ साहित्यिक अभिरुचियों को विस्तृत किया है। हिन्दी पत्रकारिता ने वैज्ञानिक अनुसंधान ज्ञान–विज्ञान विषयों को आविष्कृत किया। व्यवसायिक, बैंकिंग, कृषि, मौसम आदि विषयों पर आधारित सामान्य जन की अभिरुचियों पर आधारित हिन्दी पत्रकारिता राष्ट्रीय –अंतर्राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, शिक्षा विषयों पर प्रकाशित होती है। ज्ञान–विज्ञान और मनोरंजन का ऐसा कोई विषय नहीं है जो हिन्दी पत्रकारिता के माध्यम से अभिव्यक्त नहीं होती है।

''हंस के संपादक और प्रकाशक हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार मुंशी प्रेमचंद थे। इसका प्रकाशन 1930 से हुआ और यह गांधी जी के विचारों से प्रभावित थी। हिन्दी के क्षेत्रीय पत्रों में 'नई दुनिया' जिसके संपादक राजेन्द्र माथुर बहुत दिनों तक रहे और उनके काल में नई दुनिया अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गया। राष्ट्रीय पत्रकारिता के क्षेत्र में 'जनसत्ता' का प्रकाशन प्रभाश जोशी के संपादन में प्रारंभ हुआ। जनसत्ता ने हिन्दी पत्रकारिता को नए आयाम प्रदान किए। अंग्रेजी पत्रकारिता की पूँछ को छोड़कर अपने प्रतिमान और पत्रकार बनाए। ''(8) पत्रकारिता आज के शिक्षित वर्ग के लिए अभिन्न अंग हो गया है। समाचार पत्र आते ही राजनीतिक, नौकरी, सिनेमा, खेलकूद, खाद्य वस्तुओं के भाव, सनातन धर्म चर्चा, पुस्तक समालोचना और नये फैशन आदि पर अपनी रुचि अनुसार दृष्टि रखते हैं। माखनलाल चतुर्वेदी कर्मवीर के संपादक थे। विप्लव यशपाल ने निकाला था। हिन्दी पत्रकारिता को विकसित और समृद्ध करने में युगल किशोर, दुर्गा प्रसाद मिश्र, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालमुकुंद गुप्त, बालकृष्ण भट्ट,

प्रतापनारायण मिश्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचंद,रामवृक्ष बेनीपुरी, माखनलाल चतुर्वेदी, अज्ञेय, धर्मवीर भारती, रघुवीर सहाय और राजेंद्र यादव आदि का उल्लेखनीय योगदान है।

समाचार पत्र दैनिक जीवन का अनिवार्य अंग बन गया है। दैनिक जीवन की घटनाओं, समाज और परिस्थितियों में बदलाव, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में होने वाले परिवर्तन समाज के सभी वर्गों को प्रभावित करती है हिन्दी पत्रकारिता सभी धर्म और संस्कृतियों को जोड़ती है विभिन्न विषयों में होने वाले परिवर्तन में अपनी भूमिका निभाती है जन सामान्य से संबंधित विषयों पर विचार–विमर्श हेतु विस्तृत धरातल और सहमति प्रदान करती है।'' पत्रकारिता को साहित्यकार की पहली सीढ़ी कहा गया है। श्री हेरब मिश्र के अनुसार– 'सर्वोत्तम पत्रकारिता साहित्य है और सर्वोत्तम साहित्य पत्रकारिता है।' बर्नार्ड शॉ ने कहा था कि ' कुशल पत्रकार साहित्यकार से भिन्न नहीं है। अगर साहित्य का काम सरकार को ठीक–ठीक देखना व परखना है तो पत्रकार का काम वही है। ''(9) आज हिन्दी में अनेक दैनिक, पाक्षिक, मासिक, वार्षिक,पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित होने लगी है। जिनका रुप और कलेवर नया है और नित–नूतन प्रयोग हो रहे हैं। जिनमें शब्दों का चयन, वाक्य–गठन ,सादृश्य–विधान, विचलन, समान्तरता आदि गुण देखे जा सकते हैं। जिसकी भाषा स्वच्छ, मनोहर, आकर्षक, सरस, सुंदर, लुभावनी और लच्छेदार प्रयुक्त होती है। अलंकारों का प्रयोग, सरल, मिश्र, संयुक्त वाक्यों का प्रयोग होता है जिसे अभिव्यक्त करने में हिन्दी सफल और समर्थ हुई है। पत्र–पत्रिकाओं में नेट के माध्यम ने हिन्दी की उपयोगिता को और विकसित किया है। मीडिया ने हिन्दी को विस्तृत रूप प्रदान किया और पत्र–पत्रिकाओं, संचार माध्यमों में हिन्दी की उपयोगिता में योग दिया है। वैज्ञानिक आधार पर हिन्दी कम्प्यूटर की भाषा है। वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, उपभोक्ता प्रधान बाजार व्यवस्था, वैश्वीकरण युग में सभी विषयों को चित्रित करते हुए वर्तमान हिन्दी ने देवनागरी लिपि के रूप में मीडिया की भाषा से जुड़कर उल्लेखनीय योगदान दिया है और दे रही है। निरंतर बदलती हुई परिस्थितियों और संभावनाओं से हिन्दी पत्रकारिता के प्रति अपेक्षाएं भी बढ़ गयी है।

**संदर्भ ग्रंथ–**


1 पत्रकारिता सिद्धांत एवं स्वरूप – डॉ. रमेशचंद्र त्रिपाठी, पृष्ठ –अप

2 वही, पृष्ठ–71

3. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ–254

4. प्रयोजनमूलक कामकाजी हिन्दी एवं कम्प्यूटिंग – डॉ. संजीव कुमार जैन, पृष्ठ–32

5. पत्रकारिता सिद्धांत एवं स्वरूप – डॉ. रमेशचंद्र त्रिपाठी, पृष्ठ–58

6. वही, पृष्ठ–65

7. वही, पृष्ठ–128

8. मीडिया लेखन एवं जनसंचार – डॉ. संजीव कुमार जैन, पृष्ठ–64–65

9. व्यावहारिक एवं कार्यालयीन हिन्दी – डॉ. संजीव कुमार जैन, पृष्ठ–145

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः26-30

# हिन्दी पत्रकारिता

–नरेन्द्र कुमार सलूजा
सहायक प्राध्यापक हिन्दी राजीव गांधी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय लोरमी, मुंगेली, छत्तीसगढ़,

♦♦♦

वाचस्पति पत्रकारिता को पंचम वेद मानते हैं । उनका कहना है– पत्रकारिता पांचवा वेद है जिसके द्वारा हम ज्ञान –विज्ञान संबंधी बातों को जानकर अपना बंद मस्तिष्क खोलते हैं।'' अकबर इलाहाबादी ने यहां तक कह दिया कि–

''खींचो ना कमानो को ,ना तलवार निकालो ।

जब तोप मुकाबिल हो तो, अखबार निकालो।।''

जिस प्रकार साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है उसी प्रकार पत्रकारिता भी समाज की गतिविधियों ,रुचियों, हलचलो, घटनाक्रमों को दर्पण की भांति हमारे सम्मुख प्रस्तुत करती है। आज की पत्रकारिता सूचनाओं और समाचारों का संकलन मात्र न होकर मनुष्य के व्यापक परिदृश्य को अपने में समाहित किए हुए हैं। यह शाश्वत ,नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को समसामयिक घटनाचक्र की कसौटी पर कसने का साधन बनकर जनभावना की अभिव्यक्ति और नैतिकता की पीठिका है। संस्कृति, सभ्यता और स्वतंत्रता की वाणी बनकर ज्ञान–विज्ञान , साहित्य–संस्कृति, संघर्ष–क्रांति, उत्थान–पतन ,आशा–निराशा की दर्पण हैं। पत्रकारिता मनुष्य को दूरदृष्टि प्रदान कर परिवर्तनशील जगत का दर्शन कराती है।

विश्व में पत्रकारिता का आरंभ 131 ईस्वी पूर्व रोम में हुआ था । इस काल में पहला दैनिक समाचार पत्र acta Diunia ( दिन की घटनाएं ) निकलने लगा था। दरअसल उस समय पत्थर या धातु की पट्टी में समाचार अंकित कर रोम के प्रमुख स्थानों पर रखकर इनमें वरिष्ठ अधिकारियों की नियुक्ति, नागरिकों की सभाओं तथा सभा में लिए गए निर्णय एवं ग्लेडिएटरो की लड़ाईयों के परिणाम की सूचनाएं दी जाती थी । आधुनिक पत्रकारिता यूरोपीय पत्रकारिता का विकसित रूप हैं। 1450 ईस्वी में जोहान गुटेनबर्ग द्वारा मुद्रण में चलनसील टाइप की खोज में आधुनिक पत्रकारिता की अवधारणा को आधार प्रदान किया। गुटेनबर्ग ने अपनी पहली मुद्रित कृति गुटेनबर्ग बाइबल को मुद्रित करते हुए लिखा था–अब हम घर– घर पहुंच सकते हैं। यह जो घर – घर पहुंचने की उन्होंने बात कही ,उसने हीं समाचार पत्र की आधारशिला रखी । इसके पूर्व मध्यकाल में यूरोप के व्यापारिक केंद्रों से सूचना पत्र निकलने लगे इनमें व्यवसाय, क्रय विक्रय, मुद्रा के मूल्य में उतार–चढ़ाव के समाचार लिखे जाते थे जिसकी विषेशता यह थी कि यह सभी हस्तलिखित होते थे। गुटेनबर्ग के द्वारा मुद्रण यंत्र के आविष्कार ने पुस्तकों के साथ ही अखबारों के प्रकाशन को भी नवीन दिशा प्रदान की। सर्वप्रथम समाचार पत्र यूरोप में निकला। सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी में हालैंड, जर्मनी, इंग्लैंड ,अमेरिका , रूस , फ्रांस में पत्र –पत्रिकाओं का प्रकाशन आरम्भ हुआ। 1605 में प्रकाशित रिलेशन नामक समाचार पत्र प्रथम मुद्रित समाचार पत्र था। ब्रिटेन में पोस्टमैन नाम से प्रथम साप्ताहिक समाचार पत्र निकला, तदुपरांत 11 मार्च 1702 को प्रथम दैनिक समाचार पत्र डेली करेंट प्रकाशित हुआ।

भारत में समाचार पत्रों का इतिहास यूरोपीय लोगों के भारत आगमन से आरंभ होता है। सर्वप्रथम भारत में प्रिंटिंग प्रेस लाने का श्रेय पुर्तगालियों को है। 1557 में गोवा के कुछ पादरियों ने भारत में पहली पुस्तक प्रकाशित की थी। सन 1684 में कंपनी ने भारत में प्रथम मुद्रणालय की स्थापना थी। भारत में प्रथम समाचार पत्र प्रकाशन का श्रेय जेम्स आगस्टस हिक्की को प्राप्त है ,उन्होंने सन 1780 में इसका प्रकाशन कोलकाता से आरंभ किया। यह अंग्रेजी भाषा का समाचार पत्र था। इस समाचार पत्र में कंपनी सरकार की आलोचना करने के कारण उनका प्रेस जप्त कर लिया गया। बंगाल गजट के बाद 1780 ईसवी में इंडिया गजट का प्रकाशन आरंभ हुआ। इंडिया गजट के प्रकाशन के साथ ही भारतीय प्रेस के क्षेत्र में तीव्रता आई। इसी दरमियान कुछ अन्य अंग्रेजी समाचार

पत्रों का जैसे –बंगाल में कोलकाता कैरियर, एशियाटिक मिरर, ओरिएंटल स्टार,मद्रास में मद्रास कैरियर ,मद्रास गजट, मुंबई में हेराल्ड, बॉम्बे गजट आदि का प्रकाशन भी हुआ। 18वीं सदी में प्रकाशित समाचार पत्रों में भारतीयों के जीवन या हितों का ध्यान नहीं रखा गया अर्थात वे तटस्थ रहते थे तथा अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित होने के कारण अंग्रेजों तक ही सीमित थे। उस समय के समाचार पत्र सप्ताहिक थे तथा उनमें परस्पर प्रतिस्पर्धा का भी अभाव था। सन 1818 में ब्रिटिश व्यापारी जेम्स सिल्क बर्किघम ने कोलकाता जनरल का संपादन किया। इस समाचार पत्र की यह विशेषता थी कि इसमें जन भावनाओं को स्थान मिलना आरंभ हुआ अर्थात बर्किंघम ने प्रेस को जनता के प्रतिबिम्ब के स्वरूप में प्रस्तुत किया। हिक्की एवं बर्किघम ने ही प्रेस को आधुनिक स्वरूप प्रदान कर सशस्त्र पत्रकारिता एवं स्वतंत्र लेखन का उदाहरण प्रस्तुत कर पत्रकारों को पत्रकारिता की ओर आकर्षित किया। प्रथम भारतीय अंग्रेजी समाचार पत्र गंगाधर भट्टाचार्य द्वारा सन 1816 में प्रकाशित बंगाल गजट है।

इस सप्ताहिक समाचार पत्र का प्रकाशन कोलकाता से होता था। इसी दौरान सन 1818 में एक बंगाली मासिक पत्र दिग्दर्शन का प्रकाशन मार्शमैन के द्वारा किया गया किंतु कुछ समय उपरांत इसका प्रकाशन बंद हो गया। इसी समय मार्शमैन ने एक अन्य साप्ताहिक समाचार पत्र–समाचार दर्पण का भी प्रकाशन कार्य आरंभ किया। दिग्दर्शन तथा समाचार दर्पण का प्रकाशन स्थल श्रीरामपुर था। सन 1821 में राजा राममोहन राय ने बंगाली भाषा में संवाद कौमुदी समाचार पत्र निकाला। सन 1822 में राजा राममोहन राय ने ही सामाजिक एवं ध ार्मिक विचारों को ध्यान में रखते हुए समाचार चंद्रिका का प्रकाशन किया, इसके अलावा उन्होंने मिरातुल अखबार (फारसी भाषा) तथा ब्रम्होनिकल मैगजीन (अंग्रेजी भाषा) का प्रकाशन किया। इस तरह 19वीं सदी में अन्य भारतीय एवं उर्दू अंग्रेजी भाषा में दैनिक मुंबई, जागो जमशेद, अखबार सौदागर, टाइम्स आफ इंडिया, स्टेट्समैन, फ्रेंड्स आफ इंडिया ,इंग्लिशमैन, मद्रास मेल, पायोनियर, शोध प्रकाश, अमृत बाजार पत्रिका, हिंदू ,बंगवासी, संजीवनी, इंडियन मिरर, सुलभ समाचार ,आज, हिंदुस्तान ,वंदेमातरम, युगांतर, स्वदेश सेवक आदि समाचार पत्रों का प्रकाशन हुआ।

हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में सर्वप्रथम प्रकाशित हिंदी समाचार पत्र के रूप में उदंत मार्तंड का नाम आता है। इसके संपादक थे–पंडित जुगल किशोर शुक्ल। इस समाचार पत्र का प्रकाशन 30 मई सन 1826 को कोलकाता से हुआ। यह एक साप्ताहिक समाचार पत्र था। उदंत मार्तंड को प्रथम हिंदी समाचार पत्र घोषित करने का श्रेय बजेंद्र मोहन बंदोपाध्याय को जाता है। सन 1931 से पूर्व बनारस अखबार को प्रथम हिन्दी अखबार माना जाता था। प्रति मंगलवार को प्रकाशित होने वाला उदंत मार्तंड आर्थिक अभाव के कारण एक वर्ष सात माह अर्थात दिसंबर 1827 हमेशा के लिए बंद हो गया। हिंदी भाषा के द्वितीय समाचार पत्र के रूप में प्रति रविवार को नीलरतन हलदार के संपादन में प्रकाशित बंगदूत नामक समाचार पत्र का नाम आता है । यह समाचार पत्र हिंदी के अलावा अंग्रेजी, बांग्ला तथा फारसी में भी प्रकाशित होता था। भारतेंदु युग से पूर्व हिंदी समाचार पत्रों का उदय हो चुका था किंतु विपरीत परिस्थितियों, साधनों एवं अपेक्षित संख्या में पाठकों की अनुपलब्धता के कारण इनमें से अधिकांश समाचार पत्रों का प्रकाशन बंद हो गया। भारतेंदु पूर्व समाचार पत्रों में प्रजामित्र, बनारस अखबार, मार्तंड, सुधाकर, बुद्धि प्रकाश ,प्रजा हितैशी, भारत मित्र, हिंदुस्तान, समाचार सुधावर्षण आदि का नाम उल्लेखनीय है। इनमें से समाचार सुधावर्षण हिंदी का प्रथम दैनिक समाचार पत्र था, यह समाचार पत्र हिंदी तथा बांग्ला भाषा में प्रकाशित होता था , इसके संपादक श्री श्यामसुंदर थे। यह समाचार पत्र लगभग 14 वर्षों तक नियमित रूप से प्रकाशित

के संपादन में प्रकाशित तत्वबोधिनी का आता है। इस युग में अंग्रेजी शासकों की हिंदी विरोधी नीतियों के कारण हिंदी के समाचार पत्रों को अर्थाभाव का सामना करना पड़ता था।

भारतेंदु हरिश्चंद्र हिंदी पत्रकारिता के जनक कहे जाते हैं। उन्होंने हिंदी की कमियों को दूर करने का अथक प्रयास किया। हिंदी के गद्य विधाओं की तरह भारतेंदु का हिंदी पत्रकारिता में भी उच्चतम स्थान है। भारतेंदुयुगीन पत्रकारिता के केंद्र बिंदु स्वयं भारतेंदु ही थे। भारतेंदुजी का पत्रकारिता के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के कारण ही इस युग को भारतेंदुयुगीन पत्रकारिता नाम दिया गया। हिंदी की अनेक पत्र–पत्रिकाओं में सामाजिक ,राजनीतिक, साहित्यिक, प्रहसन, व्यंग्य, ललित निबंध आदि से संबंधित लेख होते थे। इस काल में भारतेंदु ने बनारस से कविवचन सुधा नामक पत्रिका का प्रकाशन किया। इस पत्र की लोकप्रियता के कारण इसका प्रकाशन पाक्षिक होने लगा । इसके बाद भारतेंदु ने हरिश्चंद्र मैगजीन (हरिश्चंद्र चंद्रिका) तथा बालबोधिनी नामक पत्रिका का प्रकाशन किया। बालबोधिनी पत्रिका का लक्ष्य था – भारतीय स्त्रियों में जागृति पैदा करना। इसी युग में बालकृष्ण भट्ट ने हिंदी प्रदीप नामक मासिक पत्र का प्रकाशन किया। इस पत्रिका ने हिंदी पत्रकारिता की दशा–दिशा में परिवर्तन कर दिया। इस पत्रिका में मुख्यतः राष्ट्रीयता की भावना से संबंधित ही लेख प्रकाशित होते थे, इसी कारण इसे अंग्रेजी सत्ता का कोपभाजन भी बनना पड़ा। इसी दरमियान विविध विषय विभूशित, प्रताप, वृतांत दर्पण, हित प्रकाश ,अल्मोड़ा अखबार, बिहारी बंधु,, जबलपुर समाचार , भारत पत्रिका, भारत बंधु ,धर्म प्रकाश ,भारत मित्र ,उचित वक्ता, हिंदी, बंगवासी ,नागरी प्रचारिणी पत्रिका आदि पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। इस युग के प्रमुख पत्रकारों में स्वयं भारतेंदु, बालकृष्ण भट्ट,, पंडित दुर्गा प्रसाद मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, बाबूराव विष्णु ,श्यामसुंदर दास, राधाकृष्ण दास, प्रताप नारायण मिश्र ,कार्तिक प्रसाद खत्री ,नवीन चंद्र आदि का नाम उल्लेखनीय है। भारतेंदु युग के पत्र–पत्रिकाओं में देश प्रेम, सामाजिक चेतना के माध्यम से समाज में राष्ट्रीय भावना एवं जागरूकता लाने का प्रयास किया गया तथा समाज में व्याप्त विभिन्न कुरीतियों या रूढ़ियों पर करारा प्रहार किया गया।

द्विवेदीयुगीन पत्र– पत्रिकाओं में सरस्वती पत्रिका का उच्चतम स्थान है। इस पत्रिका के माध्यम से द्विवेदी जी ने भाषा का परिष्कार करने का बीड़ा उठाया तथा भाषागत अशुद्धियों एवं भाषा की अस्थिरता को दूर कर हिंदी पत्रकारिता को नई दिशा, नवीन ऊर्जा एवं नवीन आयाम प्रदान किया। बीसवीं शताब्दी की पत्रकारिता समाज के निकट होने के साथ ही साथ उसमें विविधता और बहुरूपता मिलती है। इसके पूर्व 19वीं शताब्दी के पत्रकारों को भाषा के क्षेत्र में समस्याओं का सामना करना पड़ा था। अंग्रेजी एवं उर्दू के प्रभाव के कारण हिंदी में रूचि रखने वालों की संख्या बहुत कम थी, किंतु 20वीं शताब्दी में परिवर्तित परिस्थितियों के साथ ही शनैः– शनैः हिंदी पत्र–पत्रिकाएं साहित्य, राजनीति तथा सामाजिक स्तर नेतृत्व करने लगी। इस शताब्दी में धर्म और समाज सुधार का स्थान राष्ट्रीय चेतना ने ले लिया। द्विवेदी जी एक ऐसे व्यक्तित्व के धनी थे जो साहित्य के साथ हीं विविध विषयों में रुचि रखते थे, उन्होंने सरस्वती का संपादन कर हिंदी पत्रकारिता में महान कीर्तिमान स्थापित किया। द्विवेदी जी को खड़ी बोली हिंदी पत्रकारिता के पुरोधा के रूप में याद किया जाता है। द्विवेदी युग की पत्रकारिता अपने साहित्यिक आदर्शवादिता के लिए विख्यात थी । महावीर प्रसाद द्विवेदी के समय हिंदी पत्रकारिता के दो रूप प्रचलित थे–साहित्यिक पत्रकारिता एवं सूचनात्मक पत्रकारिता। भारतेंदु युग में नवजागरण की जो लहर चली वह द्विवेदी युग में पूरे उफान पर थी। इस संदर्भ में प्रेमचंद का कहना है–''आज हम जो कुछ हैं, उन्हीं के बनाए हुए हैं। ''धीरेंद्रनाथ सिंह के अनुसार–''द्विवेदी जी छोटे छोटे पैराग्राफ, छोटे वाक्य, विराम चिन्ह , पाठकों के आराम के लिए हिंदी के सरल गद्य प्रयोग पर जोर देते थे उन्हीं की देन आज पत्रकारिता में यह

सब चला आ रहा है। ''इस युग में मैथिलीशरण गुप्त, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि ने हिंदी पत्रकारिता को एक नया स्वरूप प्रदान किया। अभ्युदय, स्वराज्य, सैनिक संदेश ,नवशक्ति, कोलकाता समाचार, विश्वमित्र, प्रताप, कर्मयोगी, हिंदी केसरी, यंग इंडिया ,हरिजन ,हंस, विप्लव, कर्मवीर आदि पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन इस युग मे हुआ। इन पत्र–पत्रिकाओं ने अपने उत्तरदायित्व का बखूबी पालन किया। गांधीजी के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आगमन के साथ ही हिंदी पत्रकारिता में भी कायापलट हुआ। इस समय हिंदी को विश्वविद्यालय में स्थान प्राप्त हुआ तथा हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त हुई जिससे हिंदी पत्रकारिता और अधिक सुदृढ़ हुई। माधुरी नामक पत्रिका में पत्रकारिता से जुड़े लगभग सभी मुद्दों को उठाया गया, इसी समय श्री शारदा, मनोरमा ,चांद ,अर्जुन, मधुकर, सुधा, महारथी, हिंदुस्तान, प्रताप ,आज का प्रकाशन हुआ। चांद का फांसी अंक ,स्वाधीनता अंक, तथा नवजागरण अंक इतिहास के अंक बन गए। यद्यपि उपर्युक्त युग में अनेक दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, मासिक ,त्रैमासिक, अर्धवार्षिक पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित हुई किंतु इनमें से अधिकांश लंबे समय तक नहीं चल पाए।

स्वतंत्रता के बाद साहित्य तथा पत्रकारिता के लक्ष्य एवं संवेदना में भी परिवर्तन हुए। स्वतंत्रता पश्चात पत्रकारिता के क्षेत्र में उद्योगपति या पूंजीपति इस क्षेत्र में उतरने लगे। वर्तमान पत्रकारिता पर दृष्टिपात करने से यह ज्ञात होता है कि क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय पत्रकारिता पर पूंजीपतियों का ही वर्चस्व है। इस समय राष्ट्रीय स्तर पर नवभारत टाइम्स, हिंदुस्तान, दैनिक भास्कर, नईदुनिया, नवभारत, हरिभूमि, आज, अमर उजाला ,आर्यावर्त, लोकवाणी, धर्मयुग, दिनमान, सप्ताहिक हिंदुस्तान, राजस्थान पत्रिका, जनसत्ता आदि हिंदी पत्रकारिता का अलख जगा रहे हैं। दैनिक भास्कर एवं दैनिक जागरण समाचार पत्र समूह विश्व के सर्वाधिक प्रसारित समाचार पत्रों की सूची में भी शुमार हैं।

इन समाचार पत्रों ने विश्वव्यापी महामारी कोरोना के समय भी अपनी महती भूमिका अदा की हैं। लॉकडाउन के दौरान कहां क्या–क्या गड़बड़ी हो रही है? प्रशासन की ओर से कैसी सुविधाएं मुहैया है? यह सब बताने वाला समाचार पत्र ही तो है जो गली–मोहल्ले, चौराहा, मुख्य बाजार,खेत–खलिहान, अस्पताल, सरकारी दफ्तरों सहित अन्य जगह की जानकारी लोगों तक पहुचाने का कार्य किया हैं। इस संकट काल मे समाचार पत्रों ने आम नागरिकों को जागरूक कर उनमें आत्मविश्वास, धैर्य, उत्पन्न करने का साहसिक कार्य किया। इसके अलावा मास्क सोशल डिस्टेंस, कोरोना टीकाकरण अभियान को जन–जन तक पहुचाने में समाचार पत्रों का उल्लेखनीय योगदान हैं।

**निष्कर्ष**–निष्कर्षतः कहा जा सकता हैं कि शनैः– शनैः विकास के मार्ग पर अग्रसर होकर समाचार पत्रों ने स्वतंत्रता पूर्व एवं पश्चात अपने राष्ट्रीय एवं सामाजिक दायित्वों का पालन करते हुए देशवासियों का मार्गदर्शक बनकर जागरूक करने का प्रयास कर रहे हैं।

**संदर्भ सूची–**


1 पत्रकारिता–सिद्धांत और स्वरूप, डॉ संजीव कुमार जैन, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल

2, प्रयोजनमूलक हिंदी–डॉ रामनारायण पटेल ,राम प्रसाद एंड संस ,आगरा

3 संचार माध्यम और पत्रकारिता का संक्षिप्त इतिहास, राहुल मुद्गल, करन पेपरबैक्स, नई दिल्ली

4 m.facebook.com विश्व में पत्रकारिता का इतिहास–अंशिका चतुर्वेदी, श्वेता सारस्वत

5 www.samajkaryshiksha.com

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः31-34

# मुण्डा जनजाति समुदाय में पूर्वजों की पूजा : विभिन्न पर्व–त्योहारों के संदर्भ में

**–माधुरी सामन्त**

सहायक प्राध्यापिका हिन्दी विभाग, टाटा कॉलेज, चाईबासा, झारखण्ड

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

**सारांशः–**प्रस्तुत लेख मुण्डा जनजाति समुदाय में पूर्वजों की पूजा उनकी आत्मा में विश्वास की विचारधारा को परिभाषित करता है। यह आत्मा और मानव के बीच के आध्यात्मिक संबंध की व्याख्या एवं पूर्वजों की पूजा परम्परा की वकालत भी करता है। ''मुण्डा'' आस्ट्रोएशियटिक भाषा परिवार की जनजातीय समूह है जो मूल रूप से झारखण्ड और उड़ीशा में निवास करती है। मुण्डा जनजाति को भाषा ''मुण्डारी'' है और वे 'सरना' धर्म में विश्वास रखते हैं। मुण्डा जनजाति समुदाय विभिन्न पर्व–त्योहार में प्रकृति पूजा के साथ–साथ अपने पूर्वजों की पूजा करते आए हैं। इनका मुख्य देवता 'सिंगबोंगा' (ईश्वर) है। मुण्डा जनजाति समुदाय में पर्व–त्योहार, पूजा–पाठ, रीति–रिवाज का विशेष महत्व है। मुण्डा जनजाति समुदाय प्रत्येक पर्व–त्योहार, रीति–रिवाज, पूजा–पाठ में अपने पूर्वजों को याद करते हैं उनकी पूजा अर्चना करते हैं। सारे पूजा–पाठ, रीति–रिवाज परिवार के किसी भी सदस्य (स्त्री या पुरूष) द्वारा सम्पन्न किया जाता है। यह जनजातीय समुदाय परिवार में किसी की मृत्यु होने पर उनकी आत्मा को पूर्वज के रूप में अपने साथ परिवार में अपनों के बीच रखने की परम्परा है। मुण्डा जनजाति समुदाय का मानना है कि मृत्यु के बाद लोगों की आत्माएँ भटकती रहती हैं जिससे उनकी आत्माओं को अनेको कष्ट सहने पड़ते हैं। इन कष्टों से पूर्वजों को बचाने के लिए वे उनकी आत्मा को अपने साथ अपने परिवार के बीच में रखते हैं। मुण्डा जनजाति समुदाय में पूर्वजों की पूजा उनकी आत्मा में विश्वास की परम्परा का अध्ययन एडवर्ड टेलर के जीववाद (एनिमिज्म) सिद्धांत के आधार पर किया गया है। आज विश्व में जनजातीय समुदाय जो आधुनिकता की आड़ में अपने रीति–रिवाजों, परम्पराओं से दूर हो रहे हैं जिस वजह से यह समुदाय अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए संघर्ष कर रही है। यह लेख विश्व जनजातीय समुदाय को आदिकाल से चली आ रही परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों से जोड़ने का प्रयास करता है।

**बीज शब्द–**पूर्वज, परम्परा, रीति–रिवाज, आत्मा, मुण्डा जनजाति, विश्वास

भारत के जनजातीय समुदाय की मुण्डा जनजाति समुदाय आदिकाल से ही प्रकृति तथा अपने पूर्वजों की उपासना करते आ रहे हैं। इनका मुख्य देवता ''सिंगबोंगा'' (ईश्वर) है। इनका ग्राम देवता ''हातुबोंगा'' तथा पहाड़ देवता ''बुरूबोंगा'' है। प्रत्येक घर में ''ओड़ाबोंगा'' अर्थात् पूर्वजों की पूजा की जाती है।

मुण्डा जनजाति भारतीय समाज का अभिन्न अंग है। झारखण्ड में आबादी की दृष्टि से तीसरी सबसे बड़ी जनजाति है। प्रजातीय दृष्टि से ''मुण्डा'' जनजाति को प्रोटो–ऑस्ट्रोलॉयड समूह में रखा जाता है। इनकी भाषा ''मुण्डारी'' ऑस्ट्रो–एशियाटिक भाषा परिवार के अंतर्गत आती है। ये अपनी भाषा को ''होड़ो जगर'' कहते हैं तथा अपने को ''होड़ो को'' कह कर सम्बोधित करते हैं। इनका मुख्य निवास स्थल झारखण्ड, उड़ीशा, पश्चिम बंगाल, बिहार, असम आदि क्षेत्र हैं। मुण्डा जनजाति समुदाय 'सरना' धर्म में विश्वास रखते हैं। 'सरना' अर्थात् सरी या

सच्चा धर्म। इनमें पर्व–त्योहार, रीति–रिवाज, पूजा–पाठ का विशेष महत्व है। इनके मुख्य त्योहार मागे, बा (सरहुल) करमा, सोहराई, नवाखानी, रोआपुना, गोमा, जितीया आदि है। अधिकांश पर्व कृषि और प्रकृति से जुड़े हैं। इस समुदाय के लोगों में त्योहारों में पूर्वजों को भोग चढ़ाने का रिवाज हैं। नए फल–फूल आदि को भी सर्वप्रथम पूर्वजों को अपर्ण किया जाता है। मुण्डा जनजाति समुदाय में पूर्वजों को ईश्वर के बराबर का दर्जा प्राप्त हैं। वे उन्हें ''हाड़म होड़ो–बुढ़ी होड़ो को'' कह कर सम्बोधित करते हैं। इस समुदाय में विशिष्ट रिवाज है वे प्रत्येक पर्व–त्योहार, पूजा–पाठ, रीति–रिवाज आदि में अपने पूर्वजों को याद करते हैं उनकी पूजा करते हैं। यह पूजा घर की किसी एक सदस्य (स्त्री या पुरूष) द्वारा सम्पन्न किया जाता है। मुण्डा जनजाति के विश्वासानुसार पूर्वज देवता बनकर आदिंग (रसोईघर) में निवास करते हैं। अतः यह पूजा आदिंग (रसोईघर) में सम्पन्न किया जाता है। पूजा स्थल आदिंग में बाहरी लोगों का प्रवेश वर्जित होता है। शादी–ब्याह, पर्व–त्योहार आदि में आदिंग (रसोईघर) में बाहरी लोगों के प्रवेश करने से पूजा स्थल को अशुद्ध माना जाता है। पूजा स्थल के शुद्धिकरण के लिए लाल मुर्गी तथा हँडीया (चावल से बना एक विशेष पेय पदार्थ) पूर्वजों को अपर्ण किया जाता है। मुन्डा जनजातीय समुदाय का मानना है कि पूर्वजों की आत्मा उनके परिवार को संरक्षित रखते हैं। विभिन्न कार्यों को करने में उन्हें मानसिक शक्ति प्रदान करते हैं।

मुण्डा जनजाति समुदाय आदिकाल से ही पूर्वजों के साथ–साथ ईश्वर के रूप मे प्रकृति पूजा करते आ रहा है। इनके विश्वासानुसार प्रकृति के कण–कण में ईश्वर का वास होता है। वे प्रकृति से भालि–भाँति परिचित है। विभिन्न प्रकार के पौधों, कंद–मूलों, फल–फूलों, पत्तों एवं उनसे होने वाले फायदों से अवगत हैं साथ ही जंगल के सभी पशु–पक्षियों से भी परिचित हैं। इस तरह से मुण्डा जनजातीय समुदाय का प्रकृति से गहरा नाता रहा है एवं उनका प्रकृति के साथ अन्योन्याश्रय संबंध रहा है।

मुण्डा जनजातीय समुदाय में पूर्वजों की पूजा अर्चना की परम्परा आदिकाल से ही चली आ रही है। इनमें पूर्वज (आत्मा) की पूजा की शुरूआत मृत व्यक्ति के अंतिम–संस्कार होने के साथ ही होती है। इस समुदाय के दफनाना एवं जलाना दोनों ही रिवाजों का चलन है। कुछ मुण्डा जनजाति समुदाय में दफनाने के बाद उसी रात में तथा कुछ समुदाय में दशकर्मा के रात में मृत व्यक्ति की आत्मा को घर के अन्दर बुलाने का रिवाज है। इस रिवाज को 'उम्बुल–रा–आदेर'' (छाया/आत्मा बुलाना) कहा जाता है। इसके बाद ही मृत व्यक्ति की आत्माा की पूजा पूर्वज के रूप में की जाती है।

मुण्डा जनजाति समुदाय में मागे पोरोब को प्रमुख त्योहार की रूप में मनाया जाता है। मागे पोरोब में प्रकृति की पूजा अर्चना की जाती है। माघ के महीने में ढ़ोल–नगाड़े की धून पर नाच–गान एवं खान–पान के साथ सामुहिक त्योहार के रूप में मनाया जाता है। इस त्योहार को आठ दिनों में सम्पन्न किया जाता है – अनादेर, गउमहरा, ओतेइलि, हेःसकम, मागे मारंग पोरोब, जतरा पोरोब, और हर मागेया के रूप में मानया जाता है। मुण्डा जनजाति समुदाय में 'सरना' में पहान द्वारा देशाउली एवं जहेर बुढ़ि (ग्राम देव और देवी) की पूजा अर्चना की जाती है। इस समुदाय में पर्व के दिन प्रत्येक घर में अदिंग (रसाईघर) में भोग चढ़ाने का रिवाज है। परिवार किसी भी सदस्य (स्त्री या पुरूष) द्वारा भोग चढ़ाया जाता है। भोग के रूप में दाल, चावल और हँडिया को सरजोम सकम (साल पत्ता) में पूर्वजों को अर्पित किया जाता है।

''बा'' (सरहुल) पर्व मुण्डा जनजाति का उमंग भरा अहल्लादकारी पर्व है। ''बा'' फरवरी से अप्रैल माह में मनाया जाने वाला वसंतोत्सव है। यह पर्व नए साल के शुरूआत का प्रतीक है। ''बा'' का अर्थ है फुल अर्थात् पुष्पों

का त्योहार है। ''बा'' पर्व धरती माता को समर्पित है – इस त्योहार के दौरान प्रकृति की पूजा की जाती है। वसंत ऋतु के दौरान साल के पेड़ों की शाखाओं को नए फूल लगते हैं। त्योहार के दिन साल के पेड़ की एक शाखा प्रत्येक घर में लाया जाता है। इस समुदाय में बा पूजा सर्वप्रथम पहान अपने घर में करता है इसके बाद गाँव के दूसरे लोग बा पूजा करते हैं। धरती माता को घर के आँगन में साल के फूलों के साथ मुर्गी और हँडिया अर्पित किया जाता है। बा पोरोब के दिन भी सभी घरों के अदिंग में भोग चढ़ाने का रिवाज है। भोग के रूप में पका हुआ मांस और चावल को साल के पत्ते में चढ़ाया जाता है। बा पर्व के दुसरे दिन शाम में गिड़ि बा (फूल फेंकना/विसर्जन) कार्यक्रम आयोजित किया जाता है जिसमें गाँव के सभी लड़का–लड़की, बड़े–बूढ़े फूल विसर्जित करने जाते हैं। वहाँ पर किसी बुजुर्ग अथवा पहान द्वारा पूजा किया जाता है और सभी लोग अपने–अपने घरों की ओर लौट जाते हैं। इस तरह से सरहुल पर्व का समापन हो जाता है। मुण्डा जनजाति समुदाय के लोगों का मानना है कि वे इस त्योहार को मनाने के बाद ही नए फल–फूलों, पत्तों आदि का सेवन कर सकते हैं।

गोंडा बोंगा (गोहाल पूजा) या सोहराई गौ–रक्षण हेतु की जाने वाली पूजा है। गाय बैल आदि पशुओं के निवास कक्ष में पूजा किया जाने वाला अनुष्ठान ''गोंड़ा–बोंगा'' कहलाता है। जिसमें ग्राम देव, वन देव आदि के साथ अपने पूर्वजों को स्मरण कर पशुओं की खुशहाली की कामना की जाती है। उस दिन सवेरे ही गाय–बैलों को नहला–धुला कर सींगो पर तेल लगाया जाता है बैलों को सजाया जाता है। मुण्डा जनजातीय समुदाय में अपनी अपनी परम्परा के अनुसार इस पूजा में तीन–चार मुर्गों की बलि दी जाती है साथ में नए चावल के आटा से बनी छिलका रोटी का भोग अर्पण करते हैं। छिलका रोटी तथा अन्य भोजन पकाने के लिए मिट्टी के नए बर्तन प्रयोग किए जाते हैं। परम्परा के अनुसार तैयार भोजन को आदिंग (रसोईघर) में पूर्वजो को अर्पित किया जाता है। इसके बाद ही परिवार के सदस्य भोजन ग्रहण करते हैं।

मुण्डा जनजातीय समुदाय में ''जोमनवा'' अर्थात् ''नवाखानी'' पर्व का आयोजन उत्सव के रूप में किया जाता है। इस पूजा में सभी अपने–अपने आदिंग (रसोईघर) में पूर्वजों का श्रद्धापूर्वक आह्वान करते हैं और उन्हें भोग स्वरूप नई फसल का भात, दाल अर्पित करते हैं। नए धान को कूट कर चूर्ण बना चूडा की तरह भोग स्वरूप अपनो में बाँटा जाता है। इस समुदाय का मानना है कि पूर्वजों की कृपा से दुःख संकटों से पार पाते हैं, इन्ही के संरक्षण में कृषि कार्य सम्पन्न होता है अतः फसल का प्रथम भोग का इन्हें ही अधिकार है। हर कृषक आभार प्रकट करने हेतु इस पूजा–उपासना पर्व को महत्व देते हैं।

इसी प्रकार मुण्डा जनजातीय समुदाय में करमा, जीतिया, रोआपुना, कोलोम बोंगा, कोलोम ओटांग, गोमा, हेरो आदि पर्वों को धूमधाम से मनाया जाता है जिसमें प्रकृति के साथ–साथ पूर्वजों की पूजा अर्चना की जाती है। सभी त्योहारों में पूर्वजों को भोग चढ़ाने के बाद ही घर के सदस्य भोजन ग्रहण करते हैं।

मुण्डा जनजाति समुदाय में जब नए सदस्य के रूप में नया बच्चा या नई बहु का आगमन होता है तो उनका परिचय पूर्वजों से कराया जाता है। परिचय कराने के लिए आदिंग (रसाईघर) में पूजा का आयोजन किया जाता है। परिवार में नये बच्चे के जन्म के बाद 21 दिनों तक माँ तथा बच्चे का आदिंग में प्रवेश निषेध होता है। इक्कीसा करने बाद ही नए बच्चे को आदिंग में ले जा कर पूर्वजों से परिचय कराया जाता है। इसके लिए पूजा में पूवजों को मुर्गी तथा हंडिया चढ़ाया जाता है तैयार भोजन को भी भोग स्वरूप पूर्वजों में अर्पित किया जाता है। इसी तरह शादी ब्याह के सारे रीति–रिवाजों के समाप्त होने के बाद नई बहु का परिचय पूर्वजों से कराया जाता है। इसमें नई बहु के हाथों से बना भोजन भोग स्वरूप पूर्वजों को चढ़ाने का रिवाज है।

मुण्डा जनजाति समुदाय में पूर्वजों की पूजा उनकी आत्मा में विश्वास की विचारधारा का अध्ययन एडवर्ड टेलर के जीववाद (एनिमिज्म) सिद्धांत के आधार पर किया गया है तथा मुण्डा जनजाति समुदाय के प्रकृति पूजा, प्रकृति प्रेम की परम्परा का अध्ययन साहित्य में परिस्थितिक स्त्रीवाद सिद्धांतों के आधार पर किया गया है।

आज विश्व का जनजातीय समुदाय आधुनिकता की आड़ में हिन्दु, ईसाई, मुस्लिम और अन्य धर्मों के रीति–रिवाज को अपना रहे हैं और आदिकाल से मानते आ रहे परम्पराओं और रीति–रिवाजों को छोड़ रहे हैं। जिसके कारण जनजातीय समुदाय को अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए संघर्ष करना पड़ रहा है। प्रकृति पूजा एवं अपने पूर्वजों की आत्माओं में विश्वास विश्व के सभी आदिवासियों में समान रूप से पाया जाता है। यह लेख जनजातीय समुदाय में प्रकृति से प्रेम, उसका संरक्षण एवं पूर्वजों की आत्मा में विश्वास उनकी पूजा अर्चना आदि को बढ़ाने का प्रयास करता है साथ ही आदिकाल से चले आ रहे परम्पराओं, रीति–रिवाजों के अस्तित्व व अस्मिता को बनाए रखने का प्रयास करता है।

**संदर्भ ग्रंथ–**


1. टूटी, प्यारी (2019), मुण्डाओं की पूजा–पाठ–मेला और वार्त्तालाप, न्यू दिल्ली : पृथ्वी प्रकाशन
2. होरो, अमरदीप, मुण्डा आदिवासियों का समाज, संस्कृति और इतिहास, राँची : काथलिक प्रेस
3. डॉ रूपांशुमाला (2012), मुण्डा आदिवासियों की भाषाएँ और उनकी संस्कृति, इलाहाबाद : परिधि प्रकाशन
4. बड़ायऊद्, डॉ. मनसिद्ध (2018), होड़ो जगर सइति ओड़ो सइति ओलहरियाको, राँची : जेवियर पब्लिकेशन
5. गोप, बिरंची (2014) सारना साधक हो और उनके पर्व त्योहार, जमशेदपुर झारखण्ड : टाटा स्टील ट्राईबल कल्चरल सोसाईटी

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः35-42

# हिन्दी सेवी महिला लेखिकाएं : एक परिचय (द्विवेदीयुग के संदर्भ में)

**–गीता खोलिया**

एसो० प्रोफेसर (हिंदी), हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना परिसर, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

मानव जीवन अनेकानेक विकृतियों अनुरुक्ति–विरक्ति, समर्पण, उत्सर्ग, मिलन, वियोग, हास, विलाप, क्षोभ आनंद आदि का अद्भुत सम्मिश्रण है। जीवन की नित नूतन अनुभूतियां मानव मन को उद्वेलित, प्रेरित करती हैं। इन अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए चित्रकार अपनी तूलिका द्वारा चित्रों को माध्यम बनाता है, कलाकार कलाकृति को और कवि इन अनुभूतियों को शब्दों का बाना पहना कर अत्यंत सूक्ष्मता, तरलता एवं संवेदनशीलता से अभिव्यक्ति प्रदान करता है। अनुभूति ही अभिव्यक्ति की प्रथम सीढ़ी है। नारी हृदय समय एवं देशकाल से किसी न किसी प्रकार संपृक्त रहता है। देश में होने वाले अत्याचारों से व्यथित हो, वह देश पर न्यौछावर हो जाने को उद्यत हो जाती है। प्रेमिल क्षणों में प्रेमोन्माद से उन्मत्त हो जाती है। वियोग के दुर्दिनों में पीड़ा, व्यथा अश्रुबन कर नेत्रों से अविरल धारा के रूप में प्रवाहित होने लगती है और अश्रुपूरित भाव अंर्तमन से करुण स्वर में कविता के रूप में निःसष्त हो जाते हैं। नारी हृदय में अनुभूति की तीव्रता, विचारों की विविधता, भावों का गांभीर्य एवं भाषा का सौंदर्य अधिकाधिक होने के कारण यह कविता अत्यधिक कोमल, हृदयग्राही, संवेदनशील, ग्राह्य, मर्मस्पर्शी, भावुक एवं व्यंजनापूर्वक हो उठती है, जो सहृदय पाठकों को अधिकाधिक आकर्षित करने में सक्षम हो जाती हैं।

द्विवेदी युग में हिंदी की महिला रचनाकारों ने साहित्यिक पत्रकारिता के माध्यम से समाज की विषमताओं पर अपनी लेखनी को धार दी है। इस युग की महिला रचनाकारों की रचनाओं में सामाजिक चेतना उभर कर आई है। हालांकि इस युग की अनगिनत महिला रचनाकारों का हिंदी साहित्य को अप्रतिम योगदान रहा है। किंतु प्रस्तुत शोध पत्र में इस युग की तीन चुनींदा महिला रचनाकारों सरस्वती देवी, बुंदेलाबाला, गोपालदेवी के कृतित्व एवं व्यक्तित्व पर प्रकाश डालकर कविताओं का विश्लेषणपरक अध्ययन किया गया है। जो निम्नवत् हैः–

**1. सरस्वती देवी**

**जिला जु आजमगढ़ अहै तामहै एक विचित्र।**
**ग्राम कोइरियापर के कवि द्विज रामचरित।।**
**ताकी कन्या एक में मूर्ति मूर्खता केरि।**
**कुलवन्तिन पद धरि अस गुणवन्तिन की चेरि।।**
**मम शिक्षक कोउ और नहिं निज ही पिता सुजान ।**
**कठिन परिश्रम करि दियो विद्या–दान महान।।**[1]

**जीवन वृत्त** – जैसा कि कवयित्री ने स्वयं ही उपयुक्त पक्तियों में परिचय दे दिया है अतः इनका जन्म पौश कृष्णाएक संवत् 1933 (सन् 1876) का जिला आजमगढ़ के कोइरियापार नामक स्थान में हुआ था इनका उपनाम 'शारदा' था। इनके पिता प० राम चरित्र त्रिपाठी स्वयं एक सुयोग्य कवि व महाराजा राधा प्रसाद सिंह डुमरांव के राजकवि थे। इनकी शिक्षा दीक्षा का प्रबंध इनके पिता ने घर पर ही किया था। कविता के प्रति अभिरुचि पिता द्वारा विरासत में मिली। पिता की एक मात्र सन्तान होने के कारण अगाध स्नेह व पैत्रक सम्पत्ति की अधिकारिणी

थीं। व्याकरण एवं कविता से सम्बन्धित अनेक बातों को भली भांति देखा और समझा करती थीं। गणित में भी उन्होंने पर्याप्त शिक्षा प्राप्त की। पिता से ही बंगला, अंग्रेजी व संस्कृत का ज्ञान प्राप्त किया।

इनका विवाह नगवा जिला आजमगढ़ निवासी पं० महाबीर प्रसाद जी के साथ सम्पन्न हुआ जो कि अपने गाँव के प्रतिष्ठत जमींदार थे। वैभव एवं श्री सम्पनता के कारण सुखपूर्वक जीवन निर्वाह किया। इनकी पाँच सन्तानें हुयीं किन्तु दुर्भाग्यवश एक कन्या और एक पुत्र ही जीवित रहे। इनकी रचनाएँ 'रसिक मित्र' और 'गृहलक्ष्मी' आदि में समय–समय पर प्रकाशित होती रहती थीं। स्त्रियों में लज्जाशीलता देखना इन्हें यथेष्ट था। स्त्री स्वतंत्रता व उच्छृखलंता की पक्षपातिनी नहीं थी। कविता के साथ–साथ ज्योतिष और व्याकरण पर भी ये समान अधिकार रखती थीं।

**रचनाएँ–**कवयित्री ने हिंदी की कई पुस्तकों का प्रणयन किया (1) सुन्दरी सुपन्थ, (2) नीति निचोड़, (3) शारदा शतक। इन प्रकाशित पुस्तकों के अतिरिक्त बनिता बंधु, मनमौज व सन्मार्ग प्रकाशन की रचना भी इन्होंने की। इन्होंने मझौली राज्य की अधीश्वरी का जीवन चरित्र भी लिखा। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय ने इनके विषय में लिखा है––

''श्रीमती सरस्वती देवी कविता में अपना नाम शारदा रखती हैं। इनके पिता पं० रामचरित तिवारी हमारे जिले के प्रसिद्ध कवि थे। सरस्वती जी सहृदयता और सरस रचनायें करती हैं। इनकी रचना अत्यन्त मधुर और हृदयग्राहिणी हैं। ये प्राचीन आदर्श की महिला हैं। यथा अवकाश हिन्दी सेवा में संलग्न रहती हैं। नागरिक जीवन न होने के कारण यद्यपि यें जैसी चाहिये वैसी ख्याति नहीं लाभ कर सकीं तो भी उनमें कविता सम्बन्धी जो गुण हैं वे आदरणीय हैं। इनके पति श्रीमान पं० महाबीर प्रसाद हमारे जिले के प्रतिष्ठित जमींदार हैं और कष्टमय होने पर भी अपने जीवन को आनन्द के साथ व्यतीत कर रहे हैं।[2]

**2. सुन्दरी सुपन्थ –** यह कवयित्री की अट्ठारह पृष्ठों की छोटी से पुस्तक है जिसमें पिचासी दोहे, दो कवित्त, तीन कुडलियाँ, पाँच चौपाई, दस अपर छन्द छप्पयों का संग्रह द्रश्टव्य है। इस रचना का प्रमुख उद्देश्य अशिक्षित स्त्री वर्ग का उपकार है। कवयित्री ने स्वयं अपना लक्ष्य स्पष्ट करते हुये लिखा है––

**श्रीसतचित आनन्द जो जन अनाथ के नाथ,**
**ताकसुता को दण्डवत करो धरा धरि माथ।**
**लिखन चहो लहा ग्रन्थ इक कुल नारिन के हेत,**
**कृपा करहूँ परमातमा बने बुद्धि चित चेत।।[3]**

कवयित्री ने जो कुछ भी शिक्षा पायी वह पिता के संरक्षणत्व में प्राप्त की। विवाहोपरान्त उनको गृहस्थी के कार्यों से ही समय नहीं मिल पाता था। वह लिखती हैं––

**प्रथम पढ़ायो व्याकरण पुनि कछु काव्य बिचार,**
**तब कछु ऊर्दू फारसी बंगला वर्ण सिखाय।**
**कुछ अंग्रेजी सरल पितु मोहि दीन्ह दिखाय।**
**जब लग मैं मायके रही लिखत पढ़त रहि नित,**
**अब घर पर परवस परो रहि नहिं सकति सुचित।।[4]**

गृहस्थिक जीवन में कवयित्री इतनी व्यस्त हैं कि उन्हें समाचार पत्र तक को देखने का समय नहीं है। वे लिखती हैं–

**गृह कारज व्यवहार बहु परै संभरान मोहि,**
**लिखन, पढ़न इक संग ही यह सब कैसे होहिं।।**
**समाचार के पत्र जे आवत है मम पास।**

**तिनके देखन के लिये मिलत न मोहिं सुपास।।**[5]

**3. वनिता बन्धु –** यह कवयित्री की पच्चीस पृष्ठों की पुस्तक है। 19 वीं शताब्दी की नारी की दुर्दशा देखकर कवयित्री का मन बहुत विचलित हो उठा। पर्दा प्रथा, सती प्रथा, बाल विवाह, नारी अशिक्षा आदि उस समय की प्रमुख समस्याएं थीं। कवयित्री ने इन समस्याओं का वर्णन एवं उनसे मुक्ति पाने की विनती ईश्वर से की है। इन रचनाओं में प्राचीन भारतीय नारी का आदर्श है। प्राचीन नारी के आदर्शों से कवयित्री प्रभावित हैं। वह भारत की नारी को नवीन प्रवाह से प्रभावित देखना उचित नहीं समझती। नारी के प्रति सुधार की भावना इस पुस्तक की मुख्य विशेषता है।

श्रृंगार वर्णन भी कहीं–कहीं दृश्टिगोचर होता है किन्तु यह सीमित एवं संकुचित है

**नैन कजरारे कोर वारे धनु भौंह तान,**
**मारत निसंक बान नैकु डरत है।**
**बेसर बिसेख बेसकीमत जड़ाऊँ देखि,**
**हारन समेत तारापति हहरत है।।**
**अघर कपोल दंत नासिका बखानो कहा,**
**केश की सुवेश लखि षेश लहरत है।**
**श्रीफल कठोर चक्रवाक से निहार ते रे,**
**उरज अमोल गोल घायल करत हैं।।**[6]

यही नहीं मानिनी राधा का भी सुन्दर चित्र कवयित्री ने उपस्थित किया है ––

**ऐसी नहीं। हम खेलन हार, बिना रस रीति करें बरजोरी।**
**चाहै तजौ तजि मान कहाँ फिरि जाहिं धरे रसभानु किशोरी।।** [7]

तत्कालीन भारतीय स्त्री देखकर वह कम्पित हो उठीं हैं। उन सामाजिक परिस्थितियों को देखकर उन्हें स्वदेश सुधार पर संदे होने लगता है–

**भारत भगिनिन की दशा सोचत जिय थहराय।**
**आस स्वदेश सुधार की दीख परति नहिं हाय।।**[8]

नारी का धर्म पति की सेवा है, पति के सुख में प्रसन्न व दुख में अवलम्ब बनना ही पतिव्रता नारी का धर्म है–

**कुलवंतित को धर्म नहि, पति सेवा तजि आन।**
**सहज मुक्ति सारण यहीं भाशत वेद पुरान।।**
**पति कहे दुखित बिलोकि के होह दुखी तत्काल।**
**बोल्हु माधुरि बैन अरु रहहु नम्र सब काल।।** [9]

स्त्रियों को मितव्ययता की शिक्षा देवी हुई भविष्य के प्रति सचेत करती हैं –

**जो रूपया पैसा तुम्हें मिले सुखर्चन अर्थ।**
**राखहु ताहि सम्हारिकै फैकहु नाहि अनर्थ।।**
**लघु व्यय जहॅ लग व्है सकै करि सुधराई साथ।**
**राखहु ध्यान यहिं बात पर बन्द होय नहिं हाथ।।**[10]

अंत में नारी को उसके धर्म से अवगत कराती हुई नीति और सदाचार के उपदेश देती हैं –

**नारी धर्म अनेक हैं कहौं कहां लगि सोय।**
**करहूं सुबुद्धि बिचार ते तजहु नु अनुचित होय,**

**हानि लाभ निज सोच के करहिं होहु प्रवृत्त,**

**सुख पावहु दुहु लोक में, यश बाढ़ै नित–नित।।**[11]

**2. बुन्देला बाला**

**जीवनवृत्त**–श्रीमती गुजराती बाई बुन्देलाबाला का जन्म एक कायस्थ कल में गाजीपुर जिले के शादियाबाद नामक कस्बे में सम्वत् 1940 (सन् 1883) में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री परमेश्वर दयाल था जो कि गोरखपुर के मुहम्मद जकी नामक जमींदार के मुंसिफ थे। अपने जीवन में अन्त तक ये उन्हीं के वहा कार्यरत रहे। बुन्देलाबाला ने पिता के संरक्षणत्व में हिंदी और ऊर्दू की शिक्षा ली थी। पैतृक गुण के कारण इनका हिन्दी से अधिक ऊर्दू पर अच्छा अधिकार था। इनका विवाह सम्वत् 1960 (सन् 1903) को हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार लाला भगवान दीन 'दीन' के साथ छतरपुर में सम्पन्न हुआ। उस समय 20 वर्ष की आयु कुंवारी कन्याओं के लिये अपमानजनक थी। कहीं भी योग्य वर न मिल पाने के कारण इनके मामा जी जो कि 'खेम' नाम से कविता किया करते थे. उन्होंने ही दीन जी के साथ इनका विवाह सम्पन्न कराया। दीन जी की पहली पत्नी का देहावसान हो गया था।

विवाहोपरान्त श्रीमती बुन्देलाबाला को अपनी पति की विद्वता का पता चला और उनसे प्रेरणा प्राप्त कर कविता लेखन की ओर अभिरूचि व्यक्त की। पति ने भी इन्हें कविता ग्रन्थ पढ़ाना व कविता करना सीखाना प्रारम्भ कर दिया। 'बिहारी सतसई' अलंकार की पुस्तक व छन्दों के कुछ लक्षण ही इनकी काव्य प्रेरणा के श्रोत थे। धीरे–धीरे ये कविताएँ करने लगीं व पति इनकी अशुद्धियों को दूर कर दिया करते थे। दो वर्ष तक पूर्ण मनायोग से कविता लेखन सीखने के पश्चात् ये इसमें निपुण हो गयीं। इनका वास्तविक नाम गुजराती बाई था किन्तु बुन्देल खण्ड की निवासी होने के कारण 'बुन्देलावाला' उपनाम से कविता करने लगीं। ये पतिव्रता, धैर्यशीलता, सहनशील व परोपकारी प्रवृत्ति की थी। साहित्य के साथ साथ चित्रकारी आदि का भी इन्हें बहुत शौक था। रंग–बिरंगे कागज के टुकड़ों को फूल पत्तियों का रूप देने में कुशल थीं। सम्वत् 1966 में 26 वर्ष की अवस्था में इनका एक पुत्र हुआ। इसी बीच में अतिसार नामक रोग ने ग्रस्त कर लिया। अंत में नौ माह के पुत्र को छोड़कर सन् 1909–10 के मध्य स्वर्ग सिधार गयीं। इनकी मृत्यु से हिंदी साहित्य एक प्रतिभाशालिनी कवयित्री की गौरवमयी देश भक्ति पूर्ण कविताओं से वंचित हो गया। 'दीन' जी का 'वीरपंचरत्न' नामक संग्रह श्रीमती बुन्देलाबाला की प्रेरणा स्वरूप रचित है। कवयित्री ने साहित्य संसार के समक्ष नवीन दृष्टिकोण रखा। श्री गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश' के शब्दों में–''श्रीमती बुन्देलाबाला की रचनाओं ने यह स्पष्ट कर दिया है कि हिंदू समाज के भविष्य से चिंतित व आशंकित रहने वाले पुरुष कवि यदि देशानुराग पूर्ण कविताएं लिखने की प्रवृत्ति को नहीं रोक सकते थे तो स्त्री कवियों के लिए यह और भी असम्भव था। माताओं का हृदय स्वभावतः कोमल, सुकुमार होता है और जब कवि हुए बिना भी उसकी करूणा का पार नहीं रहता, तब कवित्व शक्ति सम्पन्न होने पर उसकी हृदय–द्राविणी लेखनी के चमत्कार का क्या कहना।''[12]

**रचनाएँ** – तत्कालीन 'बालहितैषी', 'भारतेन्दु' और 'लक्ष्मी' आदि पत्रिकाओं में इनकी रचनाएं प्रकाशित होती थीं। 'विधवाविलाप' से संबंधित कविता प्रतियोगिता में इनकी कविता को सर्वोत्तम घोषित किया गया व पुरस्कार स्वरूप सचित्र रामायण प्रदान किया गया। इनकी अधिकांशः कविताएं 'बाल बिचार' नामक पुस्तक में द्रष्टव्य हैं।

**विषय –**

**(1) देश भक्ति** – इनके काव्य में देश और समाज की वेदना है। जीवन जागृति का नवीन संदेश प्रेषित करने में ये कविताएं सक्षम हैं।

**हे प्यारे! कदापि तू इसको तुच्छ श्याम रेखा मत मान।**

**यह है शैल हिमांचल इसको भारतभूति पिता पहचान।**

**नेह सहित ज्यौं पितु पुत्री को सादर पालन करता है।**

**यह हिमगिरि त्यौं ही भारत हित पितृभाव हिय धरता है।।**[13]

इनकी कवित्व शक्ति उच्च और प्रतिभा सम्पन्न थीं। कहीं–कहीं कल्पना में विचरण करने के पश्चात् भी स्वाभाविकता इसका सबसे बड़ा गुण बना रहा है। युवा वर्ग को सावधान करते हुए उन्हें देश भक्ति व कर्तव्य से परिचित कराती हुई देश प्रेम का परिचय देती हैं –

**सावधान है युवक उमंगों, सावधानता रखना खूब,**

**युवा समय के महा मनोहर, विशयों में मत जाना डूब।।**

**सर्व काज करने से पहले, पूछो अपने दिल से आप**

**इसका करना इस दुनिया में, पुण्य मानते हैं या पाप।**[14]

**(2) अतीत गान–** ओज व वीरत्व से परिपूर्ण रचना इनकी प्रमुख विषेशता है। देश प्रेम की भावना से कवयित्री पग–पग पर प्रेरित करती जा रही हैं। इन्होंने अनेकानेक महापुरुषों के जीवन चरित्र, उनके द्वारा किये गये सतकार्यों को पढ़ा व सुना है। अतः आज के देश में भी उन्हीं वीर आत्माओं की उपस्थिति अनिवार्य मानती हैं–

**परशुराम श्री राम भीम अर्जुन उद्दालक।**

**गौतम षंकर सरिस धर्म सत् के संचालक।।**

**उत्साही दृढ़ अंग प्रतिज्ञा के प्रतिपालक।**

**शारीरिक मस्तिष्क शक्ति बल अरिगण बालक।।**

**काज कर मन लाय बने शत्रुन उर षालक।**

**अब भारत मातहिं चाहिए ऐसे बालक।।**[15]

**(3) प्रेम की महत्ता–** कवयित्री मात्र देश भक्ति तक ही सीमित न रहीं वरन् अन्य विषयों पर भी इन्होंने अपनी लेखनी चलाई है। सच्चे प्रेम का चित्रण सुंदरता के साथ किया है –

**प्रेम पंथ को गूढ़ सुख, प्रेमिहि सकै बताय।**

**बैदांती जाने नहीं, दांत वाय रहि जाय।।**

**प्रेम तत्व अति गूढ़ है, बुद्धि न सकै बताय।**

**पहुंचि न पावै, बीच ही, उड़ि कपूर लौ जाय।।16**

प्रेम रूपी जाल में फंस जाने पर हृदय का सुख चैन न जाने कहां बिलुप्त हो जाता है। इसी भाव को स्पष्ट करती हुई कहती हैं–

**प्रेम पंथ परि है कहाँ, जियरा को सुख चैन।**

**धक–धक करि हियरा कहै , उठि पिय देश चलै न।।**

**चाहन प्रिय संयोग रस, छनक बीज जनि पार।**

**पिय प्यारे के प्रेम में, कहाँ जगत व्यवहार।।**

**प्राण औठ पै व्है रहे, तुम दर्षन के हेत।**

**बिरमै अथवा उड़ि चलै, का तुम आज्ञा देत।।**[17]

**3. गोपाल देवी**

**जीवन वृत्त**–स्त्री समाज सुधारक, नारी शिक्षा की प्रतिनिधि, तत्कालीन समाज की कीर्ति स्तम्भ श्रीमती गोपाल देवी का जन्म जिला बिजनौर में सम्वत् 1940 (सन् 1883) में हुआ था। इनके पिता का नाम पं० शोभा राम व माता श्रीमती सरस्वती देवी थीं। इनके भाई श्री श्रोत्रिय भगवान स्वरूप थे। प्रतिभा सम्पन्नता इनमें बाल्यकाल से ही दिखाई देती थी। माता के उचित सरक्षणत्व ने इन्हें योग्य शिक्षा दी। मात्र विद्याध्ययन ही नहीं वरन् गृहस्थी के अन्य कार्यो यथा–सिलाई, कढ़ाई, पाक शास्त्र आदि में भी निपुण हो गयीं थीं।

इनका विवाह सम्वत् 1958 (सन् 1901) में अट्ठारह वर्ष की आयु में प्रयाग की कायस्थ पाठशाला के संस्कृत प्रोफेसर श्री सुदर्शनाचार्य बी०ए० से सम्पन्न हुआ। इनके पति ने 'सुदर्शन प्रेस' का निर्माण कराया और उसी की देखरेख में निमग्न हो गये। इनकी विद्वता के कारण तत्कालीन सरकार इन्हें इंग्लैण्ड भेज रही थी लेकिन घर–गहृस्थी व कारोबार के मोह के कारण ये विदेश नही गये। पति की विद्वता से प्रभावित और प्रेरित होकर श्रीमती गोपाल देवी ने स्त्रियों के सुधार हेतु 'गृह लक्ष्मी' नामक पत्रिका का सम्पादन भार ग्रहण कर लिया। लगभग बीस वर्षों तक इस पत्रिका के माध्यम से नारी समाज को नवीन दिशा दी। इनकी प्रेरणा स्वरूप इनके पति ने भी 'शिशु' नामक बालोपयोगी पत्रिका का संचालन कार्य आरंभ कर दिया। इनके दो पुत्र व तीन कन्याएँ थीं।

कवयित्री बाल्यकाल में बहुत समय तक अपने मामा श्री कृष्ण स्वरूप (बी०ए०, एल०एल०बी०) के घर रहीं थीं, जो कि तत्कालीन प्रतिष्ठित वैद्य थे। अपने मामा से प्रेरणा प्राप्त कर आयुर्वेद संबंधी पुस्तकों का गहन अध्ययन किया। प्रयाग में 'नवजीवन औषधालय' नामक औषधालय की स्थापना की। वैद्यक में इनकी योग्यता का समाचार सुनकर महारानी साहिबा बूंदी ने भी इन्हें अपने राज्य में चिकित्सा के लिये बुलाया और सम्वत् 1983 ई0 में 'राज्य बैद्या' की उपाधि से विभूशित किया।

देशानुराग का भाव इनमें कूट–कूट कर भरा था। इस क्षेत्र में सर्वप्रथम इनके ही कार्यों में देश भक्ति को क्रियात्मक रूप मिला। देश भक्ति संबंधी रचनाओं की प्रतिष्ठा इस काल में छायावाद के समान ही श्रेष्ठता को प्राप्त हुई। इन्होंने मात्र कल्पना को प्रश्रय न देकर अबोध शिशुओं और अल्प शिक्षितों के ज्ञानार्जन हेतु काव्य प्रणयन किया। स्वभाव से ही नम्रता एवं सहिष्णुता की धनी होने के कारण अपनी रचनाओं में भी नीति, आदर्श व सदाचार को महत्व दिया।

**रचनाएँ** –कवयित्री ने हिन्दी में कई पुस्तकें लिखी जिनमें 'परियों का देश', 'महिला स्वास्थ्य संजीवनी', 'दिव्य देवियां' आदि प्रमुख हैं। 'राज बैद्या' नामक मासिक पत्र निकालकर स्त्री समाज को अनेक रोगों एवं संकटों से मुक्त किया। कविता सम्बन्धी कोई ग्रन्थ इनके द्वारा प्रकाशित नहीं किया गया इनकी कविताएँ यत्र–तत्र तत्कालीन प्रमुख पत्रिकाओं में दृष्टिगोचर होती हैं।

**विषय– (1) आयुर्वेद प्रचार** – कवयित्री ने आयुर्वेद शास्त्र के प्रचार हेतु अनेकानेक कविताओं का प्रणयन किया। उदाहरणार्थ–

हो आयुर्वेद सदैव आयु सुखदाता।

जैसा उसका इतिहास हमें बतलाता।।

हों सभी स्वास्थ्यप्रद रहन–सहन के ज्ञाता।

समझे अपने सुत की बीमारी माता।।

हम भूल सुखों को स्वास्थ्य न भूल गवायें।

सब मिटें देश के रोग लोक सुख पावै।।[18]

तत्कालीन समाज में प्रसारित अनेकानेक भयंकर रोगों का प्रकोप एवं अकाल मृत्य देखकर कवयित्री बिचलित हो उठीं और स्वयं जन–जीवन को रोगमुक्त करने का बीड़ा इन्होंने उठा लिया ––

हौं नाहिं काल कवलित अकाल नर–नारी।

संख्या न मृत्यु की दिन–दिन बढ़ै हमारी।।

अब न दुख ही सहै धनवन्तरि के दुख के जन भारी।

गुड़ियों का सा खेल जंचे बीमारी।।

हम एक–एक का बहिनों हाथ बटावें।

सब मिटें देश के रोग लोग सुख पावें।।[19]

**(2) देशोद्धार–** भारत माँ के उद्धार हेतु कवयित्री विशेष चिंतित हैं तभी तो भारत के बाल वर्ग को उद्‌बोधित करती हुई कहती हैं–

हुआ सवेरा जागो भइया, खड़ी पुकारे प्यारी मय्या।

सब अपने धन्धे में लगे , पर तुम आलस ही में पगे।।

विद्या, बल धन धर्म कमाओ, भारत माँ का यश फैलाओ।।[20]

**(3) सदाचार व नीति–**कवयित्री ने जो कुछ भी लिखा है वह सदाचार व आदर्श का जीवित रखने के लिये लिखा। उन्हें यही अपेक्षित था कि भारत का प्रत्येक व्यक्ति कर्तव्यनिष्ठ, परोपकारी, शिक्षित व आदर्श स्तम्भ बने –

आओ जी भाई आज प्रतिज्ञा करें,

मात–पिता जो आज्ञा देवै, उसको सिर माथे पर लैवै।

निसि दिन में करे आओ जी भाई आज।

पढ़ने लिखन में चित लावै जिससे कभी न हम दुख पावै।

अच्छे गुण अनुहरै, आओ जी भाई आज।।[21]

**संदर्भ सूचीः–**


1. स्त्री कवि कौमुदी, पृ०–238
2. वही, पृ०–239–240
3. देवी, सरस्वती, सुंदरी सुपन्थ, पृ०–1
4. वही, पृ०–2
5. वही, पृ०–2
6. स्त्री कवि कौमुदी, पृ०–242
7. देवी सरस्वती, स्त्री कवि कौमुदी, पृ०–242
8. देवी सरस्वती, सुंदरी सुपन्थ, पृ०–2
9. वही, पृ०–4
10. वही, पृ०–8
11. वही, पृ०–17
12. शुक्ल, गिरिजादत्त, हिंदी काव्य की कोकिलाएं, पृ०–109
13. बाला, बुन्देला, स्त्री कवि कौमुदी, पृ०–256
14. वही, पृ०–250–251
15. वही, पृ०–256
16. स्त्री कवि कौमुदी, पृ०–254
17. वही, पृ०–252
18. देवी, गोपाल, स्त्री कवि कौमुदी, पृ०–260
19. वही, पृ०–260–261
20. वही, पृ०–261
21. वही, पृ०–262

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः43-50

# सामाजिक परिवर्तन में मीडिया की भूमिका

**–डॉ० ललित चंद्र जोशी**

पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, सोबन सिंह जीना परिसर, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

**सारांश**–मीडिया' समाज के वातावरण को मापने वाला मापक है। यदि यह कथन कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। 'मीडिया' समाज का आइना है। मीडिया जनता की संसद है जिसका अधिवेशन सदा चलता रहा है। मीडिया आज के दौर में प्रचार–प्रसार का एक शक्तिशाली माध्यम है। 'मीडिया' शब्द कहते ही हमारे मन–मस्तिष्क में कई दृश्य उभर कर आने लगते हैं। आज संपूर्ण विश्व मीडिया के मायाजाल में बंधा हुआ है। 'मीडिया' को लोकतंत्र का 'चतुर्थ स्तंभ' कहा जाता है। अगर लोकतंत्र के तीन स्तंभ उचित ढंग से कार्य नहीं कर पाते, उत्तरदायित्वों का निर्वह्न नहीं कर पाते तो मीडिया ही उत्तरदायित्वों का बोध कराता है। 'मीडिया' एक ऐसा मंच है जो जनसाधारण की बातों को सबके समक्ष पहुंचाता है। मीडिया रूपी संसद का कभी सत्रावसान नहीं होता। जिस प्रकार संसद में विभिन्न प्रकार की समस्याओं पर चर्चा की जाती है, विचार–विमर्श किया जाता है, सरकार का ध्यान आकृष्ट किया जाता है, ठीक उसी प्रकार मीडिया का स्वरूप भी व्यापक तथा बहुआयामी है। 'मीडिया' हथियार की भांति है। मीडिया की शक्ति इस बात से जानी जा सकती है कि नेपोलियन बोनापार्ट चार विरोधी अखबारों से जितना भयभीत रहता था, उतना चार बटालियनों से नहीं। इससे मीडिया की महिमा व महत्व प्रतिपादित होता है। मीडिया की शक्ति के विषय में अकबर इलाहाबादी ने सटीक ही कहा है–''खींचों न कमान को, न तलवार निकालो। जब तोप मुकाबिल हो तो अखबार निकालो।'' मीडिया सरकारों की कमियों को उजागर करता है और सामाजिक मुद्दों पर सरकार पर दबाव बनाता है। समाज में जागरूकता उत्पन्न करने में इसकी अहम् भूमिका है। मीडिया के माध्यम से ही भ्रष्टाचार, शोषण, हिंसा, अत्याचार, भुखमरी, एवं अन्य व्याधियों का खंडन होता है, उनसे पर्दा खुलता है।

**मूल शब्दः संचार, मीडिया, सामाजिक परिवर्तन, ग्लोबल ग्राम, समाज, सामाजिक मुद्दे।**

**प्रस्तावनाः**–वर्तमान युग 'संचार' का युग है। आज संपूर्ण विश्व सूचनाओं के आदान–प्रदान पर टिका है। सूचनाओं की दौड़ में मीडिया (संचार–माध्यम) एक प्रसाद की भांति है। मीडिया व्यक्ति से व्यक्ति, देश से देश व समाज से समाज जुड़ा रहता है। संचार चिंतन शाश्वत है। मानव का संचार से सबंध आज का नहीं, बल्कि पुराना है। आदिम सभ्यता में संचार विद्यमान रहा था और आज के युग में ''संचार का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया कि उसकी सीमाओं का निर्धारण करना असंभव है। संचार प्रक्रिया एक सामाजिक विज्ञान है। जिस पर अन्य सामाजिक विज्ञान खड़े हैं और इस सामाजिक विज्ञानों का आधार भी है। इसीलिए भारतीय संस्कृति ने मीडिया संचार को एक आवश्यक तत्व रूप में स्वीकारा है। आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व्यवस्थाओं के संचालन में इसका दायित्व

है। संचार के संबंध में डॉ० चंद्रप्रकाश मिश्र कहते हैं–''संचार परस्पर विचारों के आदन–प्रदान, जिज्ञासाओं के समाधान और प्रेरणा–प्रोत्साहन की प्रक्रिया है, जो किसी समुदाय, जाति, समूह, राष्ट्र आदि में घटित होती है।''[1] 'संचार एक प्रक्रिया है। ऐसी प्रक्रिया जिसमें व्यक्ति या समूह अपनी भावना एवं संवेग को अन्य व्यक्ति या समूह तक ऐसी सक्षमता से पहुंचाए, ताकि वे उसे समझकर या ग्रहण कर अपनी प्रतिक्रिया का बोध दिला सके।''[2]

'संचार' वह है, जब कोई बात किसी दूसरे तक संचारित हो और जिन माध्यमों से वह बात दूसरे तक पहुंचती है, उन्हें 'संचार माध्यम' अर्थात् 'मीडिया' कहते हैं। 'मीडिया' उच्चारण करने में जितना सरल है उतना ही समझने में जटिल। उसका विस्तार अधिक है। 'मीडिया' अंग्रेजी शब्द है और हिंदी भाषा में इसे 'संचार–माध्यम' कहा जाता है। संचार–माध्यम कई प्रकार के होते हैं। संचार माध्यमों की सहायता से सूचना संचालित की जाती है, या यूं कहें सूचना और संदेश को संचारित करने के लिए जो माध्यम हैं उसे 'संचार–माध्यम' कहते हैं। इस संचार माध्यम में शब्द, चित्र व ध्वनि, तीन तत्व होते हैं। संचार–माध्यमों से जो सूचना शब्द, चित्र, ध्वनि का प्रयोग लेकर निकल जाती है वह रोकी नहीं जा सकती। बच्चे, बूढे तक सभी उसके मायाजाल में फंस जाते हैं। संचार–माध्यम के कई प्रकार हैं लेकिन आज प्रिंट व इले० मीडिया ने पूरे विश्व को अपने शिकंजे में जकड़ दिया है।

आज संसार सूचनाओं के आदान–प्रदान पर टिका है। सूचनाओं की इस दौड़ में 'संचार–माध्यम' अर्थात् मीडिया एक आशीर्वाद के समान है। 'मीडिया' ऐसा सूत्र है जिसके द्वारा व्यक्ति से व्यक्ति, समाज–से–समाज और देश से देश जुड़ा रहता है। इस वैश्वीकरण के युग में संचार मानव समाज का आधार है। संचार के द्वारा ही मानव–मानव के मध्य सामाजिक संबंध विकसित होते हैं। यूं तो संचार–माध्यम के कई प्रकार हैं लेकिन आज प्रिंट मीडिया, इलै० मीडिया ने पूरे विश्व को अपनी जकड़ में ले लिया है। हर वर्ग इससे प्रभावित है। मीडिया प्रत्येक वर्ग के दैनिक जीवन में हस्तक्षेप करता है। आवागमन के माध्यम जैसे हवाई जहाज, रेल, गाड़ी, बाइक आदि के माध्यम से व्यक्ति संचार के किसी भी कोने में थोड़े से समय में आ जा सकता है। राष्ट्र की सीमाओं से दूर अंतरराष्ट्रीय सीमाओं पर भी जाकर लौट सकता है, वहीं संचार के माध्यमों के माध्यम से वहां की संस्कृति, सभ्यता, इतिहास के बारे में आदान–प्रदान कर सकता है। ''पहले हम पुस्तक, फोटोग्राफ्स व स्लाइड्स के द्वारा इतिहास व कलाकृतियों की जानकारी प्राप्त करते थे। आज दुनिया की किसी भी घटना का प्रसारण टी०वी० के द्वारा देखा जा सकता है। इंटरनेट द्वारा देश–विदेश के संग्रहालयों, कलावीथियों में हो रही प्रदर्शनियों व अन्य गतिविधियों का सीधे साक्षात्कार किया जा सकता है। सभी कुछ इंटरनेट पर उपलब्ध है। सभी देश आपसी सांस्कृतिक आदान–प्रदान द्वारा कलाकारों, कवियों, सिने कलाकारों, वैज्ञानिकों आदि विषयों के विद्वानों को आपसी संवाद एवं अपनी संस्कृति का अवलोकन करवाने का अवसर प्रदान करवाते हैं।''[3]

मीडिया को लार्ड मैकाले ने चौथी सत्ता के नाम से संबोधित किया है और अब्राहम लिंकन ने लोकतंत्र को जनता के लिए, जनता द्वारा और जनता की सरकार बताया है तो यह जानना

आवश्यक है कि ये चार खंभे कौन से हैं? लोकतंत्र के चार स्तम्भ–न्यायपालिका, कार्यपालिका, विधायिका तथा चौथा–स्तंभ हैं। 21वीं सदी के उत्तरार्द्ध मीडिया ने अपनी–अपनी भूमिकाओं में बदलाव किया है। भूमंडलीकरण ने दोनों के कलेवर को काफी बदला है। हरिमोहन के अनुसार मीडिया का अर्थ–बड़ी संख्या में लोगों के साथ संप्रेषण का मुख्य साधन या माध्यम, विशेष रूप से टी०वी०, रेडियो और समाचार–पत्र।

**जनसंचार माध्यमः** 'जनसंचार' दो शब्दों के मेल से निर्मित है–'जन' अर्थात् जनता और संचार का अर्थ किसी बात को आगे बढ़ाना, चलाना या फैलाना', मानव या लोक–जीवन की गतिमयता'। इस दृष्टि से 'जनसंचार' का अर्थ है–'सूचना को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाना। हर व्यक्ति, हर समाज में संचार गतिमान रहता है। संचार की विभिन्न प्रक्रियाएं आंतरिक एवं बाह्य दोनों ही स्तर पर संपन्न होती है। यदि हम किसी जानकारी को समूह से समूहों में पहुचाने के लिए माध्यमों का सहारा लेते हैं तो उन्हें 'माध्यम' या 'मीडिया' कहते हैं। 'मीडिया' माध्यम का बहुवचन है। 'माध्यम' का सामान्य अर्थ है–'वह साधन जिससे कुछ अभिव्यक्त तथा संप्रेषित किया जाए।' संप्रेषण के लिए कुछ साधनों या उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। ये साधन 'माध्यम' कहलाए जाते हैं। सूचना एवं प्रौद्योगिकी ने संचार को आसान बनाया है। पत्रकारिता एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जनसंचार पारिभाषिक शब्द रूप में स्थापित हुआ है। 'जन' और 'संचार' दो भिन्न शब्दों के योग से मिलकर बना है। जनसंचार को समझने के लिए 'जन' और 'संचार' को समझना आवश्यक है–

(1) **जन**–जन को ब्लूमर ने मुख्य रूप से इसके तीन अर्थ स्वीकार किए हैं–समूह, भीड़ और समुदाय। समूह–किसी विशेष उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कई लोगों का एकत्र होना समूह है। समूह के लोग एक–दूसरे को जानते हैं, क्योंकि वे लोग आपस में मिलते रहते हैं। जनता–जनता विशाल जन–समुदाय है। जनता की डेमोक्रेटिक समाज में सक्रिय भूमिका होती है। यह अपनी विशिष्ट सोच के आधार पर सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेती है और राजनीतिक मुद्दों पर अपना मत रखते हुए उसमें परिवर्तन के लिए संघर्ष करती है। भीड़–जनता का एक रूप 'भीड़' भी है। 'समूह' से यह कई बड़ा होता है। इसके सदस्य आपस में एक–दूसरे को नहीं जानते। इसका अस्तित्व भी स्थाई नहीं होता। यह किसी विशेष कार्य से एकत्र होते हैं और फिर बिखर जाते हैं। भावावेश में यह एकत्र होते हैं। समुदाय–अनेकों समूहों से समुदाय बनता है। कई समूह एक साथ एक्टिव होकर समुदाय के हित के लिए लड़ते हैं। यह भीड़ से भिन्न होती है। इसकी दिशा निश्चित होती है।

**(2) संचार–** 'संचार मानव जीवन का एक बहुत महत्वपूर्ण अंग है। संचार जीवित व्यक्ति में होता है। इसके बिना मानव जीवन की कल्पनामात्र भी करना कठिन है। संचार जीवन का पर्याय है। संचार 'मानव के विचारों, भावनाओं के आदान–प्रदान की एक प्रक्रिया है। दो या दो से अधिक लोगों के बीच अर्थपूर्ण संदेशों का आदान–प्रदान ही 'संचार' है।

दृश्य–श्रव्य, श्रव्य माध्यमों का अपनी बात को पहुंचाने के लिए प्रयोग किया जाता है। जिनको हम 'जनमाध्यम' कहते हैं। जनमाध्यमों में–मुद्रण माध्यम (समाचार–पत्र, पत्रिकाएं, जर्नल, पुस्तकें, पम्फलेट आदि) व इलै० माध्यम (रेडियो, फिल्म, टी.वी., वी.सी.डी. कैसेट है। नव इलै. माध्यम (उपग्रह, कंप्यूटर, इंटरनेट आदि)।

''भारतीय समाज एक विकासशील समाज है और ऐसे समाजों में संक्रमण की गति तीव्र होती है। उच्च तकनीकी और सम्प्रेषण माध्यमों ने इसे इतना बढ़ा दिया है कि पहले जितना बदलाव एक शताब्दी में घटित होता था, उससे ज्यादा अब एक दशक में घटित हो जाता है। संस्कृति से जुडे तमाम उपादानों को संक्रमण के समानांतर चलना पड़ता है।''[4]

हम आज तकीनीक की दुनिया में प्रवेश कर चुके हैं। समूचा विश्व तकनीक पर आधारित है। प्रत्येक देश तकनीकी रूप से अपने को समृद्ध बनाना चाह रहा है। यदि वह ऐसा कर पाता है तो वह विकसित देशों की श्रेणी में आ जाएंगे। डिजिटल होते समय में हम निरंतर बदल रहे हैं। हमारे काम करने का तौर–तरीका परंपरागत तरीके से बिल्कुल पृथक होता जा रहा है। संचार उपकरणों ने जीवन को बदल कर रख दिया है। संचार विशेषज्ञ डॉ० कुमुद शर्मा कहती हैं–उच्च प्रौद्योगिकी के चलते संचार–क्रांति के क्षेत्र में सूचना तकनीक में बड़ी तेजी से बदलाव आए हैं और भविष्य में इस क्षेत्र में उल्लेखनीय परिवर्तनों की संभावना है। सूचना तकनीक के अंतर्गत कंप्यूटर इंटरनेट और डिजिटल प्रेषण तकनीक के महत्व को भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में जरा भी कम करके नहीं आंका जा सकता। ये सभी सूचना तकनीकें मनुष्य के सामाजिक और आर्थिक जीवन में बदलाव की भूमिका निभा रही हैं। सूचना तकनीक के केंद्रीय तत्व 'तीव्रगामिता' ने मनुष्य के जीवन को भी तेज कर दिया है। सूचना क्रांति का ही परिणाम है कि भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में 'विश्व बाजार' वस्तुतः 'भूमंडलीय बाजार' में तब्दील हो गया है। सामुहिकता का दायरा संकीर्ण होता जा रहा है। सामुहिकता पर निजता हावी होती जा रही है। सामाजीकरण और प्रक्रिया पूर्णतः यांत्रिक होते जा रहे हैं और यंत्र में मनुष्य के मन का आर्द्रता, संवेदनशीलता और मार्मिकता को पहचानने की शक्ति नहीं होती। उसमें कार्य की गति तीव्र हो सकती है लेकिन भावावेग की नहीं। यत्रों में तथ्यों के संग्रहण की क्षमता हो सकती है। उसके प्रदर्शन की क्षमता हो, औचित्य–अनौचित्य का विवेक नहीं हो सकता।'[5]

ग्लोबल ग्रामः एक जगह से दूसरी जगह जाने में हमें पहले सालों लग जाते थे, किंतु आज दूरदर्शन ने पूरा विश्व घुमा दिया है। इन संचार माध्यमों के कारण संपूर्ण विश्व एक ग्लोबल गांव के रूप में परिलक्षित हो गया है। विश्व की संस्कृति, धरोहर, इतिहास आदि से भेंट करवा दी है।

डिजिटल क्रांतिः उच्च प्रौद्योगिकी के चलते संचार–क्रांति के क्षेत्र में सूचनाओं का विस्फोट हुआ है। तेजी से सूचना तकनीक बदली है। सूचना तकनीकों के अंतर्गत कंप्यूटर, इंटरनेट और डिजिटल प्रेषण तकनीकों के महत्व को भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में जरा भी कम करके नहीं आंका जा सकता। ये सभी सूचना तकनीकें मनुष्य के सामाजिक और आर्थिक जीवन में भी बदलाव की

भूमिका निभा रही हैं। टोनी फैल्डमैन ने 1997 में यह कथन कहा था कि–डिजिटल क्रांति की अवधारणा मनुष्य के प्रतिरूप को दरवाजे से निकालकर एक अनजान या मौलिक रूप से परिवर्तित भविष्य में स्थापित करना है और यह एक ऐसे एकतरफा दरवाजे से यात्रा है। जिससे हम अतीत के आरामदेह प्रचार माध्यमों की निश्चितताओं की ओर वापस नहीं लौट सकते। अमेरिकी फेडेरल कम्युनिकेशंस कमीशन के चेयरमैन रीड हंट ने भी कहा था कि बदलाव इतना अतिवादी होगा कि लोगों के लिए उसे पचा पाना कठिन होगा। माइक्रोसॉफ्ट के बिल गेट्स ने भी कहा था कि हमारा उद्योग लोगों की व्यवसाय करने की पद्धति को परिवर्तित कर देगा। जिस तरह से वे सीखते हैं और जिस तरह से वे अपना मनोरंजन करते हैं, उस तरीके में भी बदलाव लायेगा।

आज से कुछ साल पहले मीडिया प्लेटफार्म कम थे। यह वह दौर था, जब संपादक यह दंभ पाला करते थे या यह दंभ पाल सकते थे कि सरकारों के बनने–बिगाड़ने और कैबिनेट गठन तक में उनकी भूमिका होती है। उसे पत्रकारिता का तो नहीं, लेकिन बड़े पत्रकारों और संपादकों का स्वर्ण युग कहा जा सकता है। ''पिछले 25 सालों में मीडिया परिदृश्य पूरी तरह बदल चुका है। आज लगभग एक लाख प्रिंट मीडिया उत्पाद आपस में होड़ कर रहे हैं। इनके साथ लगभग 600 चैनल सक्रिय कदमताल कर रहे हैं और इन सब से ऊपर वे लाखों–करोड़ों, फेसबुक, ट्विटर और ब्लॉग्स के महारथी हैं जो अपनी बात लगातार लिख और बता रहे हैं। एक अनुमान के मुताबिक धरती पर मनुष्य के आने से लेरक 2003 तक जितना कुछ संवाद हुआ है। उतना संवाद अब हर साल होता है और इसमें इंटरनेट की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह संवाद निरंतर बढ़ रहा है।''[6]

अब अक्सर सबसे पहली खबर परंपरागत मीडिया नहीं देता। 'लादेन के मारे जाने की पहली खबर किसी चैनल या समाचार पत्र पर नहीं बल्कि ट्वीटर पर आई और ऐसा अब अक्सर होता है। आज कई नेता अपने बयान संवाददाता सम्मेलन में नहीं, ट्विटर पर दे रहे हैं। प्रेस इंफॉर्मेशन ब्यूरो और राज्य का जनसंपर्क विभाग एक समय तक सरकारी खबरें सिर्फ मान्यता प्राप्त पत्रकारों को देते थे। अब वे खबरें सीधे इंटरनेट पर डाली जा रही हैं। जहां तक हर किसी की समान पहुंच है और इसके लिए पत्रकार होना कतई जरूरी नहीं है, यानी आप हम सबकी सरकारी सूचनाओं तक एक साथ और एक ही समय में पहुंच है।[7]

आज किसी भी गलत खबर की चीरफाड़ मिनटों में हो जाती है और खबरों की मोर्चरी में भीड़ बढ़ती जा रही है। गलत खबर देकर बच निकलना आज पहले से कहीं ज्यादा मुश्किल है। इसलिए पत्रकारों को चाहिए कि ऐसी खबर दें या चलाएं जो सत्य हो, जिसमें कोई बनावटीपन न हो। ऐसे में पत्रकारों और पत्रकारिता की मांग बढ़ी है। एक प्रचलित मीडिया साधन के रूप में मोबाइल ने संचार को आसान किया है। मोबाइल, कम्प्यूटर ही आज हमारे जीवन का हिस्सा बन रहे हैं। मनोरंजन के साथ निरर्थक चीज प्रस्तुत कर रहे हैं। 'फिल्मों में मारपीट, हिंसा, गाली–गालौच का बच्चों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। ब्रजेन्द्र त्रिपाठी भी नकारात्मक स्थिति पर अपनी बात रखते हुए कहते हैं, ''कम्प्यूटर की दुनिया में ऐसे असंख्य गेम, कार्यक्रम, फिल्म और धारावाहिक हैं जो

समूची जीवनशैली को बदल डाल रहे हैं। इसका प्रतिफल भी हमारे सामाजिक जीवन पर पड़ रहा है।''[8]

वर्तमान समय में विश्व एवं संचार दोनों परस्पर एक हो गए हैं। विश्व का दर्शन ही जनमाध्यमों द्वारा पैदा की गई दृष्टि से होता है। जनमाध्यमों 'मीडिया' द्वारा उत्पन्न इस दृष्टि के कारण एक देश का नागरिक शत्रु राष्ट्र एवं मित्र राष्ट्र के रूप में विभिन्न देशों को देखता है। यह मीडिया की ही देन है कि आज विश्व सिमट गया है। समय और स्थान की दूरी घट गई है और विश्व एक गांव में बदल गया है।'[9] मीडिया के माध्यमों में रेडियो, टी०वी०, सिनेमा आदि हैं। मीडिया के प्रिंट व इलै० माध्यमों द्वारा दैनिक, साप्ताहिक, समाचार–पत्रों के माध्यम से समाचार तथा विविध जानकारियों को पहुंचाया जा रहा है। पत्र–पत्रिकाओं से खेल, व्यापार, वाणिज्य, साहित्य, रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य की खबरें जनमानस को मिलती हैं। इस माध्यम से युवा, महिला एवं बुजुर्ग अपनी–अपनी रुचि के समाचारों को ग्रहण कर लेते हैं। उनका प्रभाव अलग–अलग वर्ग पर अलग–अलग पड़ता है। बच्चों के लिए कार्टून–खेल, सामान्य जानकारी युवा वर्ग के लिए रोजगार, खेल, स्वास्थ्य, फिल्म, महिलाओं के लिए पाकशाला, कताई–बुनाई, मनोरंजन एवं बुजुर्गों के लिए धार्मिक, यौगिक, वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकी, कृषि आदि से जुड़ी जानकारी प्राप्त होती है।

इलै० मीडिया, जनसंचार का प्रमुख अंग है। रेडियो, टी०वी०, फोन, फैक्स, इंटरनेट आदि इसके तहत आते हैं। इंटरनेट के माध्यम से स्टॉक, शिक्षा, बाजार, चिकित्सा, खेल आदि से जुड़ी विशिष्ट जानकारियां, देश–विदेश की संस्कृति, तकनीक, गतिविधियां की जानकारी हर वर्ग के लोगों को प्राप्त हो रही है। कम समय में एक–दूसरे से चैट, कॉल, मेल, ब्लॉग आदि की सुविधाएं भी प्राप्त हो रही हैं। जो समाज का विकास कर रही हैं। जनता को जागरुक कर रही हैं। टी०वी० भी कई तरह की जानकारी जनता तक पहुंचाता है। टी०वी० में सिनेमा, धारावाहिक, विज्ञापन के साथ जानकारी, सूचना आदि प्रसारित होते हैं। जिनका प्रभाव पड़ता है। रेडियो के कार्यक्रमों को भी जनमानस द्वारा काफी पंसद किया जाता है। मोबाइल में भी रेडियो को लोगों ने सुना है, साथ ही आयपॉड, इंटरनेट, मिनी रेडियो सेट से भी रेडियो के कार्यक्रम ट्यून करने वालों की संख्या बढ़ी है। रेडियो पर केवल फिल्मी गीत ही कार्यक्रम प्रसारित नहीं होते, बल्कि ऐसे कार्यक्रम भी आते हैं, जिनमें श्रोताओं की रुचि होती है। सूचनाएं, साहित्यिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, राजनीतिक, आर्थिक, समाजिक, खेल, समसामयिक विषयों के कार्यक्रम संचालित होते हैं। रेडियो का हर समाज पर काफी प्रभाव पड़ता है। हर वर्ग और हर उम्र के लोगों के लिए रेडियो पर कुछ–न–कुछ कार्यक्रम होते हैं।

संचार के इस युग में पत्रकारिता संस्थानों की भी भरमार हुई है। हर दिन विज्ञापन जगत, मीडिया संस्थानों की ओपनिंग हो रही है, क्योंकि लोगों से काम निकालने, ठगने, सरकारी कर्मियों से अपनी भड़ास निकालने, नेतागिरी करने, व्यवसाय को चमकाने, गुंडई करने, कालाबाजारी करने आदि में इसका प्रयोग किया जा रहा है। इसे समाज के इस पहरूए पर भी भरोसा निरंतर उठता चला जा रहा है। आज यदि खबरों की हैडिंग को देख हम यह अनुमान लगा लेते हैं कि तंत्र में क्या

घटित हो रहा है? किस व्यक्ति ने किसके साथ बदसलूकी की, लेकिन सत्य घटना कुछ और ही होती है। सवाल उस पर उठते है, जिसने कुछ किया ही नहीं। संचार साधनों पर जनता ने विश्वास भी जताया है। आज हर जगह इन संचार माध्यमों का विस्तार देखा जा रहा है। हमारे देश में संचार माध्यमों का काफी विस्तार हुआ है

आज संचार साधन अपनी पकड़ बनाये हुए हैं। आज भारत में 25.15 करोड़ से अधिक इंटरनेट उपभोक्ता मौजूद हैं। बेशक अत्याधुनिक माध्यमों के दौर में लोगों ने रेडियो सैट रखना छोड़ दिया है, लेकिन आकाशवाणी की पहुंच देश के 92 फीसदी इलाकों तक है। आकाशवाणी का जनसंपर्क काफी है। वह लोक से जुड़ा हुआ है। ग्रामीण जनता रेडियो अधिक सुनती है। रेडियो, टी० वी०, अखबार में हम अपने देश की छवि को देख सकते हैं। जनसंचार माध्यमों ने भारतीय संस्कृति के अलावा पाश्चात्य संस्कृति को दिखलाया है जो हमारी संस्कृति के लिए घातक है। पश्चिमी संस्कृति हमारी संस्कृति के हित में नहीं रही है क्यों कि यहां की संस्कृति काफी भिन्न है। मीडिया फूहड़ता को पेश कर अपने को गौरवांवित महसूस कर रही है। मीडिया ने ग्रामीण एवं नगरीय संस्कषति के ठीक पहलुओं पर ध्यान न देकर विखण्डनकारी शक्तियों को और बढ़ावा दिया है। ''आधुनिक जनसंचार माध्यम तथा तकनीक द्वारा संचार प्रसार तथा प्रसारण की अभिनव विधाओं का संजाल हमारे चारों ओर फैल चुका है। स्थिति अब यह हो गई है कि यह मीडिया हमारी दिनचर्या को भी नियंत्रित करने लगा है।''[10] आबाद जाफरी कहते हैं कि आजादी से पहले पत्रकारिता एक आग का दरिया थी। अंग्रेज हुकूमत की दमनकारी नीतियों और दण्डात्मक प्रवृत्ति के कारण, जबती, कुर्की, वारंट, दण्ड और कारावास का खौफ रहता था। तत्कालीन पत्रकारों को अंगेजी का ज्ञान था और उनमें अधिकांश वकील थे, जो अंग्रेजों के कानून की तमाम बारीकियां जानते थे। योरोप के कई अखबार देश में आते थे। मिस्र में फ्रांसिसी प्रमुख था और दक्षिण–पूर्वी एशिया में योरोपीय शक्तियां सक्रिय थीं। काहिरा का अरबी अखबार 'अल–अहराम' बहुत लोकप्रिय और प्रभावशाली था।'[11]

जब हम मीडिया पर इतना भरोसा जतला रहे हैं तो उसकी जिम्मेदारियां और अधिक हो जाती हैं। मीडियाकर्मियों की इसमें और अधिक जिम्मेदारियाँ बढ़ गई हैं। ऐसे में आवश्यकता है कि वे चुनौतियों का डटकर सामना करें और सामाजिक सरोकारों से जुड़ी पत्रकारिता करें। आज हम संचार के पांचवे चरण में खड़े हैं। जिसमें अत्याधुनिक संचार माध्यमों के द्वारा 'पारस्परिक क्रियात्मक संचार प्रणाली' पर विशेष जोर दिया जाता है। इन सूचना संसाधनों का आधा तबका फायदा नहीं उठा पाया है। राजनैतिक साहूकारों, पूंजीपतियों, बिल्डरों की इसने सेवा की है। 'इन सूचनाओं ओर इनमें निहित ज्ञान का इस्तेमाल शोषणकारी व्यवस्था को मजबूत करने के लिए ही अधिक किया जा रहा है, जबकि मीडिया का उपयोग जनता के हित में, व्यवस्था को संचालित करने में, लोकतांत्रिक स्वरूप को बचाये रखने में की जानी चाहिए। जिस तरह से कंपनियां भारत में प्रवेश कर रही हैं, ऐसे में मीडिया पर इन कंपनियों की जबरर्दस्त पहुंच हो गयी है। इसके अलावा साहित्य, संस्कृति, समाज आदि में भी इसका असर है। यह भारत के लिए चुनौती भी है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मीडिया ने सामाजिक परिवर्तन करने, विकास करने,जनता को जागरूक करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मीडिया ने एक ग्राम क्षेत्र को विश्व से जोड़ दिया है।

**संदर्भ सूचीः**


1. *मिश्र डॉ० चंद्र प्रकाश, मीडिया लेखनः सिद्धांत और व्यवहार, पृ०–24*
2. *सरदाना, चंद्रकांत व महता, कृ० शि०, जनसंचारःकल, आज और कल, पृ०–15*
3. *शर्मा, भवानी शंकर, परम्परा व आधुनिकतावाद', (आलेख) मधुमती, संपा० वेद व्यास*
4. *सालोदिया, मधुमती, राजस्थान साहित्य अकादमी, जनवरी 2011, पृ०–23*
5. *उमराव शर्मा, भूमंडलीकरण और मीडिया, ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली, 2003, पृ०–54*
6. *राय, अजित, दृष्यांतर, मीडिया की विश्वसनीयता, पृ०–17*
7. *वही, पृ०–17*
8. *त्रिपाठी ब्रजेन्द्र (संपा.), आलोक, साहित्य अकादमी राजभाषा पत्रिका, अंक 18, मार्च, 2013–पृ०–7.*
9. *रिपोर्ट हूपर, ह्यूमन कॉम्युनिकेशन सिस्टम, हार्पर एंड रॉ पब्लिशर, न्यूयॉर्क, 1976, पृ०–268–27*
10. *त्रिपाठी, बजेंद्र (संपा.), आलोक–साहित्य अकादमी राजभाषा पत्रिका, अंक 18, मार्च 2013, पृ०–7*
11. *पाण्डे, लोकेश कुमार (संपा.), एक दगड़िया 'साप्ताहिक समाचार पत्र', 23 मई, 2015, तल्ली नैनीताल, पृ०–8*

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः51-56

# स्वातंत्र्योत्तर हिंदी सिने–गीतों में राष्ट्रीय चेतना

**–डॉ० राजेश कुमार**

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, रोहतक

♦♦♦

फिल्मों में देशभक्ति गीत सर चढ़ कर बोलने लगे।"[6] इस समय के प्रमुख गीत हैं– "कदम–कदम पे हमने जो जिल्लतें सहीं हिंदोस्ताँ आजाद" और "झंडा हमारा यह सदा ऊंचा ही रहेगा,"[7] "जाग उठा है हिंदुस्तान", "मेरे चरखे में जीवन का राग सखी", "भारत जननी तेरी जय हो" और "विश्व विजयी तिरंगा प्यारा झंडा ऊंचा रहे हमारा,"[8] "हे भारत के नर–नारी कैसी बिगड़ी दशा तुम्हारी ", "आपस के झगड़े दूर करो, इंसान बनो इंसान बनो" और "तुम गौर करो गौर करो हिंदू–मुसलमान,"[9] "जाग उठा है देश हमारा" और "आजाद हो गया है हिंदुस्तान हमारा,"[10] "अब डरने की बात नहीं अंग्रेजी छोरा चला गया,"[11] "क्विट इंडिया चले जाओ हिंद महासागर की लहरें" और "जगमग भारत माँ का मंदिर।"[12] इसी वर्ष भगतसिंह के जीवन पर रमेश सहगल द्वारा निर्देशित फिल्म 'शहीद' का प्रदर्शन हुआ। इसमें राजा मेहंदी अली खां का लिखा एवं मोहम्मद रफी तथा साथियों की आवाज में गाया गया गीत "वतन की राह में वतन के नौजवान शहीद हो" संपूर्ण देश में अत्यंत लोकप्रिय हुआ। महात्मा गाँधी की याद में रफी द्वारा गाया गया "सुनो सुनो ए दुनिया वालों बापू की यह अमर कहानी"[13] भी अत्यंत सशक्तगीत है। "दे दी हमें आजादी बिना खड़ग, बिना ढाल। साबरमती के संत तूने कर दिया कमाल"[14] बापू को समर्पित एक अद्वितीय गीत है।

मोहम्मद रफी ने आगे चल कर भी राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत अनेक गीत गाए, जैसे– "हम लाए हैं तूफान से किश्ती निकाल के,"[15] "ये देश है वीर जवानों का,"[16] "जहाँ डालडाल पर सोने की चिड़िया करती है बसेरा, वो भारत देश है मेरा,"[17] "वतन पर जो फिदा होगा, अमर वो नौजवाँ होगा" तथा "अपनी आजादी को हम हरगिज मिटा सकते नहीं,"[18] "कश्मीर है भारत का, कश्मीर ना देंगे",[19] "उस मुल्क की सरहद को कोई छू नहीं सकता, जिस मुल्क की सरहद की निगेहबान हैं आँखें,"[20] "ताकत वतन की हम से है, हिम्मत वतन की हम से है,"[21] "आपस में प्रेम करो मेरे देश प्रेमियों"[22] आदि। उनके द्वारा गाया गया फिल्म 'हकीकत' का गीत" कर चले हम फिदा जानोतन साथियों"[23] तो आज भी श्रोताओं के मन में देशप्रेम की हिलोरें उत्पन्न कर देता है ! इस गीत में गीतकार जहाँ एक और शहीदों के बलिदान को याद करते हैं वहीं दूसरी और युवाओं को प्रेरणा देते हैं–"खींच दो अपने खूँ से जमीं पर लकीर, इस तरफ आने पाए ना रावण कोई। काट दो हाथ अगर हाथ उठने लगे, छूने पाए ना सीता का दामन कोई। राम भी तुम , तुम्हीं लक्ष्मण साथियों !" सन् 1952 के चीनी आक्रमण के समय निर्माता–निर्देशक महबूब खान ने मोहम्मद रफी की आवाज में राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले दो मल्टीस्टार गीत जारी किए। पहला गीत था "आवाज दो हम एक हैं, आवाज दो हम एक हैं" और दूसरा" वतन की आबरू खतरे में है, होशियार हो जाओ।" इन गीतों के सभी कलाकार सिने–जगत् से संबद्ध थे। "इन दो गीतों ने देश को कुर्बानी और एकजुटता के जिस जज्बे से भर डाला था वह किसी बड़े से बड़े नेता की किसी तकरीर से कभी न हुआ होगा।"[24] बंकिमचंद्र चटर्जी के उपन्यास पर आधारित फिल्म 'आनंदमठ' (1952) का गीत ''वंदेमातरम'' तो हमारा राष्ट्रगीत ही बन गया है।

सपनों के सौदागर कहे जाने वाले फिल्मकार राजकपूर ने भी अपनी फिल्मों के माध्यम से देश प्रेम और राष्ट्रीयता का संदेश दिया है। ''मेरा जूता है जापानी, ये पतलून इंग्लिस्तानी''[25] "हम उस देश के वासी हैं'' और ''आ अब लौट चलें, बाहें पसारे, नैन बिछाए तुझको बुलाए देश तेरा''[26] ऐसे ही गीत हैं। उनकी फिल्म 'फिर सुबह होगी 'के गीत ''चीनो अरब हमारा, हिंदुस्ताँ हमारा। रहने को घर नहीं है ,सारा जहाँ हमारा''[27] में समाजवाद के ह्रास एवं पूंजीवाद के विकास को दर्शाया गया है–''जितनी भी बिल्डिंगें थीं , सेठों ने बाँट ली हैं। फुटपाथ बम्बई

के , हैं आशियाँ हमारा।'' परंतु फिर भी गीतकार आश्वासत है कि–''मिलजुल के इस वतन को ऐसा सजाएँगे हम, हैरत से मुँह तकेगा, सारा जहाँ हमारा।"

देश प्रेम पर आधारित फिल्में बनाने वालो में जिस फिल्मकार का नाम सर्वाधिक उल्लेखनीय है, वे है मनोज कुमार। उनकी पहली ही निर्मिती 'शहीद' देश प्रेम को समर्पित फिल्म थी। शहीदे–आजम भगतसिंह के जीवन पर आधारित इस फिल्म के गीतकार–संगीतकार थे–प्रेम धवन। इससे पहले वे 'काबुलीवाला' (1961) में "ए मेरे प्यारे वतन, ऐ मेरे बिछड़े चमन" जैसा देशानुराग से भरा गीत लिख चुके थे। 'शहीद' के गीत तो उनकी विशेष उपलब्धि हैं। "ए वतन, ए वतन हम को तेरी कसम" जैसे गीतों में रफी ने जैसे स्वयं को उड़ेल दिया है। फिल्म में अनेकशः आने वाले इसके अंतरे देश भक्त क्रांतिकारियों की भावनाओं व आशा–आकाँक्षाओं की मार्मिक अभिव्यक्ति करते हैं। इसी फिल्म का एक अन्य गीत "मेरा रंग दे बसंती चोला" तो राष्ट्रीयता का पर्याय बन चुका है। "बड़ा ही गहरा दाग़ है यारों, जिसका गुलामी नाम है। उसका जीना भी क्या जीना, जिसका देश गुलाम है–"जैसी पंक्तियाँ स्वतंत्रता चेतस् व्यक्ति के लिए आज भी प्रेरणा–स्रोत हैं। "सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है", रामप्रसाद बिस्मिल की ग़ज़ल है जो फिल्म में एक गुनगुनाहट के साथ शुरू होती है और एक संकल्प, एक आत्मविश्वासपूर्ण गान में ढल जाती है। "मेरा रंग दे बसंती चोला" गीत अलग बोल व धुन के साथ सन् 2002 में प्रदर्शित 'द लीजेंड ऑफ भगत सिंह' में भी आया, परंतु उतना प्रभावी नहीं हो सका।

'जय जवान–जय किसान' के नारे पर बनाई गई मनोज कुमार की दूसरी फिल्म 'उपकार' मातृभूमि के प्रति कृतज्ञता के भाव से भरी हुई फिल्म है। इसमें गुलशन बावरा की कलम से निकला ",मेरे देश की धरती सोना उगले, उगले हीरे मोती" तो राष्ट्रीयता का गौरव–गान बन गया है। यह गीत देश की शस्य – श्यामला भूमि और उसकी रक्षा के लिए सब कुछ उत्सर्ग कर देने वाले प्रतापी वीरों की अनन्य गाथा है। समकालीन स्वार्थपरता को उद्घाटित करने वाले गीत "कसमे वादे प्यार वफा सब बाते हैं, बातों का क्या"[28] के द्वारा गीतकार राष्ट्रीय एकता एवं सांप्रदायिक सद्भावना का संदेश भी देते हैं–"काम अगर ये हिंदू का है मंदिर किसने लूटा है, मुस्लिम का है काम अगर ये खुदा का घर क्यूं टूटा है?" सांप्रदायिकता का पोषण करने वाला ऐसा धर्म भला किस काम का–''जिस मजहब में जायज है ये, वो मजहब तो झूठा है।" धार्मिक एकता एवं सद्भावना का पोषण करके राष्ट्रीय भावना को जगाने वाले और भी अनेक यादगार गीत हिंदी सिनेमा ने दिए हैं, जैसे–"तू हिंदू बनेगा, न मुसलमान बनेगा,"[29] "क्या डालेगा तू फूट ये घर है कबीर का, झगड़ा कभी हो नहीं सकता तुलसी से मीर का। जो फूल चमन का है चमन पर ही मिटेगा, अब्दुल हमीद अपने वतन पर ही मिटेगा। मजहब़ के नाम पर ये मुल्क बँट नहीं सकता, ये जिस्म है भारत का, कभी कट नहीं सकता,"[30] "ए रहबर मुल्क–ओ–कौम बता, ये किसका लहू है कौन मरा, "[31] "अब्दुल उसके बच्चों को पाले, लौट के घर जो राम ना आए। देखो वीर जवानों अपने खून पे ये इल्जाम ना आए,"[32] "हिंदू–मुस्लिम–सिख–ईसाई हम वतन हम नाम हैं। जो करे इनको जुदा, मजहब नहीं इल्जाम है"[33] आदि। मनोज कुमार की ही फिल्म 'पूरब और पश्चिम' में महेंद्र कपूर द्वारा गाए गए राष्ट्रीय चेतना से ओत प्रोत दो अनन्य गीत समाहित हैं, " है प्रीत जहाँ की रीत सदा, मैं गीत वहाँ के गाता हूँ", और "दुल्हन चली, पहन चली तीन रंग की चोली।"[34] देश की समृद्ध परंपरा के दृश्यों, स्वतंत्रता सेनानियों के चित्रों एवं गणतंत्र दिवस की झाँकियों ने इन गीतों में अनेकता में एकता के भाव भर दिए हैं– "हों कोई हम प्रांत के वासी, हों कोई भी भाषा–भाषी, सब से पहले हैं भारतवासी।"

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की पृष्ठभूमि पर बनी फिल्म 'क्रांति' में मनोज कुमार ने कथानक के साथ–साथ गीतों के माध्यम से भी देश भक्ति का संदेश दिया और राष्ट्रीय चेतना को जगाया। इस संदर्भ में "अब के बरस तुझे धरती की रानी कर देंगे", "चना जोर गरम, बाबू में लाया मजेदार" तथा "दिलवाले, दिलवाले तेरा नाम क्या है क्रांति, क्रांति"[35] विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन गीतों के अंतरे "देश का हर दीवाना अपने प्राण चीरकर बोला, बलिदानों के खून से अपना रंग लो बसंती चोला", "मेरा चना खा गए गोरे ,गोरे, जो गिनती में हैं थोड़े, ओ फिर भी मारें हमको कोड़े , लाखों कोड़े टूटे फिर भी टूटा ना दम–खम" तथा "माँ वारी जाए, बलिहारी जाए ,जब देश पे बेटा खून बहाए" मातृ भूमि के प्रति जोश ही नहीं, भावनात्मक प्रेम का भी संचार करते हैं।

मनोज कुमार ने देश भक्ति की भावना को गीत–संगीत में आबद्ध करके जनमानस के अंतस् में बैठा दिया। "फिल्म 'शहीद' से वे देशभक्ति के जिस ध्वज के वाहक बने उसे दो दशक तक सफलतापूर्वक लहराते–फहराते रहे। 'उपकार' तो उपकार, 'बलिदान' जैसी डाकू–गाथा और 'क्लर्क' जैसी मध्यवर्गीय जीवन–कथा में भी वे भगवा और तिरंगा लिए 'प्रणाम करो इस धरती को जिसने हमको जन्म दिया' और 'आज पंद्रह अगस्त है' गाते रहे।"[36] कहना न होगा कि इन देशभक्तिपूर्ण गीतों ने महेंद्रकपूर की आवाज को ऐसे गीतों का पर्याय बना दिया। बाद के वर्षों में मनोज कुमार की भांति ही जे०पी० दत्ता ने राष्ट्रीय चेतना से ओतप्रोत 'सरहद', 'बॉर्डर', 'रिफ्यूजी', 'एलओसी' तथा 'पलटन' जैसी फिल्में बनाईं। फिल्म 'बॉर्डर' का गीत" संदेशे आते हैं"[37] अत्यंत लोकप्रिय हुआ। यह हमें चेतन आनंद की 'हकीकत' के "हो के मजबूर मुझे उसने भुलाया होगा" का सहज स्मरण करा देता है। 'नाम' फिल्म का गीत "चिट्ठी आई है, आई है"[38] विश्वभर में बसे भारतीयों को एक भावनात्मक सूत्र में बाँधता है। फिल्म 'रोजा' (1992) का गीत "भारत हमको जान से प्यारा है "ममतापूर्ण देशभक्ति की भावना जगाता है।

'क्रांति' जैसी फिल्मों में देशभक्ति गीत लिखने वाले संतोष आनंद ने फिल्म 'तिरंगा' (1993) में भी देशभक्तिपूर्ण गीत लिखे हैं। इनमें "मेरी आन तिरंगा है, मेरी जान तिरंगा है, मेरी शान तिरंगा है" सर्वाधिक लोकप्रिय हुआ। 'मंगलपांडे' (2005) का गीत "जागो रे जागो रे मंगल, मंगल" स्वाधीनता संग्राम के प्रथम शहीद मंगल पांडे के बलिदान को दर्शाता हुआ जन–जन में जागृति का संचार करता है। "चक दे वतन, मेरा इंडिया"[39] भी देश प्रेम का जज्बा जगाने वाला उत्तम गीत है। सन् 2019 में प्रदर्शित फिल्म 'केसरी' का" तेरी मिट्टी में मिल जावां'' रोमांटिक धुन पर लिखा गया गीत है। यह गीत सीने पर गोली खा कर मरणासन्न सिपाही के अंतिम दस मिनट की अंतर्व्यथा को दर्शाने का प्रयत्न करता है। इसके गीतकार मनोज मुंतशिर इसे 'संदेशे आते हैं' के बाद देश प्रेम का सर्वाधिक हिट गीत मानते हैं।'[40] सैन्य ऑपरेशन पर आधारित फिल्म 'उरी' (2019) का गीत "मैं लड़ जाना, मैं लड़ जाना, है लहू में एक चिंगारी" युद्ध का जोश जगाने वाला गीत है। इनके अतिरिक्त "ये दुनिया एक दुल्हन, दुल्हन के माथे की बिंदिया ये मेरा इंडिया,"[41] "हम हिंद के वीर सिपाही,"[42] "ए वतन जलवा जलवा तेरा जलवा" और "मैं हिंदुस्तान हूँ, इतिहास मेरा सदियों पुराना,"[43] "कंधों से मिलते हैं कंधे,"[44] "माँ तुझे सलाम,"[45] "यह जो देश है तेरा"[46] जैसे राष्ट्रीय चेतना और देशप्रेम के उद्–बोधक गीत विगत तीन दशकों की फिल्मों में आए हैं।

हिंदी सिनेमा के राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले गीतों के कथ्य एवं भाव का सम्यक अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि इन गीतों में कहीं भी उग्र राष्ट्रवाद अथवा युद्ध का समर्थन नहीं है। प्रत्युत् विश्व शांति एवं बंधुत्व की अंतः प्रेरणा ही इनमें अनुस्यूत है। "जीते हों किसी ने देश तो क्या हमने तो दिलों को जीता है"– इन गीतों का आदर्श रहा है! बंसी के इन प्रेम पुजारियों को विवश होकर ही उसे बंदूक बनाना पड़ा है। इन गीतों ने मानवता को युद्ध की विभीषिका एवं उसके दुष्परिणामों से परिचित कराया है। "इंसां को कौन लड़ाता है, क्यों युद्ध अभी

तक जारी है। लाशें जो खरीदा करता है, वो कौन ऐसा व्यापारी है" तथा "लगती है किसी माँ के दिल पर, सीमा पे जो गोली चलती है,"[47] "एटम बमों के जोर पे ऐंठी है ये दुनिया, बारूद के एक ढेर पे बैठी है ये दुनिया,"[48] "बारूद अगर ये चल जाए, सारी दुनिया जल जाए, तो फिर उसके बाद"[49] जैसी पंक्तियाँ इसी का प्रमाण हैं। इस संदर्भ में फिल्म 'हकीकत' का उल्लेख करते हुए प्रह्लाद अग्रवाल लिखते हैं, " युद्ध की विभीषिका और उसकी त्रासदी इसमें पूरी शिद्दत के साथ उभरकर दर्शकों के अंतर्मन को भिगोने व युद्ध के प्रति घृणा का भाव जगाने में कामयाब रही थी।"[50]

**निष्कर्ष**–निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि हिंदी सिनेमा में राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले, देशभक्तिपूर्ण गीतों की जो परंपरा स्वतंत्रता से पूर्व प्रारंभ हुई थी, वह अद्यतन जारी है। इन गीतों ने न केवल स्वाधीनता संग्राम के दौरान वरन् स्वाधीनता के बाद भी जनसाधारण में राष्ट्रीय एकता एवं देश प्रेम के भाव को जागृत रखा है। साथ ही इन गीतों ने देशवासियों को उनकी महान् संस्कृति एवं समृद्ध राष्ट्रीय परंपरा से अवगत कराने का महत्कार्य किया है, यह गंगा–जमुनी संस्कृति सत्य, अहिंसा और धर्म पर आधारित रही है। ऐसे गीतों के रचयिता गीतकार–संगीतकार–गायक निःसंदेह सम्मान के अधिकारी हैं।

**संदर्भ–ग्रंथ–**


1. 'वतन पे जो फिदा होगा', दैनिक ट्रिब्यून ,मनोरंजन परिशिष्ट, 12 अगस्त, 2012, पृ०–1, कॉलम–1
2. किस्मत (1943)
3. दैनिक ट्रिब्यून, 'मनोरंजन': 'अब हुए बेगाने देश प्रेम के तराने', 13 अगस्त 2011, पृ०–1, कॉलम–2
4. जागृति (1955)
5. उद्धृत – राजकुमार केसवानी 'चल चल रे नौजवान' रसरंग, दैनिक भास्कर ,रोहतक संस्करण, 19 जुलाई 2020 पृ०–7
6. हिंदी सिनेमा : बिंब प्रतिबिंब, संपा. महेंद्र प्रजापति, शिल्पायन प्रकाशन दिल्ली, संस्करण 2015 पृ०–307
7. हुआ सवेरा (1948)
8. आजादी की राह पर (1948)
9. आजाद हिंदुस्तान (1948)
10. देश सेवा (1948)
11. मजबूर (1948)
12. मंदिर (1948)
13. बापू तेरी अमर कहानी
14. जागृति (1955)
15. उपर्युक्त।
16. नयादौर (1957)
17. सिकंदर–ए–आजम (1965)
18. लीडर (1964)
19. जौहर इन कश्मीर (1964)
20. आँखें (1968)

21. प्रेमपुजारी (1970)
22. देशप्रेमी (1982)
23. हकीकत (1964)
24. राजकुमार केसवानी, 'आवाज दो हम एक हैं 'रसरंग, दैनिक भास्कर, रोहतक संस्करण, 10 जनवरी 2021 पृ०–9
25. श्री 420 (1955)
26. जिस देश में गंगा बहती है (1960)
27. फिर सुबह होगी (1958)
28. उपकार (1967)
29. धूल का फूल (1959)
30. जोहार इन कश्मीर (1966)
31. धर्मपुत्र (1959)
32. आक्रमण (1975)
33. कर्मा (1986)
34. पूरब और पश्चिम (1970)
35. क्रांति (1981) कवि प्रदीप 1940 की फिल्म 'बंधन' में' चने जोर गरम' शीर्षक गीत लिख चुके थे। 'क्रांति' का गीत इससे बहुत अधिक प्रभावित है।
36. मनोज कुमार का सिनेमा : भारत की बात सुनाता हूँ ,ले० डॉ० राजेश कुमार, राधा प्रकाशन दरिया गंज, दिल्ली, सं० 2019 प्राक्कथन, पृ०–IV
37. बॉर्डर (1997)
38. नाम (1986)
39. चकदे इंडिया (2007)
40. दैनिक भास्कर , 'बॉलीवुड कॉलम', रोहतक संस्करण , 26 जनवरी 2020 पृ०–15
41. परदेस (1997)
42. बॉर्डर हिंदुस्तान का (2003)
43. हिंदुस्तान की कसम (1999)
44. लक्ष्य (2004)
45. माँ तुझे सलाम (2002)
46. स्वदेश (2004)
47. उपकार (1967)
48. जागृति (1955)
49. यादगार (1970)
50. प्रह्लाद अग्रवाल, 'हिंदी सिनेमा : बीसवीं से इक्कीसवीं सदी तक' , प्र. साहित्य भंडार , इलाहाबाद , सं. 2013 पृ०–284–285

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः57-60

# अन्तर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस और कुमाउनी, गढ़वाली भाषा

–भावना वर्मा

शोधार्थी, पी0एन0जी0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामनगर, नैनीताल, उत्तराखण्ड

♦♦♦

(3) गंगोली (4) दनपुरिया (5) पछाई (6) रौ–थै भैंसी (7) कुमय्या (कुमाई) (8) सोर्याली (9) सीराली (10) अस्कोटी, उपर्युक्त सभी बोलियों में से खसपर्जिया को ही कुमाउनी की मानक बोली का स्थान प्राप्त है।

**गढ़वाली भाषा की प्रमुख बोलिया–** गढ़वाल मण्डल की स्थापना 1969 में हुई थी और गढ़वाल मण्डल में पहले 7 जिले आते थे, लेकिन अब 2021 में उत्तराखण्ड के तीन मण्डल होने के कारण अब गढ़वाल मण्डल में पाँच जिले है, जिनमें गढ़वाली बोली जाती है। उत्तरकाशी, देहरादून, पौड़ी गढ़वाल, टिहरी और हरिद्वार आदि। गढ़वाल मण्डल की भाषा गढ़वाली कही जाती है मैदानी क्षेत्र, उत्तरी सीमांत एवं जनजातीय क्षेत्रों को छोड़कर गढ़वाल के सम्पूर्ण भू–भाग में गढ़वाली का प्रयोग किया जाता है। गढ़वाली भाषा की लिपि भी देवनागरी है।

गढ़वाली भाषा की अनेक उपबोलियाँ है। ग्रियर्सन ने गढ़वाली के आठ उपभेद माने है जो इस प्रकार है– श्रीनगरी, नागपुरिया, दसौल्या, बधाणी, राठी, मँझकुमय्या, सलाणी और टिहट्याली आदि भाषाविदों ने भौगोलिक परिस्थितियों को देखते हुए वर्तमान में उत्तराखण्ड नाम से प्रसिद्ध भू–भाग की भाषा को मध्य पहाड़ी कहा जाता है यह नामकरण सर बेन्स द्वारा किया गया है। इन्होंने हिमालय की बोलियों के लिए पश्चिमी पहाड़ी और नेपाल की भाषा 'नेपाली' के लिए पहाड़ी नाम दिया। मध्य पहाड़ी के अन्तर्गत दो क्षेत्र आते है जिन्हें कुमाऊँ एवं गढ़वाल नाम से जाना जाता है।

उत्तराखण्ड का बहुभाषी, बहुबोली समाज एक लघु भारत के स्वरूप को साकार करता है। ग्रामीण क्षेत्रों में संपर्क भाषा के रूप में कुमाउनी और गढ़वाली व्यवहृत होती है। जनजातीय समाज आपस में अपनी भाषा–बोली का प्रयोग करते है और संपर्क भाषा के रूप में गढ़वाली या कुमाउनी तथा हिंदी का प्रयोग करते है ये लोग तीन–तीन भाषाओं के ज्ञाता होते हैं

सामाजिक, सांस्कृतिक भौगोलिक संदर्भ की दृश्टि से देखे तो कुमाउनी एवं गढ़वाली दोनों ही भाषाएँ अपने सीमित क्षेत्र में सभी धर्मों, वर्णों एवं जातियों के लोगों को परस्पर जोड़ने अपने रीतिरिवाज, और धरोहरों को संजोये रखने ने सक्षम है। राजभाषा के सन्दर्भ में कुमाऊँनी एवं गढ़वाली की बात करना थोड़ा अतिश्योक्ति पूर्ण एवं अटपटा हो सकता है परन्तु भारत राज्यों का संघ है और भाषा आधार पर भी राज्यों का गठन हुआ है। जैसे– 'तमिल भाषायी राज्य तमिलनाडू, उड़िया भाषी उड़ीसा, गुजराती भाषायी गुजरात आदि अनेक राज्य है।

उत्तराखण्ड हिंदी भाषायी क्षेत्र के अन्तर्गत आता है इस कारण यहाँ के निवासी हिंदी भाषायी माने जाते हैं। लेकिन बोलने वालों की संख्या के आधार पर यहां की द्वितीय राजभाषा कुमाउनी–गढ़वाली होनी चाहिए, क्योंकि यही भाषाए यहां के आम जनता के मनमानस विराजमान है। साथ ही मातृभाषा और सम्पर्क भाषा है। उत्तराखण्ड राज्य की पृथक भाषा हिन्दी तथा द्वितीय भाषा संस्कृत को माना गया है कुमाऊँ अंचल में कुमाउनी और गढ़वाल खण्ड में गढ़वाली भाषाएं अपनी–अपनी सांस्कृति, ऐतिहासिक, सामाजिक परम्पराओं को अरसों से संभालते हुए वर्तमान तक जीवित रखे हुए है। उत्तराखण्ड के कुमाऊँ मण्डल में कुमाऊँनी और गढ़वाल मण्डल में गढ़वाली ग्रामीण क्षेत्रों में शत प्रतिशत बोली जाने वाली भाषाएँ है। इसके अतिरिक्त यहा के निवासी जिन–जिन राज्यों में रोजगार एवं प्रवास के लिए जाते है वहां भी उनकी सम्पर्क भाषा अपनी मातृभाषा ही रही है हिंदी का

प्रयोग अधिकतर कार्यालयों के लिए ही इन लोगों द्वारा किया जाता है। यहाँ तक ग्रामीण क्षेत्रों के बूढ़े, बच्चे, जवान सभी अपनी मातृभाषा में ही विचारों को प्रकट करते है इन क्षेत्रों के लोकगीत, लोक कथाएँ तथा देवी–देवताओं के आह्वान गीत भी अपनी मातृभाषा में ही होते है।

सामाजिक कार्यकर्ता एवं बुद्धिजीवियों द्वारा कुमाउनी–गढ़वाली भाषा का संरक्षण के लिए समय–समय पर कदम उठाये जा रहे है इसे द्वितीय राज भाषा का स्थान देने की मांग की जा रही है। राष्ट्रीय संदर्भ की दृष्टि से कुमाउनी भाषा राष्ट्रीय स्तर पर अपने वजूद की लड़ाई लड़ रही है। जिस भाषायी एवं सांस्कृतिक पहचान को बचाये रखने तथा क्षेत्रीय पहचान और विकास को मध्यनजर रखते हुए उत्तराखण्ड पृथक राज्य का निर्माण किया गया। उसमें यहाँ की अमूल्य धरोहर यहाँ की भाषाएँ है जो अंधेरे में धुंधली होती प्रतीत हो रही हैं

वर्तमान में दुनियाभर में भाषाओं को बचाने की चिंता में मातृभाषा दिवस मनाया जा रहा है, ऐसी ही चिंता उत्तराखण्ड की मातृभाषा माने जाने वाली कुमाउनी एवं गढ़वाली की भी है, क्योंकि ये उत्तराखण्ड की मातृभाषा (दुदबोलि) है लम्बे समय के प्रयास से भी कुमाउनी और गढ़वाली को संविधान की आठवीं अनूसूची में स्थान नहीं मिल पाया है। राज्य में अनेक सरकारों द्वारा यह बात यूनेस्कों तक रखी जा रही है चाहें भाजपा सरकार रही हो चाहें कांग्रेस सरकार दोनों की ओर से केन्द्र सरकार को ज्ञापन भेजे जा रहे है। वर्तमान में सतपाल महाराज से लेकर सांसद अजय भट्ट कई सांसद सदन में इन मुद्दे पर चर्चा कर चुके है।

राज्य की भाषाओं की बात कही जाए तो कुमाउनी–गढ़वाली भाषा–भाषियों की संख्या बहुत अधिक है जबकि मैथिली, बोड़ो और कोकड़ी से कई गुना यह भाषा बोली जाती है। 1560–1790 ई0 तक सभी कार्य गढ़वाली मानकीकृत भाषा है। ताम्रपत्रों, शिलालेखें एवं सरकारी दस्तावेजों में इनके अभिलेखीय प्रमाण आज भी मौजूद है।

उत्तराखण्ड सरकार द्वारा इस भाषा के विकास, समृद्धि और सृजन हेतु महाविद्यालयों में गढ़वाली–कुमाउनी बोली एवं गढ़वाली बोली गढ़वाल के प्राथमिक विद्यालयों से ही पाठ्यक्रम में रखी गयी है। साथ ही अनेक विश्व विद्यालयों में गढ़वाली–कुमाउनी बोली एवं साहित्य पर पी–एच0डी0 एवं शोध ग्रन्थ लिखे गये है। इन भाषाओं पर समाचार पत्र भी समय–समय पर प्रकाशित होते रहे है। आज भाषा के रख रखाव के चिंतित भाषाविद कुमाउनी–गढ़वाली के लिए प्रयासरत है।

विश्व मातृभाषा 21 फरवरी 2022 के थीम "बहुभाषी शिक्षा के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग, चुनौतिया और अवसर" रखी गई थी। इसका उद्देश्य बहुभाषी शिक्षा को आगे बढ़ाने एवं सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षण और सीखने के विकास को सहायता करने हेतु प्रौद्योगिकी की संभावित भूमिका पर केन्द्रित है।

उत्तराखण्ड का प्रमुख सामाजिक संगठन 'धाद' ने प्रदेश की भाषाओं के पक्ष में 20 से 26 फरवरी तक मातृभाषा सप्ताह आयोजित की, आयोजन की थीम नई पीढ़ी को उनकी मातृभाषा से जोड़ना है आयोजन का सुत्रवाक्य रखा गया "अपनी भाषा को नई पीढ़ी तक पहुँचाए, और प्रदेश के सभी स्कूलों में यहाँ की मातृभाषा पढ़ाएँ। यूनेस्को द्वारा 21 फरवरी की घोषणा के बाद 2010 से हर वर्ष उत्तराखण्ड की मातृभाषाओं को दुनिया की तमाम छोटी भाषाओं की चिंता से जोड़ते हुए 'धाद' संस्था हर वर्ष यह आयोजन करती है।

कुमाउनी–गढ़वाली बोलियाँ शनै–शनै लुप्त हो रही रही है यह अपना स्थान समाप्त करने के कगार में है। इसका कारण पलायन, शहरीकरण, लिपिबद्ध न होना इत्यादि है। कुमाउनी और गढ़वाली दोनों मातृभाषाओं

का सम्मान दिलाने के लिए "पर्वतीय राज्य" मंच द्वारा एक सितम्बर को कुमाउनी मातृभाषा दिवस तथा दो सितम्बर को गढ़वाली मातृभाषा दिवस मनाने की घोषणा भी की गई है।

**निष्कर्षः**—राष्ट्रीय संदर्भ की दृष्टि से कुमाउनी गढ़वाली भाषा अपने वजूद की लड़ाई लड़ रही है। सिमटती—सिकुडली इन भाषाओं को जहाँ रखने के लिए कुमाउनी साहित्यकार, रचनाकर और पत्रकार तथा गढ़वाली साहित्यकार और भाषाविद इन भाषाओं के समुचित विकास के लिए पुरजोर तरीके से कार्यरत है। इन भाषाओं के साहित्य सृजन तरीके से कार्यरत है। इन भाषाओं के साहित्य सृजन करने वाले उत्कृष्ट रचनाकारों को राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानित एवं प्रोत्साहित कर अपनी मातृभाषा को उचित स्थान दिलाने के लिए उत्तराखण्ड के प्रत्येक नागरिक को सहयोग देना अनिवार्य है। कुमाउनी—गढ़वाली लोक कलाकार भारत के विभिन्न प्रान्तों तथा विदेशों में अनेक प्रकार के सम्मेलनों और आयोजनों में अपनी भाषा की कई तरह की कलात्मक प्रस्तुतियों द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर इन भाषाओं की पहचान बना रहे है। अंग्रेजी भाषा के बडबोलेपन के कारण हमारी भाषायी एवं सांस्कृतिक पहचान खतरे में पड़ रही है। अतः कुमाउनी, गढ़वानी भाषा के बहुआयामी स्वरूप को समझने के लिए दैनिक जीवन में बोलचाल पत्र—व्यवहार में लाना आवश्यक है। कुमाउनी, गढ़वाली बोलियाँ हिन्दी भाषा की बोलियाँ है। इन छोटी—छोटी मातृभाषाओं को विकसित करके हिंदी भाषा को ओर अधिक गौरवान्वित किया जा सकता है। 2022 में संयुक्त राष्ट्र महासंघ ने एक उल्लेखनीय पहल करते हुए संयुक्त राष्ट्र के प्रस्ताव में पहली बार हिन्दी भाषा का उल्लेख कर अपनी कामकाजी भाषाओं में हिन्दी को भी शामिल किया गया है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ—**


1. https/www.amarujala.com
2. कुमाउनी भाषा और साहित्य, डॉ0 नारायण दत्त पालीवाल, मनीषा प्रकाशन, दिल्ली।
3. कुमाउनी भाषा और साहित्य, केशव दत्त रूवाली, श्री अल्मोड़ा, बुक डिपो।
4. कुमाउनी भाषा साहित्य एवं संस्कृति, डॉ0 देव सिंह पोखरिया, अल्मोड़ा बुक डिपो।
5. गढ़वाली भाषा का व्याकरण, रजनी कुकरेती, बिनसर पब्लिशिंग के0 देहरादून—2010।
6. मध्य पहाड़ी की भाषिक परंपरा और हिंदी, डॉ0 चातक, तक्ष शिक्षा प्रकाशन, दिल्ली, 2000।
7. उत्तराखण्डी समाज और जनजातियाँ भाषिक एवं सामाजिक संदर्भ—प्रो0 देवसिंह भाषिक एवं अल्मोड़ा किताबघर।
8. उत्तराखण्ड की लोकगाथाएँ, डॉ0 शिवानंद नौटियाल, अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा।
9. वही, पृ०—6
10. वही, पृ०—10
11. कुमाउनी भाषा और उसका साहित्य, डॉ० त्रिलोचन पांडे, उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान, 1977 ई0।
12. मानक सामान्य हिंदी, डॉ० पृथ्वीनाथ पाण्डेय, अरिहन्त पब्लिकेशन, मेरठ।
13. लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया, जी०एस० ग्रियर्सन, वा०—9, खण्ड—4।
14. उत्तराखण्ड की लोककथाएँ—भाषा प्रथा पंत, जगदम्बा पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः61-64

# महात्मा गांधी का शिक्षा दर्शन एवं राष्ट्रिय शिक्षानीति–2020

**–डॉ० श्याम प्रसाद.के.एन**

सहायक प्राध्यापक, द.भा.हि.प्र.सभा, एरणाकुलम

♦♦♦

(4) प्रौढ़ शिक्षा (Adulteducation)

गांधी के अनुसार पूर्व बुनियादी शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य है– (1) बालकों का सर्वांगीण विकास। (2) उनमें सुंदर और व्यक्तित्व तथा सामाजिक आदतें डालना (3) भोजन, स्वास्थ्य, रहन–सहन के ढंग, मानसिक–बौद्धिक विकास आदि। उन्होंने गर्भधारण से छह–सात वर्ष तक इस शिक्षा की अवधि भी रखे थे। इस पद्धति के अंतर्गत भाषा, गणित,कला,विज्ञान, सामाजिक ज्ञान,संगीत, खेल–व्यायाम, सफाई, पशुपालन तथा स्वावलंबन संबंधी विषय रखे जाते थे। इसके साथ व्यावहारिक विषयों में सफाई, भोजन और पानी का अभ्यास क्रम,दस्तकारी संबंधी कार्य और बागवानी भी शामिल था।

शिक्षा के दूसरे चरण बुनियादी शिक्षा की अवधि गांधी ने छह से चौदह वर्ष तक निर्धारित की थी। 31 जुलाई 1937 के हरिजन में स्वयं गांधी ने बुनयादी शिक्षा के उद्धेश्य पर लिखा था– "शिक्षा से मेरा मतलब है बच्चे या मनुष्य की तमाम शारीरिक, मानसिक, आत्मिक शक्तियों का सर्वतोन्मुखी विकास है। अक्षर ज्ञान न तो शिक्षा का आरंभ है और न अंतिम लक्ष्य। वह तो अनेक उपायों में से एक है जिससे स्त्री–पुरुषों को शिक्षित किया जा सकता है।"2 इस शिक्षा पद्धति में गांधी ने हस्तकला को विशेष प्रधानता दिया था। क्योंकि गांधी पुस्तक ज्ञान से ज्यादा व्यावहारिक शिक्षा पर महत्व देते थे। इसी के साथ बुनियादी शिक्षा में अन्य विषयों जैसे– साहित्य, इतिहास, भूगोल, आदि की भी शिक्षा दी जाती है। इसमे शिक्षा का माध्यम मातृभाषा रखी गई थी। बुनियादी शिक्षा में पाठ्य–विषय और पाठ्यक्रम ऊपर से नहीं लादे जाते बल्कि अध्यापकों के अपने अनुभवों से तैयार किए जाते हैं। इस योजना में बाहर की परीक्षाएँ नहीं होती। इसमे शिक्षा का संबंध जीवन की वास्तविक समस्याओं के साथ रखा गया है।

बुनियादी शिक्षा में स्वछता, स्वास्थ्य रक्षा,न्यूट्रीशन, निजी कार्य करना,ड्रिल,घर पर माता पिता की सहायता आदि विषय भी शामिल है, जो व्यावहारिक जीवन में महत्व रखते हैं।

बुनियादी शिक्षा के बाद छात्र उत्तर बुनियादी शिक्षा में प्रवेश करेंगे। गांधी ने इसकी अवधि दो से पाँच वर्ष तक रखे थे। यह शिक्षा पूर्णतः स्वावलंबन पर आधारित थी। इसमे निम्नलिखित सिद्धांतों का अनुपालन किया जाएगा।

(1) शिक्षा उद्योग केन्द्रित होगी।

(2) समन्वय–पद्धति द्वारा शिक्षा दी जाएगी।

(3) शिक्षा को पूर्ण रूप से स्वावलंबी बनाया जाएगा।

(4) विषयों का प्रशिक्षण किसी न किसी काम द्वारा ही दिया जाएगा। अर्थात जहाँ–जहाँ आवश्यकता पड़ेगी, वहाँ–वहाँ काम से संबन्धित ज्ञान दिया जाएगा।

इस शिक्षा पद्धति में विषय के रूप में मातृभाषा,गणित, सामान्य विज्ञान,समाजशास्त्र, ललित कलाएं, अर्थशास्त्र, गृहविज्ञान, शिक्षाशास्त्र और यन्त्रशास्त्र पर अध्ययन किया जाता था।

गांधी के शिक्षा पद्धति में अंतिम है प्रौढ़ शिक्षा। गांधी ने अपने आश्रम में प्रौढ़ शिक्षा चलाया था। भारत में जीविकोपार्जन करने वाले निरक्षर व्यक्तियों की बहुलता थी। इन लोगों को शिक्षित करने के उद्धेश्य से आपने रात्रि पाठशालाओं का आयोजन किया था, जिसे प्रौढ़ शिक्षा कहते हैं। गाँव–गाँव में रात्री पाठशालाओं को खोला गया जिसका उद्धेश्य सभी निरक्षर व्यक्तियों को साक्षर बनाना ही था।

**गांधी के शैक्षिक विचार एवं राष्ट्रिय शिक्षा नीति–2020–**

राष्ट्रिय शिक्षा नीति 2020 पर विशेष ध्यान देंगे तो उसमे दिए गए कई निर्देशों में गांधी द्वारा प्रदत्त विचारों का समावेश देखने को मिलता है। फिलहाल जो शिक्षा नीति भारत में चल रही है वह 1986 की है। इस पद्धति की कुछ प्रमुख समस्याएँ निमनस्थ है।

**(1) सीमित प्रणालियों द्वारा सभी का मूल्यांकन–**

यहाँ पर लिखित तथा मौखिक परीक्षाओं के माध्यम से सभी छात्रों का मूल्यांकन चलता था। परीक्षा के अंक ही छात्र गुणवत्ताका मुख्य आधार था। छात्रों की अन्य क्षमताओं का यहाँ पर कोई महत्व न था। उतीर्णता–अनुतीर्णता के चक्कर में विद्यार्थीयों के कई साल बर्बाद भी होते थे।

**(2) सीमित विकल्प–**

विद्यार्थियों को इस पद्धति में विषय के संबंध में सीमित विकल्प ही मिलता था। रुचि के अनुसार विषय चयन यहाँ पर मुमकिन नहीं था। 10़23 पैटर्न में विकल्पों की कमी के कारण कई विद्यार्थियों को मजबूरन कुछ अनिच्छित विषय पढ़ना पड़ा।

**(3) शिक्षित विषयों का पीछा नहीं करना–**

विगत पैंतीस सालों का इतिहास देखेंगे तो विद्धयार्थियां पढ़ते कुछ है और नौकरी करते हैं कुछ ओर क्षेत्र में। बहुत कम प्रतिशत ही मिलेंगे जो शिक्षित विषय का पीछा करते हैं। शिक्षा का क्षेत्र तथा नौकरी का क्षेत्र भिन्न होने से व्यक्ति का प्रदर्शन भी खराब साबित होता है।

**(4) अनुभवी ज्ञान की कमी–**

शैक्षिक विषयों में प्रकटिकल की कमी के कारण इस नीति में ज्ञान अधूरा रह जाता है। इस कारण 10+2+3+2 के बाद भी विद्यार्थियाँ कई प्रकार के 'job oriented diploma' लेने में मजबूर होते हैं, जिससे समय का नष्ट भी होता है तथा अर्थ नष्ट भी।

**(5) ज्ञानार्जन का लंबा अंतराल–**

इस नीति में तकलीबन 22 से 25 वर्ष व्यक्ति को मेहनत करना पड़ता है। कभी–कभार पीएच.डी लेते लेते उनका न्यूनतम उम्र 28 बन जाता है। इस कारण जिंदगी में व्यक्ति बहुत देर से 'सेटिल' हो पाता है। कुछ एक क्षेत्रों में व्यवस्था की धीमी गति के कारण विद्यार्थी का कई साल बर्बाद हो जाता है।

उपर्युक्त सभी कमियों का समाधान हमें नई शिक्षा नीति में देखने को मिलता है। अगर इसको गांधी के विचारों के साथ मिलाकर देखेंगे तो निम्नलिखित संकल्पना उभरकर आती है।

(1) नई शिक्षा नीति में छठे कक्षा तक मातृभाषा को मुख्य माध्यम भाषा के रूप में समर्थन है। गांधी ने भी बुनियादी शिक्षा में (6–14 वर्ष) मातृभाषा का पक्ष लिया था। तर्क यह है कि पहले विद्यार्थी को मातृभाषा में पकड़ हासिल करना है और इसके बलबूते पर प्रथम या विदेशी भाषा । इससे भाषा प्रेम भी बढ़ती है तथा भारत की बहुस्वरता की बचाव भी होती है।

(2) नई शिक्षा नीति में परीक्षा संबंधी नए मापदण्डों को भी देखने को मिलता है। अर्थात केवल परीक्षा के बदले विद्यार्थी के तार्किक चिंतन, विश्लेषण क्षमता, ज्ञानार्जन कौशल आदि को मद्देनजर रखते हुए अंक देने का समर्थन है। इससे विद्यार्थी का समग्र मूल्यांकन होता है। गांधी ने भी बुनियादी शिक्षा में परीक्षा के बदले समग्र मूल्यांकन पर बल दिया था।

(3) नई शिक्षा नीति में व्यावसायिक प्रशिक्षण (vocational training) पर विशेष बल है। याने कि दसवीं कक्षा के पहले छात्र कोई एक व्यावसायिक कला (प्लम्बींग, टेलरिंग, वायरिंग आदि) पर प्रवीणता हासिल करें। यह पद्धतियाँ गांधी के शैक्षिक चिंतन का मूलाधार था।

**निष्कर्ष**–निष्कर्षतः कह सकते है कि गांधी का शैक्षिक चिंतन एकदम व्यवस्थात्मक तथा व्यावहारिक भी था। केवल पुस्तक ज्ञान के बदले हस्त कला का उन्होंने खूब प्रचार किया था, जिससे छात्र को आगे पढ़ने हेतु धन भी मिलता है। नई शिक्षा नीति ने भी इन तमाम पक्षों पर विचार करते हुए पद्धतियों का परिष्करण किया है। 5+3+3+4 पद्धति तो विद्धयार्थियों को लाभदायक ही सिद्ध होगा। यू०जी० लेवल का 'multiple exit' भी छात्रों के भविष्य को ओर रोशन कर सकता है।

**संदर्भ ग्रंथ**–

1. चंद्रदेव प्रसाद,गांधी दर्शन, पृ.सं.236
2. वही, पृ.सं.240

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Referred Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः65-67

# आधुनिक भारत में हिन्दी की स्थिति

–स्नेहलता शर्मा

शोद्यार्थी, सामाजिक शास्त्र विभाग, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान

♦♦♦

वैश्विक स्तर पर हिन्दी के प्रचार तथा प्रसार के लिए भारत और मॉरिशस की सरकारों के सहयोग से मॉरिशस के शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसंधान विभाग में ''विश्व हिन्दी सचिवालय'' इकाई की स्थापना की गई। इसके गठन और संचालन के लिए 12 नवम्बर 2002 को भारत और मॉरिशस की सरकारों ने एक सहमति पत्र पर दस्तखत किए जिसका उद्देश्य कार्यालय, शिक्षा, व्यापार, अनुसंधान व अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी का विकास और इसे संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषाओं में स्थान प्रदान करना है।

सूचना क्रांति के इस दौर में बढ़ते कम्प्यूटरीकरण को दृष्टिगत करते हुए कम्प्यूटर पर हिन्दी में कार्य करने की सुविधा बढ़ाने के लिए सूचना व प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीनस्थ प्रतिष्ठान 'सीकेड' ने 20 जून 2005 को निःशुल्क हिन्दी, सॉफ्टवेयर जारी किया जिसमें 525 हिन्दी लेख विधियां, ओपन ऑफिस,वेब ब्राउजर, ई–मेल, ओ. सी.कार, हिन्दी–अंग्रेजी शब्दकोष, लिप्यान्तरण, वर्ड–प्रोसेसर, लेख–वाणी, टाइपिंग ट्यूटर इत्यादि सुविधाएं उपलब्ध हैं। कम्प्यूटर, ई–मेल, ऑफिस और अन्य व्यवहारों में हिन्दी के प्रयोग में वृद्धि और प्रसिद्धता को देखते हुए सूचना प्रविधि की विश्व की सर्वाधिक बड़ी कम्पनी माइक्रोसॉफ्ट ने भी एम.एस. ऑफिस का हिन्दी रूपान्तरण जारी किया है। वर्तमान में हिन्दी माध्यम से समाचार, साहित्य व्यापार, ज्योतिष और अन्यान्य विषयों का ज्ञान वेब पोर्टल्स पर सुलभ हो रहा है। भारतवर्ष में छपने वाली पुस्तकों, पत्रिकाओं, समाचारपत्रों और अन्य सामग्री में हिन्दी का प्रतिशत अच्छा–खासा है। अनेक राज्यों जैसे उत्तर प्रदेश, हरियाणा, मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान में आज भी हिन्दी भाषा से सामाजिक अध्ययन के साथ विज्ञान और तकनीक से सम्बद्ध अनेक आधुनिक विषयों को अध्ययन–अध्यापन का क्रम जारी है।

14 सितम्बर 2006 में आयोजित हिन्दी दिवस समारोह में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा कि विश्व के अनेक भागों में हिन्दी सरलता से पढ़ी लिखी जा सके, इसके लिए इंटरनेट पर हिन्दी के यूनीकोड स्वरूप का प्रयोग होना चाहिए। आज माइक्रोसॉफ्ट, आई.बी.एम., लाइनेक्स और ऑरेकल जैसी सभी कम्पनियां लिखित भाषा सामग्रियों को प्रदर्शित करने के लिए यूनिकोड का उपयोग कर रही हैं। ये कोडिंग सिस्टम प्लेटफॉर्म मुक्त, फॉण्डमुक्त और ब्राउजर मुक्त है। विण्डोज 2000 के बाद के सभी पर्सनल कम्प्यूटर्स में यूनिकोड का प्रयोग हो सकता है। भारत के अनेक विभाग, प्रमुख हिन्दी समाचार का और हिन्दी पोर्टल यूनिकोड का प्रयोग किया जा रहा है।

**राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी भाषा–** उन्नीसवीं शताब्दी में स्वतंत्रता आंदोलन गति पकड़ रहा था तो दूसरी ओर हिन्दी भाषा भी शब्दकोश, वाक्यविन्यास और प्रयोक्त संख्या के मामले में मजबूत हो रही थी। अन्य दूसरी समकक्ष प्रान्तीय बोलियों से अलग खड़ी बोली हिन्दी सारे भारत में प्रयोग की जाने लगी थी। स्वतंत्रता आंदोलन के नायक मानते थे कि भारत को एक भाषा की आवश्यकता है जिसे देश के विभिनन भागों में लोगों तक आसानी से समझा जा सके और प्रयोग कर सकें।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत की संविधान सभा ने 14 सितम्बर 1949 को देवनागरी में खड़ी बोली हिन्दी को भारतीय संघ की राजभाषा घोषित किया। उस समय की राजभाषा अंग्रेजी को सहायक भाषा का दर्जा दिया गया। हिन्दी को शासकीय कार्य व्यवहार की वास्तविक भाषा बनाने के लिए पन्द्रह वर्ष की अवधि निर्धारित की गई। हिन्दी को सक्षम व आधुनिक बनाने के लिए केन्द्रीय हिन्दी संस्थान और केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की स्थापना हुई। भारत के संविधान के अनुच्छे 351 में हिन्दी भाषा के विकास के लिए विशेष निर्देश का उल्लेख किया गया है।

**भारतीय संविधान और हिन्दी भाषा–** भारतीय संविधान के सत्रहवें खण्ड के अन्तर्गत संघ की भाषा नाम से अध्याय में भारत की भाषा नीति की विस्तृत व्याख्या की गई है अतः इसके अनुसार –

1. संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि जो होगी वो देवनागरी है। इसके साथ ही शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा। (343/1)

2. प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का उपयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था। (343/2)

3. संसद पन्द्रह वर्ष की अवधि के बाद विधि द्वारा क. अंग्रेजी भाषा का या ख. अंकों के देवनागरी रूप का ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी, ऐसे विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं। (343/3)

**निष्कर्ष –** भाषा वही जीवित रहती है जिसका उपयोग अधिक से अधिक व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। लोगों के बीच सम्प्रेषण का सबसे बेहतरीन माध्यम हिन्दी है अतः इसको एक–दूसरे में प्रचारित करना चाहिए। सभी से निवेदन किया जाता है कि वे अपनी बोलचाल की भाषा में भी हिन्दी का प्रयोग करें। हिन्दी भाषा के प्रसार से सम्पूर्ण देश में एकता की भावना और ज्यादा मजबूत होगी।

**संदर्भ ग्रन्थ सूची**


1. शर्मा डॉ. देवेन्द्रनाथ– हिन्दी भाषा का विकास, अनुपम प्रकाशन पटना 2001
2. वर्मा डॉ. धीरेन्द्र– हिन्दी भाषा का इतिहास, हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद
3. भाटिया डॉ. कैलाश एवं चतुर्वेदी मोतीलाल– हिन्दी भाषा विकास और स्वरूप ग्रन्थ अकादमी, नई दिल्ली 2004
4. तिवारी उदयनाथ– हिन्दी भाषा उद्भव एवं विकास, भारती भंडार, इलाहाबाद 1979
5. शर्मा डॉ. राजमणि– आधुनिक भाषा विज्ञान, वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः68-71

# राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रथम कर्णधार : स्वामी दयानंद सरस्वती

**–नेहा प्रधान**

शोधार्थी एवं व्याख्याता इतिहास, कैरियर पाइंट यूनिवर्सिटी, कोटा राज.

♦♦♦

अत्यावश्यक था। अपने धर्म के प्रचार के लिए उनके द्वारा तमिल, तेलगू, कन्नड़, मलयालम, बंगला आदि भाषाओं के शब्दकोश तैयार कर बाइबिल का अनुवाद इन भाषाओं में किया गया। ईसाई मिशनरियों द्वारा धर्म प्रचार के लिए शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही रखा साथ ही स्त्रियों के लिए भी शिक्षा की व्यवस्था निवास स्थानों पर ही की गई। हांलाकि ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा मिशनरियों को कोई भी आर्थिक सहायता प्रदान नहीं की जाती थी और उनके द्वारा धर्मनिरपेक्ष शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। इस काल में दो प्रकार की शिक्षण संस्थाएं कार्यरत थीं–प्रथम मिशनरी वाली जो कि विद्यालयों में बाइबिल पढ़ाने और धर्म प्रचार पर जोर देती थीं और दूसरी कंपनी के द्वारा संचालित धर्मनिरपेक्ष संस्थाएं। उनके इस स्वरूप के कारण ही भारतीय जनता की प्रथम रूचि कंपनी के विद्यालयों में रही। कंपनी ने स्वार्थपूर्ति हेतु कम वेतन के कर्मचारी प्राप्त होने के कारण भारतीयों हेतु कलकत्ता में मदरसे और वाराणसी में संस्कृत कॉलेज की स्थापना भी की।

महर्षि दयानंद सरस्वती ने 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब भारतीय शिक्षा जगत में प्रवेश किया उस समय हिन्दुओं को शिक्षा के माध्यम से ईसाई बनाने को कार्य जोरों पर था। उन्होंने सतानत धर्म पर संकट को भांप कर स्वयं की शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की। महर्षि ने वैदिक सनातन धर्म की श्रेष्ठता को सिद्ध करने के प्रयास किए। उनके द्वारा वेदों के पठन–पाठन पर जोर और उनमें आए कर्मकाण्डों के दोषों को दूर करने के प्रयास किए गए। उनके द्वारा शास्त्रार्थों के माध्यम से सम्पूर्ण भारतवर्ष में वेदों की महत्ता और उनकी सही व्याख्या प्रस्तुत की। सर्वप्रथम महर्षि द्वारा ही खड़ी बोली हिन्दी को राष्ट्रभाषा की संज्ञा से संबोधित किया गया। देशी के प्रति लगाव और समर्पण के कारण उन्होंने ही सर्वप्रथम स्व शब्द का प्रयोग स्वदेशी, स्वधर्म, स्वभाषा आदि के लिए किया। उन्होंने अपने ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश और वेद भाषा में शिक्षा के महत्व को समझाया है। उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी को राष्ट्रीय गौरव प्रदान किया। महर्षि ने अपने अन्य ग्रन्थ यजुर्वेद भाष्य में शिक्षा की स्वभाषा में महत्ता और स्त्रियों आदि के लिए उसके महत्व को सिद्ध किया है। उन्होंने लिखा है '' पशु भी तो शिक्षा पाए हुए कार्य सिद्ध करते हैं तो क्या शिक्षा से युक्त मनुष्य सब उत्तम कार्य सिद्ध नहीं कर सकते हैं। उनके अनुसार मनुष्य का वास्तविक भूषण शिक्षा है और उसे प्रदान करने का माध्यम स्वभाषा से उपयुक्त नहीं हो सकता। उन्होंने आर्य संस्कृति को जीवित रखने हेतु आर्य संस्थाओं की स्थापना की जिसमें सभी आर्ष ग्रन्थों के पठन–पाठन की समुचित व्यवस्था की गई। उन्होंने इन्हें गुरूकुल नाम से संबोधित किया। इन संस्थाओं का आधार प्राचीन गुरूकुल प्रणाली पर आधारित था। इनमें संस्कृत और खड़ी बोली हिन्दी भाषा में अध्ययन करवाया जाता था। संख्या में अत्यल्प होने के बाद भी इन गुरूकुलों का अत्यधिक महत्व था।

महर्षि द्वारा भारतीय शिक्षा पद्धति में एक क्रांतिकारी परिवर्तन का प्रादुर्भाव किया गया। उनके इस विलक्षण कदम से अन्य देशों के शिक्षाशास्त्री भी आकृष्ट हुए। भारतीय वेदशास्त्रों के पठन–पाठन के लिए दयानंद एंग्लो वैदिक शिक्षण संस्थान भी स्थापित किए गए। इनके द्वारा भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना का विकास हुआ और अपने धर्म के प्रति आदर के भाव उपजने लगे। एक दृष्टि से इन संस्थानों को राष्ट्रीय कहा जा सकता है। लाला लाजपतराय के शब्दों में ''दयानंद एंग्लो वैदिक कॉलेज के बनाने की यह मंशा थी कि संस्कृत और हिन्दी की तालीम को अंग्रेजी तालीमके साथ लाज़मी करार देकर वह उन दुकायस को दूर कर सकें जो एक तरफ महज संस्कृत की तालीम से और दूसरी तरफ महज अंग्रेजी की तालीम से पैदा होते हैं।'' महर्षि ने शिक्षा पद्धति को मनोवैज्ञानिक स्तर पर परखकर आदर्श शिक्षा पद्धति की नींव रखी। उन्होंने हिन्दी और संस्कृत को जिन ऊचाईयों

पर पहुंचाया उससे विवश होकर मार्टिण्डल ने भी कहा था कि ''आर्यसमाजी स्कूल ईसाई मिशनरी स्कूलों के समानांतर हैं।''

महर्षि के आर्य समाज ने न सिर्फ देश की संस्कृति, धर्म और स्वदेशी को अक्षुण्ण बनाए रखा बल्कि हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए भी अभूतपूर्व कार्य किए। उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी पत्रकारिता के माध्यम से इसे लोकजन की भाषा बनाया। पंडित जुगल किशोर द्वारा हिन्दी भाषा में प्रथम पत्र उदन्त मार्तण्ड का प्रकाशन 30 मई 1826 को कलकत्ता में किया गया। हांलाकि महर्षि ने स्वयं कोई समाचार पत्र प्रकाशित नहीं किया किन्तु उन्होंने विभिन्न आर्यसमाजियों को हिन्दी पत्र निकालने के लिए प्रेरित किया। आर्य समाज द्वारा आत्मशुद्धि, वैदिक गर्जना, आर्य संकल्प, वैदिक रवि, विश्वज्योति, सत्यार्थ सौरभ, दयानंद संदेश, महर्षि दयानंद स्मृति प्रकाश, तपोभूमि, नूतन निष्काम पत्रिका, आर्य प्रेरणा, आर्य संसार, सुधारक, टंकारा , मर्यादा, आर्य मित्र, भारतोदय, आर्य मार्तण्ड, परोपकारी, अग्निदूत, आदि मासिक , पाक्षिक तथा वार्षिक पत्रिकाओं का प्रकाशन किया। इन पत्रिकाओं के माध्यम से भारत की सोई हुई राष्ट्रीयता को जगाने तथा खड़ी बोली हिन्दी के माध्यम से एकसूत्र में बांधने का प्रयास किया गया। यद्यपि महर्षि स्वयं गुजराती थे और संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे तथापि उन्होंने हिन्दी के गुणों को देखते हुए बाबू केशवचन्द्र के परामर्श से खड़ी बोली हिन्दी को जनभाषा बनाने के कार्य किए। उनके भाषणों में हिन्दी का ही प्रयोग किया गया। आर्य समाज ने हिन्दी पत्रकारिता के माध्यम से हिन्दी का प्रसार किया। महाकवि निराला जी ने लिखा है कि '' आज जो जागरण भारत में दिखलाई देता है , उसका पूरा श्रेय आर्यसमाज को है। राष्ट्रभाषा खड़ी बोली हिन्दी के भी स्वामी जी एक प्रवर्तक हैं।''

खड़ी बोली हिन्दी भाषा में सर्वप्रथम दैनिक पत्र समाचार सुधावर्षण कलकत्ता से सन् 1854 में प्रकाशित हुआ। हिन्दी के कारण राष्ट्रीयता की भावना के प्रसार के कारण 1857 की क्रान्ति के बाद समाचार पत्रों पर प्रतिबंध ा लगाए गए। इससे ज्ञात होता है कि आर्यसमाज ने खड़ी बोली हिन्दी का प्रचार इस प्रकार किया कि उर्दू के माहौल को पूर्णतया हिन्दीमय बना दिया। महर्षि के खण्डन–मंडन के कारण उनके समकालीन सुधारकों , साहित्यकारों आदि ने हिन्दी प्रसार को ध्येय बनाया। गांधी जी ने उनके विचारों से प्रेरणा ग्रहण की। भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने कवि वचन सुधा पत्रिका के सम्पादक मंडल में महर्षि को सम्मिलित किया। पंडित राधाचरण गोस्वामी के अनुसार 'स्वामी दयानंद के प्रदर्शित मार्ग से ही हिन्दू धर्म की उन्नति हो सकती है।' भारत में सर्वप्रथम शिक्षण संस्थान गुरूकुल कांगड़ी ही था जिसने हिन्दी भाषा के माध्यम से शिक्षा सफल प्रयोग किया। आर्यसमाज के सदस्य भवानीलाल सन्यासी, स्वामी सत्यदेव, स्वामी श्रद्धानंद और लाला लाजपतराय आदि ने हिन्दी में ही अपने व्याख्यान दिए। स्वामी सत्यदेव ने महर्षि की प्रेरणा पाकर ही 1919 में जर्मनी के रेडियो से हिन्दी में व्याख्यान दिया था। लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय के अनुसार '' आर्यसमाज के कारण व्याख्यानों की ऐसी धूम मची जिससे खड़ी बोली हिन्दी भाषा का समस्त उत्तरी भारत में प्रचार हुआ।'' आर्य समाज द्वारा विश्व के अन्य देशों अफ्रीका, मॉरिशस, गुआना, सूरीनाम, ब्रिटेन आदि में वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रचार के लिए अनेक हिन्दी आर्य समाजी पत्रिकाएं प्रकाशित की गईं।

सर्वप्रथम दक्षिण अफ्रीका से धर्मवीर हिन्दी साप्ताहिक प्रकाशित हुआ। वर्तमान में सभी हिन्दी साहित्यकार महर्षि के आर्यसमाज से प्रभावित हुए हैं। आर्य समाज की पत्रकारिता के बिना भारतीय पत्रकारिता और स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास अपूर्ण सा प्रतीत होता है।[3] महर्षि ने अपने सम्पूर्ण जीवन को भारतीय संस्कृति और हिन्दी के उत्थान के लिए समर्पित कर दिया उनके शब्दों में ''यथेमां कल्याणीमावदानि ब्रह्मराजन्यभ्यां शूदायचार्याय च

स्वाय चारणाय'' अर्थात् आओ हम दक्षिण भारतीय हिन्दू अपने को पहचानें। उनका कहना था कि भारतीयों को एकसूत्र में बांधने के लिए एक राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है जो कि हिन्दी के द्वारा ही पूर्ण हो सकती है। अतः समस्त भारतीयों को हिन्दी के प्रचार के लिए कार्य करने चाहिए। महर्षि ने आर्य समाज के माध्यम से हिन्दी को राष्ट्रभाषा के शिखर पर आसीन किया और राष्ट्रीयता की भावना को नवीन दिशा प्रदान की।

**संदर्भ गन्थ सूची**


1. डॉ. मल्होत्रा शान्ता – स्वामी दयानंद के राजनीतिक विचार, कल्पना प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 11
2. वर्मा वासुदेव– अट्ठारह सौ सत्तावन और स्वामी दयानंद, भारतीय लोक समिति, करोल बाग, नई दिल्ली , पृ. 212
3. शास्त्री सत्यप्रिय– भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में स्वराज्य प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का योगदान, पृ. 130
4. सरस्वती दयानन्द– ऋग्वेद भाष्य, भाग 1–4
5. विद्यालंकार हरिदत्त, विद्यालंकार सत्यकेतु– आर्य समाज का इतिहास, पृ. 117
6. गोपाल मदन– हिन्दी पत्रकारिता और स्वतंत्रता संग्राम, पृ. 73

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः71-74

# हिन्दी जनसंचार

**–भावना महेश रोचलानी**
श्रीमती सी. एच. एम कॉलेज उल्हास नगर ठाणे

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

संचार माध्यम जनसंचार का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। संचार वह विधा है जो हमें एक दूसरे से जोड़ने का काम करती है वैसे जनसंचार शब्द भले ही नया हो लेकिन इसकी अवधारणा काफी पुरानी है। संचार की आवश्यकता मनुष्यो को उसी भाँति है, जिस भाँति भोजन और पानी। संचार एक अत्यन्त व्यापक अवधारणा है। जिसमें मनुष्य द्वारा अभिव्यक्ति के सभी प्रकार है माध्यम शब्द, चित्र, संगीत, अभिन्य, मुद्रण आदि समाहित किए जा सकते है, सम्पूर्ण संसार में प्रत्येक व्यक्ति तथा जीवजन्तु के संचार के अपने तौर तरीके हैं। पशु–पक्षी भी अपनी ही शैली में स्व्यं की बात को अपने साथी तक प्रेषित करते हैं। अतः सृष्टि के आरम्भि काल से ही संचार की विविध शैलियाँ किसी न किसी रूप में प्रचलित रही है। प्राचीन समय में लोग जब छोटे–छोटे समूहों में रहते थे, उस समय आमने–सामने के सम्पर्क से मानव एक दूसरे से जुड़ा था। वर्तमान समय में विभिन्न क्षेत्रों में बिखरे हुए लोगों को एक समय में एक साथ सूचनाएँ प्रेषित करनी पड़ती है। यह काम संचार के विभिन्न माध्यमों द्वारा किया जाता है।

**जनसंचार की परिभाषाऐं–**

जनसंचार की परिभाषा देने का प्रयत्न। अनेक विद्वानों ने किया है, जिसमें से निम्नलिखित परिभाषाऐं प्रमुख है–

एडविन ऐमरी के अनुसार, ''जनसंचार एक से दूसरे व्यक्ति के ख्यालातों तथा दृष्टिकोणों को निर्माण करने की एक कला है ।''

वीटर लिटिलके अनुसार, ''जनसंचार वह प्रक्रिय है, जिससे सूचनाऐं व्यक्तियों और संगठनों के मध्य वार्तालाप होती है, इसलिए कि एक समझदारी परिणाम का जिम्मा होती है।''

डी एम मेहता के अनुसार, ''जनसंचार का तात्पर्य सूचनाओं का, ख्यालातों तथा मनोरंजन का आदान–प्रदान है, रेडियो, टी. वी, प्रेस तथा फिल्म के द्वारा संचारित होता हैं।''

मिस्टनर हावलैण्डि के अनुसार, ''जनसंचार वह शाही जिससे एक व्यक्ति संचार कर्ता, वार्तालाप दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को मोडिफाई करता है । ''

इस प्रकार हमने जनसंचार के बारे में विभिन्न विद्वानों के मत देखे। भारत में श्रव्य माध्यमों संबंधित लेखन का प्रारंभ यों तो सन् 1927 ई. में हुआ जब 'इंडिया ब्राडकॉस्टिंग कंपनी लिमिटेड' द्वारा बंबई से प्रसारण शुरू हुआ। किंतु इसका स्वरूप 1940 तक आते–आते निर्धारित हुआ। माध्यम की तकनीक और रचनात्मक पक्ष को ध्यान में रखते हुए नियमित आलेख 1936 से लिखे जाने लगे।

**जनसंचार माध्यमों की हिन्दी–**

विज्ञान प्रतिदिन विकास पा रहा है और विज्ञान के विकास के साथ ही साथ 'जनसंचार माध्यमों' के क्षेत्र में भी क्रान्ति उपस्थित हो गई है। संचार–माध्यमों में मनुष्य की उपलब्धियों सामाजिक, राजनीतिक, बौद्धिक, कायिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक, व्यापारिक, शैक्षिक तथा आध्यात्मिक के मूल्यांकन ही होड़ है, जिसमें भाषा का अमूल्य योगदान है। जनसंचार माध्यम तीन प्रकार के है (1) मुद्रण माध्यम (2) इलेक्ट्रोनिक माध्यम और (3) नव इलेक्ट्रोनिक माध्यम' समाचार पत्र–पत्रिकाऐं' मुद्रण माध्यम के अंतर्गत आती हैं। इलेक्ट्रोनिक माध्यम दो प्रकार के हैं (1) श्रव्य् माध्यम और (2) दृश्य–श्रव्य माध्याम। 'आकाशवाणी' श्रव्ये माध्यम है, तो 'दूरदर्शन' दृश्य–श्रव्य माध्यम है। 'कम्प्यूटर' नव इलेक्ट्रोनिक माध्यम है ।

**श्रव्य माध्यम–**

जैसे पत्र–पत्रिकाओं (मुद्रित माध्यम) में मुद्रित विषय के अनुसार भाषा बदलती है वैसे आकाशवाणी (श्रव्या माध्यम) और दूरदर्शन (दृश्य–श्रव्य माध्यम) में भी प्रसारित विषय के अनुसार भाषा बदलती है। आकाशवाणी और दूरदर्शन में प्रसारित ग्रामीण कार्यक्रम की भाषा में लोक चेतना होती हैं, तो कृषि, विज्ञान तथा शिक्षण की भाषा में पृथक्रता है और साहित्यत, दर्शन, संस्कृति और कला की भाषिक चेतना पृथक होती है। समाचार पत्रों जैसे आकाशवाणी और दूरदर्शन के 'समाचारों' की भाषा में भी विषयवार शब्दावली का प्रयोग होता है।

'श्रव्यो माध्यम' (आकाशवाणी) और 'दृश्य –श्रव्य माध्यम' (दूरदर्शन) की भाषा– शैली में अन्त है। 'आकाशवाणी' की भाषा में आरोह–अवरोह महत्वपूर्ण है और उच्चारण में भी अतीव ध्यान देना पड़ता है। क्योंकि उसमें प्रसारित बात मात्र श्रव्य होती है। मौखिक बात की प्रभावित उच्चारित शब्दों तथा प्रयुक्त शैली में निर्भर है। इसलिए स्वरों के आरोह–अवरोह, शब्द भंगिमा स्पष्ट उच्चारण तथा भाषा का लचीलापन 'आकाशवाणी' की भाषा के आवश्यक तत्व हैं ।

**आकाशवाणी में हिन्दी–**

पहला रेडियो कार्यक्रम का प्रसारण जून, 1923 में मुम्बई के रेडियो क्लब ने किया। दो निजी ट्रांसमीटरों की सहायता से भारत में (मुम्बई और कलकत्ता में) जुलाई 1927 में नियमित रूप से रेडियो प्रसारण शुरू हुआ। भारत सरकार और 'इंडियन ब्रोडकास्टिंग कम्पनी लिमिटेड' के करार के परिणामस्वररूप ही इन केंन्द्रों में रेडियो–प्रसाण शुरू हुआ ।

**दृश्य–श्रव्य माध्यम–**

सर्वप्रथम 1920 ई में पाश्चात्य देशों में चित्र को वाणी देने की चिन्ता आई। 1923 ई. में ब्लाईदीमिर वोरिकिन ने इस विषय में प्रयोग शुरू किए। इसके परिणामस्व रूप 1925 ई. में जेकिन्सि नीज ने अमेरिका में टेलीफोन (दूरदर्शन) नामक उपकरण का प्रदर्शन किया। 1927 ई. में बेल टेलीफोन लेबोरेट्रीज (न्यूयार्क और वाशिगंटन के बीच स्थित) ने तार के जरिए दूरदर्शन कार्यक्रम भेजना शुरू किया। कालान्तर में दूरदर्शन प्रसारण में अनेक सुधार आए ।

**दूरदर्शन में हिन्दी–**

भारत का पहला दूरदर्शन केन्द्र दिल्ली में बना था। यूनेस्को की सहायता से 1959 को भारत के विद्यालयों तथा गाँवों में सामूहिक रूप से दूरदर्शन देखने के लिए टेलीविजन सेट की व्यवस्था की गई। 15 अगस्त, 1982 से भारत में रंगीन दूरदर्शन का सूत्रपात्र हुआ। अब दूरदर्शन सेट भारत के घर–घर पहुँच गए हैं

और दूरदर्शन के विविध कार्यक्रमों का उद्देश्य है राष्ट्र में सामाजिक–आर्थिक विकास की प्रक्रिया में सहायक होना और लोगों को सूचना, शिक्षा एवं मनोरंजन प्रदान करना। दूरदर्शन में हिन्दी, अंग्रेजी और राज्य भाषाओं में कार्यक्रम प्रसारित होते हैं ।

दूरदर्शन पर 'समाचार वाचक' (News Presenter) को देखा जा सकता है। 'दूरदर्शन समाचार' का प्राण तत्व है।

**निष्कर्ष–**

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि आज विज्ञान की प्रगति के साथ नई नई प्रौद्योगिकी का विकास हो रहा है। आज हिन्दी जनसंचार माध्यमों का विकास भी तीव्र गति से हो रहा है, आज हमारी हिन्दी भाषा भी जनसंचार के क्षेत्र में अपनी धाक जमा रही है, आज हिन्दी विश्व भाषा बन गयी है।

**संदर्भ ग्रंथ–**

1. संचार माध्यम लेखन–गौरीशंकर रैणा
2. प्रयोजनमूलक हिन्दी–डॉ. पी. लता

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः75-78

# हिन्दी पत्रकारिता

–कृतिका चौधरी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, केन्द्रीय विश्वविद्यालय, हिमाचल प्रदेश

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

आज के युग को सूचना क्रांति का युग कहा गया है। हर इंसान एक दिन में ही अनगिनत सूचनाएँ एकत्रित कर लेता है, क्योंकि मानव की प्रकृति जिज्ञासु है। वह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक हर तरह की सूचनाएँ प्राप्त कर सुसंस्कृत कहलाना चाहता है। ये सूचनाएँ ही हमारा बौद्धिक विकास करती हैं। ''पत्रकारिता 'सत्यं, शिवं, सुंदरम' की अभिव्यक्ति है। लोकहित और लोककल्याण की भावना में मानवीय चेतना को उदात बनाया है और यहीं से पत्रकारिता का जन्म होता हैं मनुष्य केवल पेट भरने और अपने स्वार्थ की परिधियों से घिरा रहने वाला प्राणी नहीं हैं''1 सूचनाओं का दौर आदिकाल से चला आ रहा है। आदिकाल में साधन उतने उन्नत नहीं थे तब भी लोग संप्रेषण करते थे। सूचनाओं को प्रेषित करने के लिए उन्होंने अनेक वाद्य यंत्रों का आश्रय लिया। ''आदिम सांस्कृतियों में सामूहिक रूप में रहना प्रारंभ करने वाले मानव समाज के पास संचार माध्यम नहीं विकसित हुए थे, जिससे वे प्राकृतिक व आपदाओं से बचने की स्थिति को व्यापक रूप से प्रसारित करते। इसके लिए वे एक सीमित समूह में कंठ छवनियों, वाद्य यंत्रों एवं प्रतीकों का प्रयोग करते थे।''2

पत्रकारिता का उद्देश्य केवल सूचना देना तथा संवाद स्थापित करना हैं माध्यम अलग–अलग हो सकते हैं। परंतु उद्देश्य केवल एक ही रहा है। वैदिक तथा पौराणिक युग से ही पत्रकारिता का अस्तित्व रहा है। इस युग में सूचनाओं का माध्यम ताड़पत्र, भोज पत्र, शिलालेख आदि रहे। पौराणिक काल की बात करें तो देवर्षि नारद को पत्रकारिता का जनक कहा गया है, नारद सदैव लोकहित तथा लोक कल्याण में लीन रहे। पुराणों में वर्णित है, कि नारद समस्त गतिविधियों से राजा इन्द्र को परिचित रखते थे। इसलिए इन्हें आदि पत्रकार भी कहा जाता है। वे हर सूचना को एक–स्थान से दूसरे स्थान पर नहीं पहुँचाते थे अपितु बुद्धि विवेक का प्रयोग कर महत्व पूर्ण सूचनाओं को ही प्रसारित करते थे। इन्हीं सब कारणों से नारद जी को पत्रकारिता का आदि–पुरुष कहा गया है।

''रामायण काल में भी पत्रकारिता का स्वरूप रहा माध्यम बदल गए परंतु सूचनाएँ एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाई जाती थी कुछ सामाजिक कारणों से कुछ राजनीतिक कारणों से। ''रामायण काल में संवाददाता के स्थान पर गुप्तचर, चार, चर, प्रणिधि, चारक दूत वेतालिक, बंदी आदि शब्दों का प्रयोग होता था।''3 इस काल में हनुमान संवाददाता के रूप में हमारे समक्ष उभरे हैं। साथ ही साथ इस काल में पारितोषिक भी दिए जाते थे। परंतु शुभ संवादों के बदले ही पारितोषिक दिए जाते थे। अतः हम कह सकते हैं कि गुप्त चरों ने इस काल में पत्रकारिता को बढ़ाने में योगदान दिया। महाभारत कालीन पत्रकारिता का स्वरूप भी रामायण कालीन पत्रकारिता जैसा ही रहा हैं यहाँ भी पत्रकारों के रूप में गुप्तचर तथा दूत थे। जोकि राज्य की प्रत्येक घटना का

ब्यौरा राजा तक पहुँचाते थे। प्रजा राजा के बारे में क्या राय रखती है। इन सब की जानकारी भी वह राजा तक पहुँचाते थे। ''द्रोण पर्व में उल्लेख प्राप्त होता है कि राष्ट्र की तरह सेवाओं में भी गुप्तचर छिपे रहते थे। जिनका काम अपने–अपने पक्षों को समाचार एवं योजनाओं की जानकारी भेजना तथा इस प्रकार की सूचनाओं को शत्रु पक्ष तक पहुँचने से रोकना भी था। अर्जुन ने कृष्ण से चर्चा किए बिना जयद्रथ को सूर्य छिपने से पहले मार डालने और सफल न होने पर स्वयं जलकर मरने की प्रतिज्ञा की। कृष्ण ने गुप्तचरों के माध्यम से वस्तु स्थिति का जायजा लिया। उन्होंने चक्रव्यूह की भी पूरी जानकारी प्राप्त की थी।''4 इससे यह तो स्पष्ट हो जाता है कि श्री कृष्ण इस युग में सबसे बड़े दूत तथा संवाददाता माने गए हैं। इसी युग में एक ओर व्यक्ति था, जिसका काम सूचनाएँ पहुँचाना था जिसे हम 'वातिक' कहते हैं। वह कोई ओर नहीं संजय था। युद्ध का सारा हाल वह धृतराष्ट्र तथा गांधारी को बताता था। अतः हम कह सकते हैं कि पुराने युग में दूत, गुप्तचर के द्वारा ही सूचनाओं का संप्रेषण किया जाता था।

मुगलकालीन पत्रकारिता का स्वरूप वैसा ही रहा जैसा रामायण काल में रहा बस नाम में फारसी पन आ गया। इससे पहले अशोक तथा कनिष्क ने भी अपने राज्य की सूचनाओं के लिए गुप्तचर नियुक्त किए थे। इस काल में केवल नाम बदल दिए गए प्रारूप वहीं था। ''दरोगा ए डाक चौकी सम्राज्य और डाक विभाग का प्रधान होता था। वह अपने अधीन कर्मचारियों के माध्यम से सम्राज्य के विभिन्न भागों में होने वाली घटनाओं की जानकारी एकत्र करता था। यह जानकारी वह बादशाह को पोषित करता था। 'वाक्यानवीस' सेना के काम उसी प्रकार चलता था जैसे चारण व भाट चला करते थे। वह सेना तथा 'केंद्र को सैनिक अधिकारियों की गतिविधियों की जानकारी भेजता था। किंतु चारणों की तरह प्रेरणा देना उसका काम नहीं था। वह चुपचाप अपना काम करता था। 'सवानीह निगार' केवल महत्वपूर्ण घटनाओं के संबंध में गुप्त संवाददाता का कार्य करता था तथा वाक्य–ए–नवीरू पर नजर रखता था। खुफिया नवीस उसका सहायक होता था। इन्हें आधुनिक युग का विशेष संवाददाता और प्रादेशिक समाचार संवाददाता भी कहा जा सकता है। 'हरकारा' समाचार लाने, ले जाने का कार्य किया करता था। जिसे आज डाकिया कहते हैं।''5 हमें इस काल में व्यवस्थित पत्रकारिता का रूप हमारे समक्ष आता है, जो कहीं न कहीं आज भी प्रचलित हे। इसी काल में अखबार भी प्रचलित हो चुके थे केवल रूप थोड़ा सीमित था। अखबार केवल कुछ लोगा या यूँ कहें राजा को ही उपलब्ध थे आम जनता की पहुँच से बाहर थे। पत्रकारिता के विकास में प्रेस की महती भूमिका रही है। इसका विस्तार तथा विकास प्रेस के आगमन से ही संभव हो पाया है। चीन में सर्वप्रथम चौदहवीं शताब्दी के प्रारंभ में मुद्रण यंत्र का अविष्कार हुआ था। प्रथम समाचार 1340 में पैकिंग शहर चीन से ही हुआ। इसी तरह ये विश्व पत्रकारिता का जनक बन गया। भारत की बात करें तो पहला छापा खाना 1556 ई. में पुर्तगालियों ने गोवा में स्थापित किया। इसका उद्देश्य धर्म का प्रचार–प्रसार करना था।

हिंदी पत्रकारिता की सूत्रपात 30 मई 1826 ई. को कलकत्ता से प्रकाशित 'मार्तंड' से माना जाता है। इसके प्रकाश 'जुगल किशोर शुक्ल' थे। ''भारतीय पत्रकारिता की पृष्ठ भूमि में अनेक सरकारी विरोध, दमन, शोषण और बलिदान के प्रसंग रहे हैं। इन सभी स्थितियों को पार करती हुई, भारतीय भाषाओं के सहारे पत्रकारिता ने चलना सीखा। कलकत्ता के जीवन में ही हिंदी पत्रकारिता का विकास हुआ और उसी के परिणाम स्वरूप हिंदी के प्रथम साप्ताहिक पत्र उदंत मार्तंड का प्रकाशन आरंभ हुआ।''6 पहले–पहल–पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य समाज सुधार था परंतु समय के साथ–साथ उसमें राजनीति, समाज, अर्थ व्यवस्था को भी स्थान दिया

गया और उनका मुख्य स्वर राष्ट्रीयता बन गया। दुर्भाग्यपूर्ण आर्थिक कठिनाइयों के कारण ये केवल एक साल तक ही चला तथा उसके बाद बंद हो गया। इसी कड़ी में अगला महत्वपूर्ण पत्र बंगदूत है, ये भी कलकत्ता से प्रकाशित होता था। ये पहले बंगला में तथा बाद में फारसी में छपता था। इसके बाद बनारस अखबार प्रकाश में आया ''बनारस अखबार में देवनागरी का प्रयोग होता था। यह हिंदी प्रदेश का प्रथम समाचार पत्र था।''7

1854 में 'समाचार सुधार वर्षण' पत्र निकला 'इसके संपादक 'श्याम सुंदर दास थे'। इसे पहला 'दैनिक समाचार पत्र' माना जाता है। 1857 स्वतंत्रता संग्राम से पहले अनेक पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही थी। क्रांति के कारण अखबारों का स्वर भी क्रांतिकारी हो रहा था। इस युग की पत्रिकाओं में पगामें आजादी जैसी पत्रिकाओं की महती भूमिका रही, जो लोगों में चेतना, साहस, जागृति लाने के लिए कारगर साबित हुई। सोई पड़ी जनता को उनके द्वन्द्व के लिए जागृत करने का काम इस युग की पत्रिकाओं ने बखूबी किया। इन पत्रिकाओं को आर्थिक कठिनाइयों, सरकारी नियंत्रण आदि का भी सामना करना पड़ा। बहुत सारे पत्र आर्थिक कठिनाइयों के कारण बंद हो गए।

भारतेंदु युग में सभी साहित्यकार पत्रकार भी रहे तथा इस युग ने पत्रकारिता को एक नया आयाम भी दिया। इन पत्रिकाओं में राष्ट्रीयता तथा नवजागरण की शुरूआत थी। भारतेंदु मंडल तैयार कर पत्रकारिता को ओर सुदृढ़ किया, इसमें प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ठा भट्ट, बदरी नारायण चौधरी प्रेमद्यन, केशवराम भट्ट, रामदीन सिंह, लाला श्री निवास दास आदि व्यक्तियों के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सब ने पत्रकारों ने मिलकर इस युग के सत्य को ज्यों का त्यों जनता के समक्ष प्रस्तुत किया। वहीं दूसरी ओर महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' (1903) में सम्पादक का कार्यभार संभाला। इसी युग में चंद्रधर शर्मा गुलेरी 1902 में समालोचक पत्र निकाला। ''केसरी और मराठा' जैसे पत्र रूपी दो सशक्त हथियार तिलक के पास थे, जिनसे उन्होंने स्वतंत्रता का दीप प्रदीप्त किया। असहयोग, कानून भंग, विद्रोह बहिष्कार आदि की भावना तिलक में प्रचारित थी। इन पत्रों में जनता को तत्कालीन व्यवस्था के प्रति आलोचनात्मक रवैया अपनाने की प्रेरणा दी। 'केसरी' का स्वर प्रबल था। कहा जाता है, 'मराठा' 'केसरी' का नाम संस्करण था। 'केसरी' उकसाता था, मराठा समझाता था। केवल सप्तक का भेद था। राग एक ही था।''8 इसके पश्चात् 1909 में काशी से जयशंकर प्रसाद ने 'इंदु' पत्रिका का प्रकाशन किया। कर्म योगी मर्यादा, प्रताप, सम्मेलन, तरंगिणी, आनंद, स्वदेश कर्मवीर आदि पत्रिकाओं ने अपनी अहम भूमिका निभाई है।

1947 से अब तक–स्वतंत्रता के बाद हिंदी पत्र–पत्रिकाओं का बहुआयामी विकास हुआ। नई चेतना, विज्ञान, तकनीक के प्रभाव में हिंदी पत्रों का स्वरूप निरंतर परिवर्तित होता रहा और साथ ही दैनिक पत्र से लेकर साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, छःमाही तथा वार्षिक पत्रिकाओं का प्रकाशन निरंतर होने लगा। इस नए युग के समाचार पत्रों का उद्देश्य जन–जागृति, सामाजिक उत्थान, शिक्षा, मनोरंजन, सूचना के साथ विभिद विषयों का विश्लेषण करना था। इस दौर में कुछ ऐसे समाचार पत्र तथा पत्रिकाएँ प्रसारित हुई जो एक साथ अनेक समसामयिक विषयों को लेकर चल रही थी। और कुछ विशिष्ट क्षेत्र या विषय पर अलग से केंद्रित थी। कुछ अंग्रेजी समाचार पत्रों ने हिंदी दैनिक पत्र निकाले लखनऊ में 'पायीनयर' से स्वतंत्र भारत 'नेशनल हेरालड' से 'नवजीवन', 'टाइम्स ऑफ इंडिया' से 'नव भारत टाइम' इंडियन एक्सप्रेस से 'जनसत्ता', अमृत बाजार पत्रिका से 'अमृत पत्रिका' आदि पत्र निकले। इनके अलावा। अमर उजाला, नवभारत, नई दुनिया, दैनिक ट्रिब्युन आदि निकले स्वतंत्रता के बाद समाचार पत्रों के संगठन में एक बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि इसमें पत्र–प्रकाशन एक

उद्योग बन गया। जिस कारण प्रतिष्ठित आदर्शवादी पत्र भी न टिक सकें। जिसका एक उदाहरण है– गाँधीजी का हरिजन सेवक जिसने इस समय में दम तोड़ दिया। स्वतंत्रता के बाद के कुछ साप्ताहिक पत्र है यथा– हिंदुस्तान, 'धर्म युग' ये हिंदी साहित्य की नई प्रवृत्तियों का दपर्ण बना 'दिनमान' – इसमें देश–विदेश की घटनाओं की विषद जानकारी और उनके कारणों तथा प्रभाव की व्याख्या होती है। यह जीवन के अनेक पक्षों (साहित्य, कला, ज्ञान, विज्ञान, खेल–कूद आदि को प्रस्तुत करता तथा उन पर सम्मति प्रकट करता है।

''पाँच जन्य' – यह राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का मुख्य पत्र है। तथा हिंदु राष्ट्र की विचारधारा का प्रतिपादन करता है। 'नवभारत टाइम्स' 1947 में सत्यदेव विद्यालंकार के सम्पादन में नवभारत प्रकाशित हुआ। उसके बाद इसमें टाइम्स शब्द जोड़ा गया। 'जनसत्ता' – बम्बई इंडियन एक्सप्रेस न्यूज पेपरस लिमिटेड की ओर से प्रकाशित जनसत्ता ने हिंदी पत्रकारिता को नए आयाम प्रदान किए। खोजपूर्ण पत्रकारिता, स्पष्ट संपादकीय शैली तथा भावानुकूल भाषा इसकी प्रमुख विशेषता है। 'नई दुनिया' 1947 में 'इंदौर' से हुआ था। यह आरंभ में सायंकालीन पत्र था। 1952 में यह प्रातः कालीन पत्र हो गया। 'आज'– काशी प्रसाद शिव प्रसादगुप्त ने लंदन यात्रा के दौरान लंदन टाइम्स देखा था। इसी की तर्ज पर इन्होंने 'आज' का प्रकाशन आरंभ किया। ये परम्परा आज भी सूचारू रूप से चल रही है तथा जब तक मानव का अस्तित्व है, तब तक ये निरंतर चलती रहेगी।

**संदर्भ सूची–**


1. भगत कुमार अरुण, हिंदी की आधुनिक पत्रकारिता, पृष्ठ 1
2. पाण्डेय लक्ष्मीकांत, पत्रकारिता : सिद्धांत और प्रयोग, पृष्ठ 13
3. पंत चंद नवीन, पत्रकारिता के स्वरूप एवं प्रमुख पत्रकार, पृष्ठ 17
4. जैन कुमार पवन, विदेशों में हिंदी पत्रकारिता, पृष्ठ 78
5. वही, पृष्ठ 11
6. गोस्वामी प्रेमचंद, पत्रकारिता का प्रतिमान, पृष्ठ 13
7. शर्मा राम अवतार, पत्रकारिता और साहित्य, पृष्ठ 51
8. वर्मा मृदुला, हिंदी का सर्वोदय पत्रकारिता : विकास और विविध आयाम, पृष्ठ 23

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः79-83

# महाप्रस्थान में मिथक और नये संदर्भ का अध्ययन

–नटराज गुप्ता
सहायक प्राध्यापक हिन्दी, नक्सलबाड़ी महाविद्यालय, दार्जीलिंग

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

साठोत्तरी हिंदी कविता जिसे नई कविता के नाम से भी जाना जाता है। इसने हिंदी काव्यधाराकों एक विशिष्ट दृष्टि और दिशा प्रदान की। आधुनिक काल परिवर्तन और जागृति का काल है। इस नवनवोंमेश काल में, साहित्य में ईश्वर के बदले मनुष्य केंद्र में है। नई काव्य धारा के कवियों ने इस बात को समझा और इसे अभिव्यक्त करने के लिए उनका झुकाव मिथकीय कथाओं की ओर होने लगा। साठोत्तरी कवियों ने महसूस किया की स्वतंत्रता के पश्चात् लोकतंत्र के लिए, अभिव्यक्ति के लिए एक आमजन के सुख–दुःख के लिए कोई ईमानदार कोशिश नहीं की गई। "समाज के भीतरी मन की अभिव्यक्ति के लिये अन्य कवियों को द्वंदात्मक चिंतन प्रक्रिया से गुजरना पड़ा। उन्होंने व्यक्तियों, वस्तुओं तथा समकालीन घटनाक्रमों को विश्वसनीय आकार देने के लिए बहुस्तरीय अर्थ संदर्भों की तलाश शुरू की। इसी अन्वेषण प्रक्रिया में उनकी दृष्टि पूरा कथाओं के ऊपर पड़ी। इन नये कवियों ने पौराणिक कथाओं को काव्य सृजन का आधार बिंदु मानकर अपने समय के प्रभीतिकर समस्याओं से जूझने, विकसित होते आदमी को बचाने और संक्रमणशील स्थितियों को इतिहास के वास्तविकताओं से जोड़ने का रचनात्मक अभियान चलाया। नये कवियों का यह नया प्रत्याभीज्ञान था। हिंदी कविता का यह नया प्रत्यय था, जिसे मिथक कहा गया"1। मिथक काव्य का एक अत्यंत महत्वपूर्ण उपादान है। प्रत्येक देश, समाज, युग का काव्य मिथक, मिथकीय कथाओं का आश्रय लेकर अपना स्वरूप संवर्धन करते रहा है। तत्कालीन समय परिस्थितियों के समस्याओं को अभिव्यक्त कर समस्या के समाधान के लिए निराकरण की राह भी दिखाते रहा है।

नरेश मेहता एक ऐसा ही कवि हैं जिन्होंने मिथकीय–पौराणिक कथाओं का आश्रय लेकर तत्कालीन युग के समस्याओं का समाधान चाहा है। नरेश मेहता के प्रबंध काव्यों में मिथक–काव्य की सर्जनात्मक प्रेरणा बहुत गहरे तक है। इनकी मिथकीय–पौराणिक खंडकाव्यों का सृजनात्मक परिप्रेक्ष्य ,परंपरा–बोध और आधुनिक–बोध के समन्वित वैचारिक आधार पर अवलंबित है। नरेश मेहता रचित महाप्रस्थान एक ऐसा ही खंडकाव्य है जिसमें कवि ने'महाभारत' की कथा प्रसंग का आश्रय लेकर राज्य, राज्य व्यवस्था, निरंकुशता एवं युद्ध की समस्या को समझने व इसके समाधान के लिए एक सार्थक प्रयास किया है।

"महाप्रस्थान की रचना के लिए कवि को प्रेरणा का बल भी युगबोध ही है। यह युगबोध अंतःसंबंधों से मिलता है, जो कवि की भूमिका में वर्णित है।"2 प्रस्तुत खंडकाव्य में अर्जुन और युधिष्ठिर की संवाद योजना अपने आप में अनूठी हैं। कवि ने इसके केंद्र में आमजन को ध्यान में रखते हुए असाधारण चिंता को उठाया है। आज व्यक्ति के सामने जो भी समस्याएं उत्पन्न हुई है वह उसके व्यक्तित्व और चरित्र की ही देन हैं। यही कारण है कि कवि इस बात को समझाने के लिए प्रस्तुत खंडकाव्य में अर्जुन के माध्यम से युधिष्ठिर से व्यक्ति के पुरुषार्थ

के संकल्प का अर्थ स्पष्ट करने के लिए कोशिश करते हैं–

"इस एक स्थिति पर पहुँच कर, दुखी होना भी
अमानवीय होना हो जाता है।
प्रश्न और जिज्ञासा में अंतर समझते हो पार्थ
सत्य की प्राप्तिध्दूसरों से प्रश्न करके नहीं होती।
किंतु ये दुर्ग, प्रसाद,स्मृति भवन चरण प्रशस्तियां
ये झूठे इतिहास वाले शिलालेख ध्व्यक्ति को अमरता देंगे पार्थ
जड़, जड़का ही प्रतिनिधित्व कर सकता है।"3

महाभारत की मूल समस्या की ओर संकेत करते हुए नरेश मेहता लिखते हैं–"रामायण व्यक्ति चक्रव्यूह की करुण कथा है तो महाभारत सामाजिक व्यूहों, प्रतिवयूह की अनंत महागाथा। एक में दुःख भोगते मनुष्य का एकांत बांशीरव है तो दूसरा युद्ध का मीमानवों का दुर्घर्षवाद्ध वृंद। दोनों के केंद्र में राज्य हैं। कैसी विषमता है कि सभ्यता का प्रतापी ग्रह भी राज्य ही है तथा मारकेश भी। राज्य त्याग के बाद राम वनवासी होते हैं तो राज्य प्राप्ति होने पर भी भरत आश्रमवासी। राज्य का अर्थ न भोगी न कांक्षी। किसी के लिए कुछ नहीं रहता। शालीनभरत ने तो राज्य की कांक्षा भी नहीं की थी। राज्य यह कैसे प्रतीक विनाशक है जो कि अपने संपर्क में आने वाले को केवल उलझाता ही है। महाभारत में तो यह प्रतीक– विनायक विकसिततम रूप में विद्यमान है!"4 इससे स्पष्ट है कि राज्य और राजनीति सभी समस्याओं की जड़ है। आज वर्तमान समय में मानव सभ्यता ऐसी समस्याओं में फंसी हुई है जिसके न सुलझने पर आगे विनाश का रास्ता तैयार है। रामायण के राम युद्ध नहीं चाहते किंतु महाप्रस्थान में हर एक व्यक्ति एक दूसरे से प्रतिशोध लेने की ज्वाला में जल रहा है। युद्ध किसी समस्या का हल नहीं है। अपितु अनेक युद्धो और उलझाओं का कारण बन जाता है। आज मानव सभ्यता ने विज्ञान के क्षेत्र में इतनी तरक्की की है और इतने भयंकर अस्त–शास्त्रों का निर्माण किया है कि यहीं विज्ञान मानव जाति को आगे ले जाने के बजाय आदिम युग में भी पहुंचा सकती है। परमाणु हथियारों के विनाश लीला से सभी परिचित हो ही चूके हैं।

प्रस्तूत खण्डकाव्य महाभारत के महाप्रस्थानिक पर्व पर आधारित है। अधर्म पर धर्म की विजय के लिए, अनीतिका विरोध करने के लिए, अधिकार प्राप्ति के लिए महाभारत युद्ध आरम्भ होता है। युद्ध में भयानक नरसंहार होता है। इस नरसंहार को देखकर पांडवों के मन मे ग्लानि की भावना उत्त्पन्न होती है, जिससे उनका मन पाश्चाताप की अग्नि में जलने लगता है। अतः वे लोग पश्चाताप के लिए राज्य त्याग कर हिमालय में गलने के लिए प्रस्थान करता है। इसी प्रसिद्ध प्रसंग को ले कर कवि ने महाप्रस्थान खंड काव्य की रचना की है। और आधुनिक नवीन संदर्भो को अभिव्यक्त करने की सफल कोशिश की है। सामान्यत इस काव्य का केंद्र बिंदु युद्ध माना जाता है। किंतु इस कथा को व्यक्ति, सामाजिक राजनीतिक, राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक धरातल पर प्रस्तुत किया है। पौराणिक कथा होते हुए भी आधुनिक नवीन संदर्भ को अभिव्यक्त करता है।

नरेश मेहता के लिए युद्ध मानव सभ्यता की सबसे बड़ी भयानक दुर्घटना है। युद्ध के लिए जिम्मेदार व्यक्ति को इतिहास कभी भी माफ नहीं करता है। कवि का मानना है कि जब सार्वजनिक जीवन में सारी मूल्य और मर्यादाएं मानवी उदात्तता जब नष्ट हो जाती है तब युद्ध अवश्यंभावी है–

" मूल्य और मानवीय उदत्तताएँ जब सार्वजनिक जीवन में

हो जाती है शेष तभी होता है युद्ध–युद्ध का घोष।

युधिष्ठिर हों या हों कृष्ण युद्ध का एकमात्र हैं तर्क

विजय के सम्मुख मानवता का क्या हैं अर्थ?"5

कवि की दृष्टि में युद्ध एक ऐसा अपराध है जिसकी प्रायश्चित अश्वमेघ और राज्यसूय यज्ञ द्वारा भी होने वाली नहीं है।

"युद्ध प्रताड़ित अंतर का वह सत्य

अश्वमेघ और राजसूय यज्ञों से भी

जब शोध ना पाये तब पुनः दांव पर लगा

स्वत्व वल्कल पहने निकल पड़े वैश्वानर पथ पर।"6

युद्ध में जो भयानक रक्तपात होता है उस रक्तपात से कोई भी मानव शांति का अनुभव नहीं कर सकता है। युधिष्ठिर भी युद्ध की विभीषिका को याद कर अशांत हो जाते हैं। उन्हें लगता है कि हिंसा और प्रतिहिंसा के दावानल में सबका विवेक, सब की मर्यादा टूट जाती है–

"युद्ध प्रतिहिंसाओं की दवानल में

न कृष्ण, न पार्थ, न तुम ना मैं

कोई भी सुरक्षित नहीं रह पाता"7

आज महा शक्तिशाली राष्ट्र पशु के समान बर्बर होते जा रहे हैं लेकिन वेयह भूल जाते हैं के हिंसा हिंसा को ही जन्म देती है और प्रति हिंसा की आग में जल रहे लोग युद्ध का कारण बन जाते हैं। हम अतीत में देखते हैं कि किस तरह प्रथम विश्व युद्ध में जर्मनी को मित्र राष्ट्रों ने अपमानजनक शर्तों को मानने के लिए बाध्य कर दिया था और उसी अपमान बोध ने जर्मनी में हिटलर जैसे तानाशाह को जन्म दिया जो द्वितिय विश्व युद्ध का कारण बना।

कवि नरेश मेहता पुनः युद्ध नहीं चाहते हैं। वे मानव में युधिष्ठिर के माध्यम से मानवमात्र में करुणा की भावना को साकार करना चाहते हैं। करुणा ऐसा धर्म है जिसके आगे कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है। जिस दिन मानव में करुणा की भावना व्याप्त हो जाएगी सारे के सारे समस्याओं का अंत भी हो जायेगा। युधिष्ठिर मिथकीय पौराणिक पात्र हैं। किंतु आधुनिक युग के मानव के सोच का उनमें आरोपण कर कवि नरेश मेहता ने नवीन अर्थ अभिव्यक्ति की है। मानव का एकही धर्म है,वहहै–करुणा।

करुणा मेरा धर्म है भीम।

किसी भी संबंध राज्य या शक्ति के सामने

मैं इसे नहीं छोड़ सकता।

विश्वास करो धर्म के मूल्य पर

मैं स्वर्ग भी अस्वीकार कर सकता हूँ भीम" ।8

यही करुणा रूपी मानवतावादी धर्म मानव जाति को युद्ध के विनाशलीला से बचा सकता है। यही करुणा भावना मानव को मनुष्यत्व प्रदान करती है। वर्तमान में जितने भी युद्ध हो रहे हैं उन सबके मूल में राज्य, साम्राज्य, संपदा, संबंध है। ये ऐसे कुचक्र हैं जिन्हें व्यक्ति जाने–अनजाने में अपने चारों ओर बुन लेता है फिर अपने ही बुने हुए जाल से उसका बाहर निकालना कठिन हो जाता है।

कवि हिम में चलते युधिष्ठिर के माध्यम से इस बात को स्पष्ट करते जाते है कि अमानवीय मूल्यों को अपनाने के चलते ही ऐसी परिस्थितियां आई है। युधिष्ठिर इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि–

"वर्षो के वैचारिक मंथन के बाद ही
मैंने यह निर्णय लिया था बन्धु!
कि सारे मानवीय दुखों का आधार–
यह राज्य है। राज्य व्यवस्था है
और राज्य व्यवस्था का दर्शन है"9

कवि नरेश मेहता साधारणजन के प्रति सचेत है। यह साधारण जन ही किसी भी राष्ट्र का प्राण होता है। साधारणजन की स्थिति अच्छी हो तो राष्ट्र भी मजबूत होता है, उन्नति करता है। किंतु युद्ध की स्थिति में यही आमजन को सर्वाधिक पीड़ा, अपमान और दुखों का सामना करना पड़ता है। इनकी स्वतंत्रता का अपहरण कर लिया जाता है। वर्तमान में भी हम देखते है कि स्थितियां ऐसी ही है। युधिष्ठिर वर्तमान समय, युग के प्रतिनिधि हैं। नरेश मेहता ने युधिष्ठिर के माध्यम से आम जनता के प्रति संवेदना जगाई है।

मानवीय अस्तित्व में कवि का दृढ़ विश्वास है महाप्रस्थान के माध्यम से कवि ने वर्तमान समय में अस्तित्व बोध को बड़े ही कुशलतापूर्वक स्थापित किया है। मानव का अस्तित्व रहेगा तभी तो मानव जीवन में सुख सुविधा का भोग कर पायेगा अन्यथा नहीं। वस्तुतः साम्राज्य से भी बड़ा अनाम मानव अस्तित्व है। कवि नरेश मेहता को मानवीय अस्तित्व में अटूट विश्वास है। युधिष्ठिर कहते हैं–

"किसी भी साम्राज्य से बड़ा है एक बंधु
एक अनाम मनुष्य।। मुझे मनुष्य में विराजे देवता में
सदा विश्वास रहा है "10

कवि नरेश मेहता उस साधारण लघु मानव के बारे में सोचते हैं जिसकी देह को छीलकर ही अपने सुविधानुसार इतिहास लिखकर राजाओं, शक्तिशाली पुरुषों ने स्वयं अपना ही महिमामंडन किया है। महाप्रस्थान के माध्यम से कवि लघु मानव की इस समस्या को नए अर्थ प्रदान करने की कोशिश की है और ऐसे शक्तिशाली पुरुषों का सच आमजन समाज के सम्मुख रखा है।

हमारे समाज में धर्म और विचार की इसलिए प्रतिष्ठा हुई ताकि राज्य के निरंकुशता को नियंत्रित किया जा सके। अगर राज्य निरंकुश होगा तो उसका उत्तराधिकारी भी वैसा ही होगा आज आधुनिक समय में हम देख रहे हैं कि ऐसा ही हो रहा है जिसमें धर्म और विचार का लोप होने से राज्य निरंकुश होते जा रहे हैं। अतः नरेश मेहता इस मिथक की कथा के माध्यम से धर्म और विचार को नवीन अर्थ–संदर्भ प्रदान करते हैं–

राज्य के नहीं धर्म के नियमों पर समाज आधारित है। राज्य पर अंकुश बने रहने केलिए
धर्म और विचार को स्वतंत्र रहने दो पार्थ
अन्यथा यह समाज रहने के योग्य नहीं रह जाएगा।"11

राज्य की निरंकुशता मानव के लिए दुःखदायी है। ऐसी व्यवस्था सभ्य जनतांत्रिक समाज में कभी भी स्वीकार्य नहीं हो सकती है। वस्तुतः निरंकुश राज्य व्यवस्था संपूर्ण मानवता के लिए एक षड्यंत्र के समान है। युधिष्ठिर के माध्यम से कवि ने इस नए अर्थ संदर्भ की अभिव्यक्ति की है।

समाज और व्यक्ति के अन्तर्सम्बन्ध पर प्रकाश डालते हुए कवि ने नवीन मूल्यों की स्थापना नये

अर्थ–संदर्भ के साथ प्रस्तुत करने की सफल चेष्टा की है। युधिष्ठिर कहते है–

समाज अमूर्त होता है व्यक्ति नहीं और
व्यक्ति के फुलत्व को कुचल दोगे तो वन
गंधमादन कैसे बन जाएगा पार्थ?
फूल का एकाकीपन अरण्य की सामूहिकता की शोभा है विरोधी नहीं।"12

वर्तमान में जितनी अराजकता बढ़ती जा रही है, मनुष्य संवेदनहीन होते जा रहा है, ऐसी स्थिति में कवि की ऐसी सोच अत्यंत ही क्रांतिकारी है। युधिष्ठिर कहते हैं–

"सृष्टि करुणा के बदले में स्वर्ग भी नहीं स्वीकारूँगा।"13

नरेश मेहता मूल रूप से कवि हैं। वसुधैव कुटुम्बकम ही इनका ध्येय है। यही कारण है कि अपने 'महाप्रस्थान' खण्डकाव्य के मूल में भी यही भावना है। महाप्रस्थान की हर एक पंक्ति नये अर्थ संदर्भ प्रदान करती है। कवि ने साम्राज्यवाद, शासक वर्ग कि निरंकुशता, युद्ध, नियतिवाद का विरोध किया है। समय रहते अगर मानव जाति विवेकशीलता का परिचय नहीं देती है तो समाज को बर्बर हो जाने से कोई भी नहीं रोक सकता है।

**संदर्भ ग्रंथ–सूची–**


1. कुमार रश्मि नयी कविता के मिथक–काव्य, पृष्ठ–8, वाणी प्रकाशन, 21–एदरियागंज, नई दिल्ली
2. वही, पृष्ठ–36
3. मेहता नरेश–महाप्रस्थान, समिधा भाग–2, पृष्ठ–330, लोक भारती प्रकाशन, 15– ।, महात्मा गांधी मार्ग, संस्करण 2005।
4. वही, भूमि का से, पृष्ठ–537
5. वही, पृष्ठ–276
6. वही, पृष्ठ–276
7. वही, पृष्ठ–३३३
8. वही, पृष्ठ–396
9. वही, पृष्ठ–326
10. वही, पृष्ठ–396
11. वही, पृष्ठ–326
12. वही, पृष्ठ–328
13. वही, पृष्ठ–352

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः84-86

# राष्ट्रीय क्षितिज पर हिंदी का बहुआयामी स्वरूप

**–डॉ० जंग बहादुर पाण्डेय**
अतिथि प्रो. अलतो विश्वविद्यालय, हेलसिंकी, फिनलैंड

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

कोटि कोटि कंठो की भाषा
जन मन की मुखरित अभिलाषा
हिंदी है पहचान हमारी
हिन्दी हम सब की परिभाषा

भाषा किसी भी देश की संस्कृति का अक्षय कोश होती है। भाषा परम्परा संस्कृति और आधुनिकता के पथ पर गतिमान होकर परिवर्तनशील होती है। वस्तुतः भाषा समाज और परंपरा को जोड़े रखने का प्रेम बंधन भी है। वह भटकाव में आस्था की अक्षय ज्योर्तिमय मार्गदर्शक स्तम्भ भी है, सौम्य और सर्जनात्मकता का अपराजेय संकल्प हिंदी की बुनियादी प्रकृति है। हिंदी भाषा को भाषा वैज्ञानिकों ने स्थूल रूप से सामान्य और प्रयोजन में विभक्त किया है, सुखद सूचना यह है कि हिंदी की इस नितांत ताजा टटकी और भाषिक संरचना स्वरूप को विश्व स्तर पर सम्मान मिला है।

हिंदी के लिए चीन अब हिमालय पार नहीं रहा। पाकिस्तान में इसने अपने होने का परचम लहरा दिया है, समुद्र पार जाकर अब यह विश्व के अनेकानेक महाद्वीपों में इंटरनेट, ई–मेल एवं कंप्यूटर के माध्यम से अपनी सामर्थ्य का एहसास कराकर अब विश्व ग्लोब पर हिंदी पूरी तरह स्थापित हो चुकी है। अर्थात् विश्व धरातल पर ज्ञान एवं व्यवहार के नए–नए खुलते क्षितिजों से जन्मी अपेक्षाओं के सन्दर्भ में, आधुनिक हिंदी भाषा ने अर्थवत्ता का एहसास कराया है। हिंदी भाषा की उपादेयता इस बात से प्रमाणित होती है कि यह हमारे बहुसंख्य लोगों की भाषा है, साहित्यकार व कवियों की भाषा है, लोकप्रिय फिल्मों की भाषा है, इसमें विज्ञान और व्यापार की अद्यतन जानकारियां भी हैं। यह वोट मांगने की इकलौती सशक्त भाषा है।

गुलामी के बाद पश्चिम के समृद्ध समाज से कदम से कदम मिलाने की चाह ने अंग्रेजी को अपनाया, अंग्रेजीयत को ओढ़ा लेकिन अंग्रेजी से आत्म गौरव और लोगों को प्यार का अनुभव नहीं हुआ। आज दिखावा और आत्म गौरव के बीच द्वंद्व है और इन सब के मध्य हिंदी हमारी अस्मिता हमारे आत्म गौरव की भाषा है।

विज्ञान के नियम बताते हैं कि जो उपयोगी नहीं है, वह बचेगा भी नहीं और उसका बचे रहना जरूरी भी नहीं है लेकिन भाषा के संबंध में श्याम–श्वेत ढंग से सोचा नहीं जा सकता क्योंकि भाषाएं कोई सहज उत्पाद नहीं है जिसकी सुनिश्चित उपयोगिता या अनुपयोगिता निर्धारित की जा सके। भाषाएं वह संपत्ति है जो उसी तरह महत्वपूर्ण है जैसे पर्यावरण के लिए गैर जरूरी समझी जाने वाली वनस्पतियां जैव विविधता का स्रोत होती है। जिस तरह मैंग्रोन समुद्री काई को कुछ दशक पहले तक फिजूल समझा जाता था और अमेजन घाटी से मैंग्रोन वनों को तहस–नहस किए जाने पर किसी को आपत्ति नहीं थी। बाद में पता चला कि धरती को ग्लोबल वार्मिंग से बचाने का यह प्राकृतिक स्रोत है, तब कहीं जाकर इसकी प्रतिष्ठा स्थापित हुई। इसी तरह भाषाएं भी हैं, भाषाओं का बने रहना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि वह अभिव्यक्ति को सौ फीसदी तक परिपूर्ण और सहज बनाती हैं। ये नहीं होंगी तो वैभवशाली संपर्क भाषाएं कच्चा माल कहां से हासिल करेगी? यानी उन्हें नए शब्द और नई अभिव्यक्तियां कहां से मिलेंगी? यह चिंता और बहस का विषय है। आज हिंदी समाज का व्याकरण बदल रहा है, भाषा का ही व्याकरण नहीं होता अपितु व्याकरण से हमारा तात्पर्य सामाजिक इकाइयों और संरचनाओं से है जो स्थिर नहीं रहती समयानुसार बदलती रहती है।

यह सच है कि कंप्यूटर आदि से संबंध ढेरों नए शब्द हमारी शब्दावली में शामिल हुए हैं परंतु अब हम अपने दादा–परदादा की तरह बहुत सारी वनस्पतियों, कीटों और बहुत सी दूसरी चीजों के नाम नहीं जानते।

यूनेस्को की एक रिपोर्ट बताती है कि हर वर्ष संसार से अनेक जैविक प्रजातियों की तरह बीसियों भाषाएं भी सदा के लिए लुप्त होती जा रही हैं, अंततः कुछ बड़ी सक्षम भाषाएं ही शायद बची रह जाए और जो योग्यतम सिद्ध होगा वही टिकेगा।

यह भी सच है कि हिंदी के उद्भव और विकास का समूचा कालखंड उसके लिए निहायत प्रतिकूल रहा है, स्वाधीनता से पूर्व तक वह प्रायः राज्याश्रय विहिन ही रही। हिंदी मूलतः भारतीय जन की और जन्म प्रतिरोध की ही भाषा रही है लेकिन वर्तमान सांस्कृतिक भूमंडलीकरण ने हिंदी के समक्ष अत्यंत गंभीर तथा अभूतपूर्व चुनौती प्रस्तुत की है। स्वतंत्रता के पूर्व वह कभी राजभाषा या राज्याश्रय प्राप्त भाषा नहीं थी पर वह जन प्रतिरोध की भाषा, जन आकांक्षा का खुला मंच और इस महादेश के संश्लिष्ट, सामासिक, संस्कृति की सशक्त पहचान बनकर जन भाषा बनी। प्रत्येक क्षेत्र में हिंदी की उपस्थिति उसकी विलक्षण क्षमता का परिचायक है।

भौतिक शास्त्र का नियम है कि किसी पदार्थ पर जितना अधिक दबाव डाला जाता है वह उतना ही उठकर ऊपर आता है। न्यूटन का यह नियम निश्चय ही आज हिंदी भाषा पर लागू हो रहा है। हिंदी विश्व पटल पर अपने महती अस्तित्व को उजागर कर रही है। बीसवीं सदी के अंतिम वर्षों में सूचना क्रांति के तहत संपूर्ण विश्व में एकीकरण हुआ फलस्वरूप हिंदी, ज्ञान, विज्ञान, अनुसंधान, वाणिज्य, व्यापार, बाजार, संचार और प्रौद्योगिकी की सक्षम भाषा के रूप में विकसित हो जाती है।

हिंदी का सामना आज नए प्रश्नों में स्वरूपों से हो रहा है, हिंदी ने पिछले कुछ दशकों में असंख्य दिशाओं में असंख्य यात्राएं की है, सहसा यह विश्वास नहीं होता है कि यह वही भाषा है जिसके उन्नयन, संवर्धन और परिष्कार के लिए रचनाकारों, संपादकों, व्याकरणों व समाज सुधारकों का एक बड़ा समूह न जाने कितना श्रम करता रहा है। आज वही हिंदी ज्ञान विज्ञान और संप्रेषण की भाषा है। हिंदी के प्रयोजनमूलक अभिनव प्रतिरूप ने भाषा के सत्ता को सर्वथा नए–नए क्षेत्रों से संपृक्त कर दिया है। हिंदी जन भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा के सोपानों को पार करके विश्व भाषा बनने को अग्रसर है। हिंदी की नई पीढ़ी सक्षम है। उसका फलक बढ़ा है उसे इंटरनेट जैसा सशक्त माध्यम मिला है, जिसने दुनिया को उसकी मुट्ठी में समेट दिया है। हिंदी की ताकत बढ़ रही है। हिंदी को विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, कार्यालय संसद तथा अकादमियों में प्रतिष्ठा मिली, तमाम पुरस्कार, योजनाएं, संवर्धन और प्रेरणा के शासकीय प्रयास शुरू हुए। साहित्य सृजन से हटकर भाषा और ज्ञान के तमाम अनुशासनों पर हिंदी में काम शुरू हुआ है। रक्षा, अनुवांशिकी चिकित्सा, जीव विज्ञान, भौतिकी आदि क्षेत्रों में हिंदी की उपस्थिति दर्ज हो चुकी है। प्रत्येक ज्ञान और सूचना को अभिव्यक्ति देने में हिंदी का सामर्थ्य लगातार बढ़ रहा है। हिंदी सत्ता प्रतिष्ठानों के सहारे नहीं फैली बल्कि उसका विस्तार उसकी शक्ति स्वयं उसमें निहित है, अंग्रेजी से उसकी तुलना हमारा मंतव्य नहीं है। अंग्रेजी वर्षों से शासक वर्ग तथा प्रभु वर्गों की भाषा रही है। उसे एक दिन में सिंहासन से हटाया नहीं जा सकता। हिंदी का हस्तक्षेप सर्वथा नया है इसीलिए उसे लंबी और सुदीर्घ तैयारी के साथ विश्व भाषा के सिंहासन पर प्रतिष्ठित होने की प्रतीक्षा करनी चाहिए। हिंदी को 21 वीं सदी की भाषा बनाना है, आने वाले समय की चुनौतियों के मद्देनजर उसे ज्ञान, सूचनाओं और अनुसंधान की भाषा के रूप में स्वयं को सक्षम सिद्ध करना है।

हिंदी के पुरस्कर्ताओ, अध्येताओं, आचार्यों और हिंदी भाषा प्रयोक्ता समाज के लिए अद्यतन ही चिंता का विषय है कि अथक प्रयासों के बाद भी हिंदी की अपेक्षित प्रगति नहीं हो पाई है। राष्ट्रभाषा के रूप में उसके उत्तरोत्तर समर्थन और अंतरराष्ट्रीय विस्तार के बावजूद भारत में हिंदी अपनी यथोचित भूमिका अपेक्षित पैमाने पर क्यों नहीं निभा पाई? वस्तुतः हिंदी भाषा को आधुनिक युग में व्यवहारक्षम बनाने के लिए अनेक आयामों में विकसित करना पड़ा है, तथापि लोगों में अंग्रेजी के प्रति मोह का बढ़ना वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति में अवरोध उच्च स्तरों पर हिंदी संबंधी निर्णयों के प्रति अनास्था व उपेक्षा व्यापक विमर्श का विषय है।

सूचना प्रौद्योगिकी के बदलते परिवेश में हिंदी भाषा ने अपना स्थान धीरे–धीरे प्राप्त कर लिया है। आज हमारी मानसिकता में बदलाव लाने की जरूरत है। आधुनिकीकरण के दौर में भाषा भी अपना स्थान ग्रहण कर लेती है। हिंदी की उपादेयता पर कोई प्रश्नचिन्ह नहीं लगा सकता, लेकिन संकुचित स्वार्थ के कारण भारतीय भाषाओं को नकारना हमारी मानसिक गुलामी की निशानी है। आज भले ही चीन, जापान, रूस, जर्मनी, अरब आदि अंग्रेजीतर देशों ने अपनी भाषा विकास किया हो लेकिन भारत में अगर राजभाषा, संपर्कभाषा, लोकभाषा को हम विकसित नहीं कर पाए तो यह हमारी पराजय होगी।

संयुक्त राष्ट्र संघ में 6 भाषाएँ राज भाषा के रुप में स्वीकृत हैंः
अंग्रेजी, चीनी,फ्रांसीसी, रूसी,स्पेनीश और अरबी। 7 वीं भाषा के रूप में आज न कल हिंदी स्वीकृत होगी ,इसमें दो राय नहीं है।हिंदी भारत मा की बिन्दी है इसी से वह भारत मा से भी बड़ी हैः

संस्कृति को इक हार के रुप में,
जोड़ सके वो कड़ी है ये हिंदी।
ले के सहारा चले अन्हरा उस ,
अंधे के हाथ छड़ी है ये हिन्दी
जीवन दान मिले जिससे विष,
मार सके वो जड़ी है ये हिन्दी
प्यार से भारत माता कहें कि,
सुनो हमसे भी बड़ी है ये हिंदी।

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः87-88

# विश्व का तोरण द्वार है हिंदी–राष्ट्रभाषा बनाम राजभाषा

**–श्रीमती तारामणि पाण्डेय**
कृतकार्य, हिंदी–शिक्षिका, महारानी प्रेममंजरी प्रोजेक्ट बालिका उच्च विद्यालय, रातू, रांची

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

भारत एक महान एवं विशाल देश है। इसमें 29 राज्य हैं। विभिन्न राज्यों की विभिन्न भाषाएँ हैं–बंगाल की बांगला, असम की असमिया, उड़ीसा की उड़िया, महाराष्ट्र की मराठी, तमिलनाडु की तमिल, केरल की मलयालम, कर्नाटक की कन्नड़, छत्तीसगढ़ की छत्तीसगढ़ी, गुजरात की गुजराती, राजस्थान की राजस्थानी आदिय किन्तु जो भाषा सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांधती है ,वह तो हिंदी ही है।

राष्ट्र में सम्पूर्णता के धरातल पर जिस भाषा में भाव और विचार की अभिव्यक्ति होती है उसे राष्ट्रभाषा की संज्ञा दी जाती है। भारतीय संविधान की अष्टम् अनुसूची में 22 भाषाएँ स्वीकृत हैं। राष्ट्रभाषा एक सामासिक पद है जिसका शाब्दिक अर्थ है राष्ट्र की भाषा। संविधान की अष्टम् अनुसूची में स्वीकृत सभी 22 भाषाएँ राष्ट्र भाषाएँ हैं और व्यापक अर्थ में भारतवर्ष में जितनी भाषाएँ बोली, समझी और लिखी जाती हैं, वे सब राष्ट्रभाषा की गरिमा से युक्त हैं। लेकिन विशिष्ट अर्थ में अधिकाधिक लोगों द्वारा बोली समझी और लिखीजाने वाली हिंदी ही राष्ट्रभाषा है।

राजभाषा भी एक सामासिक पद है, जिसका अर्थ हैःराज काज की भाषा, राजा की भाषा अर्थात् राज्य का काज जिस भाषा में होता है उसे राजभाषा कहते हैं। प्राचीन काल में संस्कृत इस देश की राजभाषा थी मुगल काल में फारसी ,ब्रिटिश काल में अंग्रेजी और स्वतंत्र भारत में हिन्दी इस देश की राजभाषा बनी। आजादी मिलने के बाद संविधान निर्माताओं ने 14 सितम्बर 1949 में हिंदी को राजभाषा का पद संविधान द्वारा प्रदान किया। 26 जनवरी 1950 को जब हमारा संविधान लागू, तब से हिंदी इस देश की संवैधानिक तौर पर राजभाषा है। संविधान के भाग 5, 6 एवं 17 के कुल 11 अनुच्छेदों में राजभाषा हिंदी की चर्चा है।

संविधान के अनुच्छेद 343 से 351 के अंतर्गत हिंदी को राजभाषा की मान्यता प्राप्त होती है। राजभाषा से हमारा तात्पर्य उस भाषा से है, जिसमें राज–काज का संचालन होता है। संविधान में राजभाषा हिंदी की भूमिका निम्नाकित रूप में निर्धारित है :–

1 संघ की राजभाषा के रूप में।
2 दूसरे राज्यों और प्रदेशों के बीच संपर्क भाषा के रूप में,
3 संघ और राज्यों के बीच तथा एक–दूसरे राज्यों के बीच पत्राचार की भाषा अर्थात् संपर्क भाषा के रूप में।

हमारा संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ उस समय कहा गया कि सिद्धांत रूप में हिंदी राजभाषा रहेगी परन्तु 15 वर्षों तक राजकाज का काम अंग्रेजी द्वारा ही किया जाएगा। राजभाषा हिंदी पोस्ट डेटेड चेक बना दी गई जिसका दुष्परिणाम आज तक हिंदी को भुगतना पड़ रहा है।

संघ की भाषा के रूप में हिंदी को मात्र संवैधानिक मान्यता है। आज भी हिंदी भाषा नीति के अंतर्गत सत्ता और प्रशासन के कार्य हिंदी–अंग्रेजी के अनुवादित रूप में सम्पादित होते हैं। राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन के लिए राजभाषा मंत्रालय, हिंदी निदेशालय, गृहमंत्रालय की हिंदी शिक्षण योजनाएँ प्रायोजित हैं। प्रत्येक विभाग में राजभाषा पदाधिकारी या हिंदी अधिकारी कार्यरत हैं। हिंदी प्राध्यापक, अहिन्दी भाषी कर्मचारी एवं अधिकारियों को हिंदी प्रशिक्षण देकर प्रवीणता प्राप्त कराने में सहयोग करते हैं किन्तु खेद है कि आज भी कार्यालयी भाषा हिंदी नहीं, अंग्रेजी है।

प्रशासन की भाषा राजभाषा कहलाती है। राजभाषा का सामान्य अर्थ राजकाज चलाने की भाषा अर्थात् भाषा का वह रूप जिसके द्वारा राजकीय काज चलाने की सुविधा हो। राजभाषा से राजा की भाषा अथवा राज्य की भाषा दोनों अर्थ लिए जा सकते हैं। केंद्र की राजभाषा को संघ भाषा भी कहा जाता है। प्रशासन तथा न्याय

की भाषा होने के कारण सरकारी दृष्टि से राजभाषा का बहुत महत्व होता है। राजभाषा का प्रयोग प्रमुख चार क्षेत्रों में किया जाता है – शासन, विधान, न्यायपालिका एवं विधायिका।

स्वतंत्र भारत में नए संविधान की रचना तथा भारत के गणराज्य बन जाने पर भारतीय संविधान के लागू होने से पूर्व राष्ट्रभाषा शब्द का प्रयोग उसी अर्थ में होता था–जिस अर्थ में आज राजभाषा शब्द का प्रयोग होता है। वस्तुतः हिंदी राष्ट्रभाषा है, राजभाषा की क्षमता से पूर्ण है और अन्य भारतीय भाषाएँ राष्ट्रीय भाषाएँ हैं। क्योंकि हिंदी ही सम्पूर्णता के साथ भारत की जातीय गरिमा, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक उच्चता, जीवन मूल्य और मानवता, अस्मिता, स्वतंत्रता, एकता, अखंडता को वाणी प्रदान करने में सक्षम है। आज हिंदी ही शैक्षिक, वैज्ञानिक, औद्योगिक, सामाजिक उपलब्धियों के मूल्यांकन और संरक्षण की भाषा है। डॉ राकेश चतुर्वेदी के शब्दों में–हिंदी जातीयता, क्षेत्रीयता, प्रांतीयता, धर्मार्थता एवं संकीर्णता के दायरे तोड़कर विश्व भाषाओं के साहचर्य में वैज्ञानिक संस्कृति की निर्भ्रान्त नियोजिका है। इसे नहीं बनना है राजभाषा अंग्रेजी की अधिकारिणी यह तो जन भाषा है। संघर्ष और संस्कार, भारतीयता और अस्मिता की भाषा है अतः इसकी शाश्वतता सर्वकालिक और सार्वभौमिक है। इसी लिए राष्ट्रकवि गोपाल सिंह नेपाली ने हिंदी को भारत की बोली कहते हुए लिखा है कि –

यह दुखड़ो का जंजाल नहीं, लाखों मुखड़ों की भाषा है।
थी अमर शहीदों की आशा, अब जिंदो की अभिलाषा है।।
मेवा है इसकी सेवा में, नैनों को कभी न झपने दो।
हिंदी है भारत की बोली तो अपने आप पनपने दो।।

राष्ट्रभाषा हिंदी की उन्नति राष्ट्र की सार्वत्रिक, सर्वव्यापी उन्नति का मूल है। हिंदी अब राष्ट्रीय ही नहीं एक अंतर्राष्ट्रीय भाषा भी है, क्योंकि अब यह सात समुद्र पार भी बोली और समझी जाने लगी है। हिंदी को विधिवत राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा दिलाने के लिए अब तक 11 विश्व हिंदी सम्मेलन हो चुके हैं। प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन 10–12 जनवरी 1975 में नागपुर (भारत) में और एकादश विश्व हिंदी सम्मेलन मारीशस की राजधानी पोर्ट लुई में 18 से 20 अगस्त 2018 में सम्पन्न हुआ। हम प्रयत्न करें कि यह अपने देश में ही नहीं फूले–फले अपितु संयुक्त राष्ट्र संघ में स्थान पाकर विश्व में अपनी ज्योति फैलाए। हिंदी संस्कृति और संस्कार लिए हुई विश्व का तोरण द्वार हैः

केश है कंघा है,कच्छा कड़ा,
सिख धर्म के हाथ कटार है हिंदी।
बात करो दिन रात जहाँ मन,
चाहे बेतार का तार है हिंदी।
पूजा से पूर्व पुरोहित हाथ,
सजायी हुई थार है हिंदी।
संस्कृति और संस्कार लिए हुई,
विश्व का तोरण द्वार है हिंदी
जय हिन्द, जय हिन्दी

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः89-92

# स्वामी दयानन्द और हिन्दी

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून उत्तराखण्ड

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

भारतवर्ष के इतिहास में महर्षि दयानन्द पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने पराधीन भारत में सबसे पहले राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के लिए हिन्दी को सर्वाधिक महत्वपूर्ण जानकर मन, वचन व कर्म से इसका प्रचार–प्रसार किया। उनके प्रयासों का ही परिणाम था कि हिन्दी शीघ्र लोकप्रिय हो गई। यह ज्ञातव्य है कि हिन्दी को स्वामी दयानन्द जी ने आर्यभाषा का नाम दिया था। स्वतन्त्र भारत में 14 सितम्बर 1949 को सर्वसम्मति से हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया जाना भी स्वामी दयानन्द जी के इससे 77 वर्ष पूर्व आरम्भ किए गये कार्यों का ही सुपरिणाम था। प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यकार विष्णु प्रभाकर हमारे राष्ट्रीय जीवन के अनेक पहलुओं पर स्वामी दयानन्द का अक्षुण प्रभाव स्वीकार करते हैं और हिन्दी पर साम्राज्यवादी होने के आरोपों को अस्वीकार करते हुए कहते हैं कि यदि साम्राज्यवाद शब्द का हिन्दी वालों पर कुछ प्रभाव है भी, तो उसका सारा दोष अहिन्दी भाषियों का है। इन अहिन्दी–भाषियों का अग्रणीय वह स्वामी दयानन्द को मानते हैं और लिखते हैं कि इसके लिए उन्हें प्रेरित भी किसी हिन्दी भाषी ने नहीं अपितु एक बंगाली सज्जन श्री केशवचन्द्र सेन ने किया था।

स्वामी दयानन्द का जन्म 12 फरवरी, 1825 में गुजरात राज्य के राजकोट जनपद में होने के कारण गुजराती उनकी स्वाभाविक रूप से मातृभाषा थी। उनका अध्ययन–अध्यापन संस्कृत में हुआ था, इसी कारण वह संस्कृत में ही वार्तालाप, व्याख्यान, लेखन, शास्त्रार्थ तथा शंका–समाधान आदि किया करते थे। 16 दिसम्बर, 1872 को स्वामी जी वैदिक मान्यताओं के प्रचारार्थ भारत की तत्कालीन राजधानी कलकत्ता पहुंचे थे और वहां उन्होंने अनेक वैदिक धर्म प्रचार सभाओं में संस्कृत में व्याख्यान दिये थे। ऐसी ही एक सभा में स्वामी दयानन्द के संस्कृत भाषण का बंगला में अनुवाद गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, कलकत्ता के उपाचार्य पं. महेश चन्द्र न्यायरत्न कर रहे थे। अनुवादक श्री न्यायरत्न ने स्वामी दयानन्द के व्याख्यान के अनेक स्थानों के सही अनुवाद न कर उसके स्थान पर अपनी विपरीत मान्यताओं को प्रकट किया जिससे संस्कृत कालेज के श्रोताओं ने उनका विरोध किया। विरोध के कारण श्री न्यायरत्न बीच में ही सभा छोड़कर चले गये थे। बाद में स्वामी दयानन्द जी को श्री केशवचन्द्र सेन ने सुझाव दिया कि वह संस्कृत के स्थान पर हिन्दी को अपनायें। स्वामी दयानन्द जी ने श्री केशवचन्द्र सेन का यह सुझाव तत्काल स्वीकार कर लिया। यह दिन हिन्दी भाषा के इतिहास की एक प्रमुख घटना थी कि जब एक 47 वर्षीय गुजराती मातृभाषा के संस्कृत के उच्च कोटि के विद्वान स्वामी दयानन्द ने हिन्दी अपनाने का सुझाव मिलने पर तत्काल हिन्दी भाषा को अपना लिया। ऐसा दूसरा उदाहरण इतिहास में अनुपलब्ध है। इसके पश्चात स्वामी दयानन्द जी ने जो प्रवचन किए उनमें वह हिन्दी का प्रयोग करने लगे।

विश्व में प्रचलित सभी मत–मतान्तरों सहित वैदिक धर्म का सत्य सत्य परिचय कराने वाला ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश है जिसकी रचना स्वामी दयानन्द जी ने की है। यह ग्रन्थ तर्क, युक्ति व प्रमाणों पर आधारित ग्रन्थ है जो देश–विदेश में विगत 146 वर्षों से सत्य धर्म के ज्ञान व मत–मतान्तरों की समीक्षा जानने के लिए उत्सुकता एवं श्रद्धा से पढ़ा जाता है। फरवरी, 1872 में हिन्दी को अपने व्याख्यानों व ग्रन्थों के लेखन की भाषा के रूप में स्वीकार करने के लगभग 2 वर्ष पश्चात ही स्वामी जी ने 2 जून 1874 को इस सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के प्रथम आदिम सत्यार्थ प्रकाश का प्रणयन आरम्भ किया और लगभग 3 महीनों में पूरा कर डाला। श्री विष्णु प्रभाकर इतने अल्प समय में स्वामी जी द्वारा हिन्दी में सत्यार्थ प्रकाश जैसा उच्च कोटि का ग्रन्थ लिखने पर इसे आश्चर्यजनक घटना मानते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के पश्चात स्वामी जी ने अनेक ग्रन्थ लिखे जो सभी हिन्दी में हैं। उनके ग्रन्थ उनके जीवन काल में ही देश की सीमा पार कर विदेशों में भी लोकप्रिय हुए। विश्व विख्यात विद्वान प्रो. मैक्समूलर ने स्वामी दयानन्द की पुस्तक ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका पढ़कर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखा कि वैदिक साहित्य का आरम्भ ऋग्वेद से एवं अन्त स्वामी दयानन्द जी की ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका पर होता है। प्रो.

मैक्समूलर की स्वामी दयान्द के ग्रन्थ ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के प्रति यह प्रशस्ति उनके वेद विषयक ज्ञान, उनके कार्यों, वेदों के प्रचार–प्रसार के प्रति उनके योगदान एवं गौरव के अनुरूप है। स्वामी दयानन्द के सत्यार्थप्रकाश एवं अन्य ग्रन्थों को इस बात का गौरव प्राप्त है कि धर्म, दर्शन एवं संस्कृति जैसे क्लिष्ट व विशिष्ट विषय को सर्वप्रथम उनके द्वारा हिन्दी में प्रस्तुत कर उसे सर्वजन सुलभ किया गया जबकि इससे पूर्व इस पर संस्कृत निष्णात ब्राह्मण वर्ग का ही एकाधिकार था जिसमें इन्हें संकीर्ण एवं संकुचित कर दिया था और वेदों का लाभ जनसाधारण को नहीं मिल रहा था जिसके वह अधिकारी थे।

सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के लेखन व प्रकाशन के कुछ समय पश्चात थियोसोफिकल सोसायटी की नेत्री मैडम बैलेवेटेस्की ने स्वामी दयानन्द से उनके हिन्दी में लिखित ग्रन्थों के अंग्रेजी अनुवाद की अनुमति मांगी तो स्वामी दयानन्द जी ने उन्हें 31 जुलाई, 1879 को विस्तृत पत्र लिख कर अनुवाद से हिन्दी के प्रचार–प्रसार एवं प्रगति में आने वाली बाधाओं से परिचित कराया। स्वामी जी ने लिखा कि अंग्रेजी अनुवाद सुलभ होने पर देश–विदेश में जो लोग उनके ग्रन्थों को समझने के लिए संस्कृत व हिन्दी का अध्ययन कर रहे हैं, वह समाप्त हो जायेगा। हिन्दी के इतिहास में शायद कोई विरला ही व्यक्ति होगा जिसने अपनी हिन्दी पुस्तकों का अनुवाद इसलिए नहीं होने दिया जिससे अनुदित पुस्तक के पाठक हिन्दी सीखने से विरत होकर हिन्दी प्रसार में साधक नहीं हो सकेंगे।

हरिद्वार में एक बार व्याख्यान देते समय पंजाब के एक श्रद्धालु भक्त द्वारा स्वामी जी से उनकी पुस्तकों का उर्दू अनुवाद कराने की प्रार्थना करने पर स्वामी दयानन्द जी ने आवेशपूर्ण शब्दों में कहा था कि अनुवाद तो विदेशियों के लिए हुआ करता है। देवनागरी के अक्षर सरल होने से थोड़े ही दिनों में सीखे जा सकते हैं। हिन्दी भाषा भी सरल होने से सीखी जा सकती है। हिन्दी न जानने वाले एवं इसे सीखने का प्रयत्न न करने वालों से उन्होंने पूछा कि जो व्यक्ति इस देश में उत्पन्न होकर यहां की भाषा हिन्दी को सीखने में परिश्रम नहीं करता उससे और क्या आशा की जा सकती है? श्रोताओं को सम्बोधित कर उन्होंने कहा, ''आप तो मुझे अनुवाद की सम्मति देते हैं परन्तु दयानन्द के नेत्र वह दिन देखना चाहते हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी और अटक से कटक तक देवनागरी अक्षरों का प्रचार होगा।" इस स्वर्णिम स्वप्न के द्रष्टा स्वामी दयानन्द ने अपने ग्रन्थों में एक स्थान पर लिखा है कि आर्यावर्त्त (भारत वर्ष का प्राचीन नाम) भर में भाषा का एक्य सम्पादन करने के लिए ही उन्होंने अपने सभी ग्रन्थों को आर्य भाषा (हिन्दी) में लिखा एवं प्रकाशित किया है। अनुवाद के सम्बन्ध में अपने हृदय में हिन्दी के प्रति सम्पूर्ण प्रेम को प्रकट करते हुए वह कहते हैं, ''जिन्हें सचमुच मेरे भावों को जानने की इच्छा होगी, वह इस आर्यभाषा को सीखना अपना कर्तव्य समझेंगे।" यही नहीं आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य के लिए उन्होंने हिन्दी सीखना अनिवार्य किया था। भारत वर्ष की तत्कालीन अन्य संस्थाओं में हम ऐसी कोई संस्था नहीं पाते जहां एकमात्र हिन्दी के प्रयोग की बाध्यता हो।

सन् 1882 में ब्रिटिश सरकार ने डा. हण्टर की अध्यक्षता में एक कमीशन की स्थापना कर उससे भारत में राजकार्य के लिए उपयुक्त भाषा की सिफारिश करने को कहा। यह आयोग हण्टर कमीशन के नाम से जाना गया। यद्यपि उन दिनों सरकारी कामकाज में उर्दू–फारसी एवं अंग्रेजी का प्रयोग होता था परन्तु स्वामी दयानन्द के सन् 1872 से 1882 तक व्याख्यानों, ग्रन्थों, शास्त्रार्थों तथा आर्य समाजों द्वारा वेद प्रचार एवं उसके अनुयायियों की हिन्दी निष्ठा से हिन्दी भी सर्वत्र लोकप्रिय हो गई थी। इस हण्टर कमीशन के माध्यम से हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिलाने के लिए स्वामी जी ने देश की सभी आर्य समाजों को पत्र लिखकर बड़ी संख्या में हस्ताक्षरों से युक्त ज्ञापन हण्टर कमीशन को भेजने की प्रेरणा की और जहां से ज्ञापन नहीं भेजे गये उन्हें स्मरण पत्र भेज कर सावधान और पुनः प्रेरित किया। आर्य समाज फर्रूखाबाद के स्तम्भ बाबू दुर्गादास को भेजे पत्र में स्वामी जी ने लिखा, ''यह काम एक के करने का नहीं है और अवसर चूके यह अवसर आना दुर्लभ है। जो यह कार्य सिद्ध हुआ (अर्थात् हिन्दी राजभाषा बना दी गई) तो आशा है, मुख्य सुधार की नींव पड़ जावेगी।" स्वामी जी की प्रेरणा के परिणामस्वरुप देश के कोने–कोने से आयोग को बड़ी संख्या में लोगों ने हस्ताक्षर कराकर ज्ञापन भेजे। कानपुर से हण्टर कमीशन को दो सौ मैमोरियल भेजे गए जिन पर दो लाख लोगों ने हिन्दी को राजभाषा बनाने के पक्ष में हस्ताक्षर किए थे। हिन्दी को गौरव प्रदान करने के लिए स्वामी दयानन्द द्वारा किया गया यह कार्य भी इतिहास की अन्यतम घटना है। स्वामी दयानन्द की प्रेरणा से जिन प्रमुख लोगों ने हिन्दी सीखी उनमें जहां अनेक रियासतों के राज परिवारों के सदस्य थे वहीं कर्नल एच. ओ. अल्काट आदि विदेशी महानुभाव भी थे जो इंग्लैण्ड में स्वामी जी की प्रशंसा सुनकर उनसे मिलने भारत आये थे। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि शाहपुरा,

उदयपुर, जोधपुर आदि अनेक स्वतन्त्र रियासतों के महाराजा स्वामी दयानन्द के अनुयायी थे और स्वामी जी की प्रेरणा पर उन्होंने अपनी रियासतों में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया था।

स्वामी दयानन्द संस्कृत व हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के जानने व पढ़ने के पक्षधर भी थे। वह विरोधी किसी भी भाषा के नहीं थे। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि जब पुत्र–पुत्रियों की आयु पांच वर्ष हो जाये तो उन्हें देवनागरी अक्षरों का अभ्यास करावें, अन्यदेशीय भाषाओं के अक्षरों का भी। एक अन्य प्रकरण में आदिम सत्यार्थ प्रकाश में मूर्तिपूजा के इतिहास से परिचय कराने के साथ इस मूर्तिपूजा से आयी गुलामी के प्रसंग में अन्यदेशीय भाषाओं के अध्ययन के समर्थन में उन्होंने विस्तार से लिखा है। यह पूरा प्रसंग इसकी महत्ता के कारण प्रस्तुत है। वह लिखते है कि 'न वदेद्यावनीं भाषां प्राणैः कण्ठगतैरपि। हस्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैनमन्दिरम्।।1।।' इत्यादि श्लोक (हमारे मूर्तिपूजक बन्धुओं ने) बनाए हैं कि मुसलमानों की भाषा बोलनी और सुननी भी नहीं चाहिए और यदि पागल हाथी मूर्तिपूजक सनातनी के पीछे मारने को दौड़े, तो यदि वह किसी जैन मन्दिर में जाने से बच सकता हो, तो भी जैन के मन्दिर में न जायें किन्तु हाथी के सन्मुख मर जाना उससे (अर्थात् जैन मन्दिर में जाने से) अच्छा है, ऐसे निन्दा के श्लोक बनाए हैं। सो पुजारी, पण्डित और सम्प्रदायी लोगों ने चाहा कि इनके खण्डन के विना हमारी आजिविका न बनेगी। यह केवल उनका मिथ्याचार है। मुसलमानों की भाषा पढ़ने में अथवा कोई देश की भाषा पढ़ने में कुछ दोष नहीं होता, किन्तु कुछ गुण ही होता है। 'अपशब्दज्ञानपूर्वके शब्दज्ञाने धर्मः।' यह व्याकरण महाभाष्य (आन्हिक 1) का वचन है। इसका यह अभिप्राय है कि अपशब्द ज्ञान अवश्य करना चाहिए, अर्थात् सब देश देशान्तर की भाषा को पढ़ना चाहिए, क्योंकि उनके पढ़ने से बहुत व्यवहारों का उपकार होता है और संस्कृत शब्द के ज्ञान का भी उनको यथावत् बोध होता है। जितनी देशों की भाषायें जानें, उतना ही पुरुष को अधिक ज्ञान होता है, क्योंकि संस्कृत के शब्द बिगड़ के सब देश भाषायें होती वा बनती हैं, इससे इनके ज्ञानों से परस्पर संस्कृत और भाषा के ज्ञान में उपकार ही होता है। इसी हेतु महाभाष्य में लिखा कि अपशब्द–ज्ञानपूर्वक शब्दज्ञान में धर्म होता है अन्यथा नहीं। क्योंकि जिस पदार्थ का संस्कृत शब्द जानेगा और उसके भाषा शब्द को न जानेगा तो उसको यथावत् पदार्थ का बोध और व्यवहार भी नहीं कर सकेगा। तथा महाभारत में लिखा है कि युधिष्ठिर और विदुर आदि अरबी आदि देश भाषा को जानते थे। इस लिए जब युधिष्ठिर आदि लाक्षा गृह की ओर चले, तब विदुर जी ने युधिष्ठिर जी को अरबी भाषा में समझाया और युधिष्ठिर जी ने अरबी भाषा से प्रत्युत्तर दिया, यथावत् उसको समझ लिया। तथा राजसूय और अश्वमेध यज्ञ में देश–देशान्तर तथा द्वीप–द्वीपान्तर के राजा और प्रजास्थ पुरुष आए थे। उनका परस्पर अनेक देश भाषाओं में व्यवहार होता था तथा द्वीप–द्वीपान्तर में यहां के प्रजाजन जाते थे और वहां के इस देश में आते थे फिर जो देश–देशान्तर की भाषा न जानते तो उनका व्यवहार सिद्ध कैसे होता? इससे क्या आया कि देश–देशान्तर की भाषा के पढ़ने और जानने में कुछ दोष नहीं, किन्तु बड़ा उपकार ही होता है। विश्व की सभी भाषाओं के अध्ययन के पक्षधर स्वामी दयानन्द देश की सभी प्रादेशिक भाषाओं को हिन्दी व संस्कृत की भांति देवनागरी लिपि में लिखे जाने के समर्थक थे जो राष्ट्रीय एकता की पूरक होती। उन्होंने एक प्रसंग में यह भी कहा था कि दयानन्द की आंखे वह दिन देखना चाहती हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक देश में चहुंओर देवनागरी अक्षरों का प्रचार व प्रयोग हो। इसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। अपने जीवन काल में स्वामी जी ने हिन्दी पत्रकारिता को भी नई दिशा दी। आर्य दर्पण (शाहजहांपुरः 1878), आर्य समाचार (मेरठः 1878), भारत सुदशा प्रवर्तक (फर्रूखाबादः 1879), देश हितैषी (अजमेरः 1882) आदि अनेक हिन्दी पत्र आपकी प्रेरणा से प्रकाशित हुए एवं पत्रों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई।

स्वामी दयानन्द ने हिन्दी में जो पत्रव्यवहार किया वह भी संख्या की दृष्टि से किसी एक धार्मिक विद्वान व नेता द्वारा किए गए पत्रव्यवहार में आज भी सर्वाधिक है। स्वामी जी के पत्र व्यवहार की खोज, उनकी उपलब्धि एवं सम्पादन कार्य में रक्तसाक्षी पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, रिसर्च स्कालर पं. भगवद्दत्त, पं. युधिष्ठिर मीमांसक एवं श्री मामचन्द जी का विशेष योगदान रहा। शायद ही स्वामी दयानन्द से पूर्व किसी धार्मिक नेता के पत्रों की ऐसी खोज कर उन्हें क्रमवार सम्पादित कर पुस्तकाकार प्रकाशित किया गया हो और जीवन चरित्र आदि के सम्पादन में इन पत्रों से सहायता ली गई हो। स्वामी जी का समस्त पत्रव्यवहार चार खण्डों में पं. युधिष्ठिर मीमांसक के सम्पादकत्व में प्रकाशित है जो वैदिक साहित्य के प्रमुख प्रकाशक मैसर्स श्रीरामलाल कपूर ट्रस्ट, रेवली (हरयाणा) से उपलब्ध है। इसके अनेक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। इसका एक संशोधित

संस्करण परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा प्रकाशित किया गया है जिसका सम्पादन आर्यजगत के विख्यात विद्वान डा. वेदपाल जी ने किया है। यह भी ज्ञातव्य है कि स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने अपनी आत्म–कथा सर्वप्रथम आर्यभाषा हिन्दी में लिखी। इस आत्म–कथा के हिन्दी में होने के कारण हिन्दी को ही इस बात का गौरव है कि आत्म–कथा साहित्य का शुभारम्भ हिन्दी व स्वामी दयानन्द से हुआ।

सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर से वेदों के द्वारा ज्ञान की उत्पत्ति हुई थी। स्वामी दयानन्द के समय तक वेदों का भाष्य–व्याख्यायें–प्रवचन–लेखन–शास्त्रार्थ आदि संस्कृत में ही होता आया था। स्वामी जी पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने वेदों का भाष्य जन–सामान्य की भाषा संस्कृत व हिन्दी दो भाषाओं में करके सृष्टि के आरम्भ से प्रवाहित धारा को उलट दिया। यह घटना जहां वैदिक धर्म व संस्कृति की रक्षा से जुड़ी है, वहीं भारत की एकता व अखण्डता से भी जुड़ी है। न केवल वेदों का ही उन्होंने हिन्दी में भाष्य किया अपितु मनुस्मृति एवं अन्य शास्त्रीय ग्रन्थों का अपनी पुस्तकों में उल्लेख करते समय उद्धरणों के हिन्दी में अर्थ भी किए हैं। वेदों का हिन्दी में भाष्य करके उन्होंने पौराणिक हिंन्दू समाज से ब्राह्मणों के शास्त्राध्ययन पर एकाधिकार को भी समाप्त कर जन–जन को इसका अधिकारी बनाया। यह कोई छोटी बात नहीं अपितु बहुत बड़ी बात है जिसका मूल्याकंन नहीं किया जा सकता। महर्षि दयानन्द के प्रयासों से ही आज वेद एवं समस्त शास्त्रों का अध्ययन हिन्दू व इतर समाज की किसी भी जन्मना जाति, मत व सम्प्रदाय का व्यक्ति कर सकता है। आर्यसमाज ने उन सबके लिए वेदाध्ययन व अपने गुरुकुलों के दरवाजे खोले हुए हैं। महर्षि दयानन्द द्वारा हिन्दी को लोकप्रिय बनाकर उसे राष्ट्र भाषा के गौरवपूर्ण स्थान तक पहुंचाने में उनके साथ ही उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाजों एवं उनकी प्रेरणा से उनके अनुयायियों द्वारा स्थापित बड़ी संख्या में गुरूकुलों, डी.ए.वी. कालेजों व अनेक आर्य संस्थाओं आदि का भी योगदान है। एक शताब्दी से अधिक समय पूर्व गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार में देश में सर्वप्रथम विज्ञान, गणित सहित सभी विषयों की पुस्तकें हिन्दी माध्यम से तैयार कर उनका सफल अध्ययन–अध्यापन किया कराया गया। इस्लाम की धर्म–पुस्तक कुरआन को हिन्दी में सबसे पहले अनुंदित कराने का श्रेय भी स्वामी दयानन्द जी को है। यह अनुदित ग्रन्थ उनकी उत्तराधिकारिणी परोपकरिणी सभा, अजमेर के पुस्तकालय में सुरक्षित है।

ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में स्वामी दयानन्द जी ने लिखा है कि जो व्यक्ति जिस देश की भाषा को पढ़ता है उसको उसी भाषा व उसके साहित्य का संस्कार होता है। अंग्रेजी व अन्यदेशीय भाषायें पढ़ा व्यक्ति मानवीय मूल्यों पर आधारित भारतीय संस्कृति से सर्वथा दूर पाश्चात्य एवं वाममार्गी आदि भिन्न भिन्न जीवन शैलियों के अनुसार जीवन यापन करता है। यह जीवन पद्धतियां उच्च मर्यादाओं की दृष्टि से वैदिक संस्कृति से पीछे हैं। यदि वह संस्कृत व हिन्दी दोनों को पढ़ते और विवेक से निश्चय करते तो अवश्य ही वैदिक मर्यादाओं का पालन करते। कुछ ऐसी जीवन शैलियां है जिनमें पशुओं पर दया के स्थान पर उनको भोजन में सम्मलित किया गया है, जो सर्वसम्मत अंहिसा का नहीं अपितु हिंसा का उदाहरण है। जीवन में निर्दोष पशु या मनुष्यों की हिंसा का किसी भी रूप में प्रयोग अपसंस्कृति है और अंहिसा ही संस्कृति है। अतः स्वामी जी का यह निष्कर्ष भी उचित है कि हिन्दी व संस्कृत को प्रवृत्त कर ही प्राचीन संस्कृति, सभ्यता, साहित्य, इतिहास व मानवीय मूल्यों की रक्षा की जा सकती है।

एक षडयन्त्र के अन्तर्गत विष देकर दीपावली 1883 के दिन स्वामी दयानन्द की जीवन लीला समाप्त कर दी गई। यदि स्वामी जी कुछ वर्ष और जीवित रहे होते तो हिन्दी को और अधिक समृद्ध करते और इसका व्यापक प्रचार करते। उनके तीव्र वेद प्रचार आदि कार्यों से देश की अधिक उन्नति व सुख–समृद्धि होती। इसी के साथ इस लेख को निम्न पंक्तियों के साथ विराम देते हैं।

'कलम आज तू स्वामी दयानन्द की जय बोल,
हिन्दी प्रेमी रत्न वह कैसे थे अनमोल।'

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः93-97

# हरयाणे के त्यागमूर्ती आर्य नेता का हिन्दी सत्याग्रह में महान योगदान

–प्रो० शेर सिंह जी (बाघपुर बेरी)

लेखक–डॉ० रणजीत सिंह जी, पुस्तक–पंजाब का हिन्दी सत्याग्रह, प्रस्तुति–अमित सिवाहा

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

सन् १९५७ के आम चुनाव में प्रचार समय सच्चर फार्मूले' के कारण बलात् रूप से अम्बाला डिवीजन के स्कूली छात्रों पर लादी गई पंजाबी को हटाने का संकल्प बार–बार दोहराया गया था। इसके लिए चुनाव के उपरान्त हिन्दी आन्दोलन चलाने की भी घोषणाएं होती रहीं। यह आन्दोलन चुनाव से पूर्व ही कुछ गति पकड़ चुका था। अत : चुनावों के कारण शिथिल होनेवाले हिन्दी आंदोलन' को सक्रिय करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। चुनाव में प्रो० शेरसिंह की जीत के उपरान्त आचार्य भगवान्देव तथा जगदेवसिंह सिद्धान्ती ने प्रोफेसर साहेब से कहा कि वचन के अनुसार अब हमें हिन्दी आन्दोलन' चलाने पर विचार करना चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया गया, तो लोगों का हम पर से विश्वास उठ जाएगा।

इनकी बात को सुनकर प्रोफेसर साहेब बोले कि चुनाव से पूर्व एवं इनके मन्त्री रहते कैरों ने यह वायदा किया था कि वे हरयाणा से पंजाबी भाषा के बलात् को हटा देंगे। अत : आन्दोलन आरम्भ करने से पूर्व एक बार कैरों से मिल लिया जाए। प्रोफेसर साहेब कैरों से मिलने दिल्ली चले गए। प्रोफेसर साहेब ने कैरों से कहा कि आपने पंजाबी की बलात् पढ़ाई को हटाने का वचन दिया था। आप मुख्यमंत्री बन चुके हैं। अत : वायदा पूरा होना ही चाहिए। परन्तु कैरों ने पंजाबी की बलात् पढ़ाई को समाप्त करने से अस्वीकार कर दिया। कैरों के वचनाघात से प्रोफेसर साहेब को बड़ा भारी धक्का लगा। क्योंकि प्रोफेसर साहेब के कहने से ही आन्दोलन को शिथिल किया गया था।

अन्त में कोई चारा न देखकर १९५७ ई० के अप्रैल महीने में हिन्दी आन्दोलन के सत्याग्रह की घोषणा कर दी गई और मई मास में इस सत्याग्रह में बड़ी तेजी आगई। हिन्दी आन्दोलन को असफल बनाने के लिए सरकारी तन्त्र जुट गया। हिन्दी आन्दोलन को असफल बनाने के लिए प्रोफेसर साहेब को तरह–तरह के प्रलोभन दिए जाने लगे।

इस समय पंजाब के राज्यपाल सी.पी.एन. सिंह थे। उनके साथ प्रोफेसर साहेब के अच्छे सम्बन्ध थे। हिन्दी आन्दोलन' के दिनों में राज्यपाल महोदय ने प्रोफेसर साहेब को बुलाया और कहा कि वे चाहते हैं कि आप कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के कुलपति (उस समय इस पद का नाम उप–कुलपति था) का कार्यभार सम्भाल लें। प्रोफेसर साहेब ने इस प्रस्ताव का धन्यवाद करते हुए अपनी सौम्य शैली में कहा कि ये तो हिन्दी आन्दोलन' में सक्रिय भाग ले रहे हैं, ऐसी स्थिति में किसी भी प्रकार के पद को स्वीकार करना इनके लिए उचित नहीं होगा। इनके लिए हिन्दी का कार्य करना कुलपति के पद के ग्रहण करने से कहीं अधिक जनोपयोगी होगा। लालच में पड़कर, ये अपनी राजनैतिक और सामाजिक आत्महत्या का दोष नहीं लेना चाहते ।

कैरों ने देखा के यह वार खाली गया, तो उसने महात्मा खुशहालचन्द खुर्सन्द के पुत्र यश के प्रभाव को अपना तीर बनाया। प्रोफेसर साहेब के श्वसुर बुद्धदेव विद्यालंकार तथा खुशहालचन्द के घनिष्ठ सम्बन्ध थे, यहां तक कि प्रोफेसर साहेब के विवाह में यश (मिलाप समाचार पत्र) सपरिवार आए थे। गुरमुखसिंह मुसाफिर के माध्यम से कैरों यश द्वारा प्रोफेसर साहेब को पंजाब कांग्रेस पार्टी का अध्यक्ष पद को देने का प्रस्ताव पहुंचाया। प्रोफेसर साहेब ने यश को कहा कि आर्यसमाजी होने के नाते चाहिए तो यह कि आप आन्दोलन चलाने में हमारी सहायता करें, परन्तु इसके विपरीत आप तो पथभ्रष्ट करने आए हो।

हिन्दी आन्दोलन में तेजी आती गई। हिन्दी आन्दोलन को कुचलने और उन कांग्रेसी विधायकों को धमकाने के लिए, जो कि हिन्दी आन्दोलन में सक्रिय भाग ले रहे थे, कैरों ने मुरार जी भाई को बुलाया। मुरार जी भाई ने पंजाब के कांग्रेसी विधायकों की बैठक बुलाई और कहा आप लोगों को कैरों के हाथ मजबूत करने

चाहिएं। इस भाषा के झगड़े में जो विधायक भाग ले रहे हैं, वे ठीक नहीं कर रहे हैं, उनके लिए कांग्रेस में कोई स्थान नहीं है। स्पष्टत : यह बात प्रोफेसर साहेब को लक्ष्य करके कही गई थी। प्रोफेसर साहेब ने उठकर कहा कि ये कुछ जानना चाहते हैं। क्या आप बताने की कृपा करेंगे कि कांग्रेस पार्टी के संविधान में द्विभाषी राज्यों की क्या भाषा नीति बनी है? प्रोफेसर साहेब ने आगे कहा कि ये पंजाबी भाषा के विरोधी नहीं हैं, परन्तु इस भाषा को बलात् हरयाणा पर थोपने के विरोधी हैं। इसके साथ ही प्रोफेसर साहेब ने कहा कि बम्बई तथा पंजाब ही दो ऐसे प्रान्त हैं, जो कि द्विभाषी हैं। इन दोनों प्रान्तों की भाषा नीति के सम्बन्ध में समानता होनी चाहिए। यहां बलात् पंजाबी थोपी जा रही है, जबकि बम्बई में गुजराती और मराठी के सम्बन्ध में बलात् नहीं है। आप बम्बई के मुख्यमन्त्री हैं, यदि वहां पर गुजराती क्षेत्र पर बलात् मराठी पढ़ाने का प्रावधान कर देते हैं, तो हमें हरयाणा में पंजाबी पढ़ने पर कोई आपत्ति नहीं।

प्रोफेसर साहेब की बात का उत्तर मुरार जी भाई के पास नहीं था और वे ऐसे प्रश्न की आशा भी नहीं करते थे। इतने में मंच से उतरकर कैरों प्रोफेसर साहेब के पास आए और कहा कि छोड़ो इस बात को। बैठक के बाद मुरार जी भाई ने प्रोफेसर साहेब को बुलाकर कहा कि प्रात : काल राजभवन में मिलो। प्रोफेसर साहेब अगले दिन प्रात : काल राजभवन पहुंच गये। मुरार जी भाई ने प्रोफेसर साहेब को कहा कि तुम्हें इस अवसर पर बहस नहीं करनी चाहिए थी। प्रोफेसर साहेब के कथनानुसार मुरार जी भाई के बोलने के ढंग से यह स्पष्ट झलक रहा था , मानो वे कल की घटना को अपना अपमान समझ रहे थे। मुरार जी भाई के कथन का प्रोफेसर साहेब पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और ये हिन्दी सम्बन्धी गतिविधियों में उसी प्रकार लगे रहे ।

इसी अवधि में फिरोजपुर जेल में हिन्दी सत्याग्रहियों पर लाठीचार्ज होगया। इस घटना में जहां अनेक सत्याग्रही घायल हुए, वहां सुमेरसिंह (नयाबांस, जिला रोहतक) नामक सत्याग्रही भी मारा गया। फिरोजपुर जेल की घटना ने भारतवर्ष के हिन्दीप्रेमियों को हिला दिया। इस घटना का जिला रोहतक पर साक्षात् प्रभाव होना था। कहीं स्थिति भड़क न जाए, यह सोचकर कैरों ने प्रोफेसर साहेब के वारण्ट गिरफ्तारी जारी कर दिए। इस समय प्रोफेसर साहेब दिल्ली में थे।

फिरोजपुर की घटना की जानकारी के लिए घनश्याम गुप्त ने फिरोजपुर जाने का कार्यक्रम बनाया। गुप्त जी के साथ अलगूराय शास्त्री भी इस विचार से जाने के लिए तैयार होगये (शास्त्री जी कांग्रेस के उच्चकोटि के नेता थे और मन्त्री भी रह चुके थे) कि सारी स्थिति आंखों से देखकर पं० नेहरु को अवगत कराएंगे। इसी समय प्रोफेसर साहेब ने उत्तर दिया कि वे तो नहीं जा सकते, क्योंकि उनके तो वारण्ट हैं। इस बात को सुनकर गुप्त जी ने कहा कि रोहतक तक तो हमारे साथ चलना चाहिए। वारण्ट की बात सुनकर शास्त्री जी बोले कि देखो यह कैरों कैसा मूर्ख है कि प्रोफेसर के वारण्ट जारी कर दिए। यदि आन्दोलन के विषय में कोई समझौता होगा, तो किससे होगा, फिर भी इसे जेल से प्रोफेसर को छोड़कर बातचीत करनी पड़ेगा। अलगूराय शास्त्री ने प्रोफेसर शेरसिंह के वारण्ट के विषय में पुरुषोत्तमदास टण्डन को सूचित कर दिया।

प्रोफेसर साहेब ने इनके साथ चलने से पूर्व पुलिस अधीक्षक रोहतक को टेलीफोन करवा दिया कि वे रात की गाड़ी से साढ़े ग्यारह बजे रोहतक पहुंच रहे हैं और गिरफ्तारी के लिए पुलिस भेज दें। प्रोफेसर साहेब रात के साढ़े ग्यारह बजे रोहतक रेलवे स्टेशन पर उतरे और लगभग २० मिनट इस प्रतीक्षा में खड़े रहे कि शायद पुलिस आजाए और गिरफ्तार करले। धीरे–धीरे रेलवे स्टेशन का प्लेटफार्म लोगों से खाली होगया और पुलिस कहीं दिखाई नहीं दी। अन्त में प्रोफेसर साहेब झज्जर रोड पर लिए गए अपने किराये के मकान पर चले गए। मकान पर पहुंचकर प्रोफेसर साहेब ने पुलिस अधीक्षक को टेलीफोन किया कि वे आगये हैं और इससे पूर्व भी दिल्ली से आपको सूचना पहुंचाई थी। प्रोफेसर साहेब की बात सुनकर पुलिस अधीक्षक ने कहा कि आपका वारण्ट गिरफ्तारी निरस्त होगया है। अत : अब आपको पकड़ने का कोई प्रश्न नहीं उठता।

प्रोफेसर साहेब प्रात : काल उठकर दयानन्दमठ चले गये। रोहतक में यह स्थान हिन्दी आन्दोलन के सत्याग्रह का प्रमुख केन्द्र था और यहीं से सब कार्य होता था। यहां आने पर प्रोफेसर साहेब को बताया गया कि रोहतक की पुलिस सत्याग्रहियों को जब अदालत में प्रस्तुत करती है, अंगूठे के निशान कागज पर लगवा लेती है और मजिस्ट्रेट के सामने ले जाकर उस समय जबरदस्ती उनके कहती है कि इन्होंने माफीनामा लिख दिया है। अत : इन्हें छोड़ दिया जाए। ऐसे दो व्यक्ति प्रोफेसर साहेब के सामने आये और कहा कि हमारे साथ धोखा हुआ है। हमने माफी नहीं मांगी है। गांव में जाएंगे, तो लोग थू–थू करेंगे। हम तो कहीं मुंह दिखाने के लायक

नहीं रहे। प्रोफेसर साहेब ने उन्हें समझाते हुए कहा कि इसमें लज्जित होने की क्या बात है ? यदि तुमने माफी नहीं मांगी है, तो पुन : जाकर सत्याग्रह करो और अपने आपको सच्चा सत्याग्रही सिद्ध करो। उन दोनों के मन में प्रोफेसर साहेब की बात बैठ गई और पहले से भी अधिक उत्साह में भरकर सत्याग्रह करने के लिए चल पड़े। सत्याग्रहियों के मनोबल को गिरानेवाली पुलिस की कार्यवाही से प्रोफेसर साहेब को बड़ा भारी दुःख हुआ और इन्होंने पुलिस अधीक्षक से मिलकर तीव्र और क्रोधभरी प्रतिक्रिया व्यक्त की। प्रोफेसर साहेब के रोहतक आने पर जिलाधिकारी बड़े चिन्तित रहने लगे। वे न तो प्रोफेसर साहेब को गिरफ्तार कर सकते थे और न ही सामान्य लोगों की भांति डरा धमका सकते थे। जिला अधिकारियों ने कैरो को सूचित किया कि प्रोफेसर साहेब के वारण्ट निरस्त हो जाने से सत्याग्रह में बड़ी तेजी आगई है और इनका सहारा पाकर जिला रोहतक के लोगों में दुगुना उत्साह होगया है। अत : स्थिति पर पुन : विचार करलें।

हिन्दी सत्याग्रह के अखिल भारतीय स्वरूप को देखते हुए, हिन्दी प्रेमी कांग्रेसी इसके समाधान के प्रयास करने में लग गए। इसमें पुरुषोत्तमदास टण्डन का हाथ प्रमुख रहा और उन्होंने हाईकमाण्ड से कहा कि हिन्दी सत्याग्रह के सम्बन्ध में बातचीत करने के लिए कैरों मन्त्रिमण्डल में ऐसा कोई मन्त्री नहीं है, जिस पर हिन्दी प्रेमी जनता तथा नेता विश्वास कर सकें और कैरों में स्वयं इसको सुलझाने की क्षमता नहीं है। अत : गोपीचन्द भार्गव को कैरों मन्त्रिमण्डल में लेकर हिन्दी सत्याग्रहियों से बातचीत करनी चाहिए।

जब गोपीचन्द को मन्त्रिमण्डल में लिये जाने की योजना का पता कैरों को लगा, तो ये बहुत घबराए। उनके मन में यह आशंका उत्पन्न हुई कि वे अब तो हिन्दी सत्याग्रह के बहाने भार्गव को मन्त्री बनाने की बात है, परन्तु आगे चलकर ऐसा भी हो सकता है कि भार्गव इनकी गद्दी के लिए खतरा भी बन जाए। अत : भार्गव के खतरे से बचने के लिए कैरों ने सुझाव दिया कि इस विषय में प्रोफेसर शेरसिंह सबसे उपयुक्त व्यक्ति है। अत : हिन्दी सत्याग्रह को समाप्त करने के लिए कैरों साहेब ने कुम्भाराम ( राजस्थान ) के माध्यम से प्रोफेसर साहेब को मनाने की सोची। कुम्भाराम के पास जाकर कैरों साहेब ने कहा कि आप प्रोफेसर साहेब को मनालो, मैं इन्हें मन्त्री बनने के लिए तैयार हूं। कुम्भाराम ने प्रोफेसर साहेब को बुलाया और कहा कि ये प्रतापसिंह कैरों के प्रस्ताव को मानलें।

प्रोफेसर साहेब ने स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा कि आपका कहना ठीक है। यदि कैरों हरयाणा से पंजाबी के बलात् को हटाने की घोषणा करदे, तो ये प्रस्ताव पर अपने साथियों से परामर्श करके सूचित कर देंगे। चौधरी कुम्भाराम ने कहा कि कैरों आपसे मिलना चाहता है, एक बार मिलने में क्या हानि है। प्रोफेसर साहेब कैरों से मिलने से पूर्व इस सम्बन्ध में घनश्यामसिंह गुप्त से मिलने गए। गुप्त जी ने सारी बातें सुनकर कहा कि आप अपने पुराने वचन को पूरा कर दीजिए। इस पर कैरों ने कहा कि पंजाबी पूरी तरह से तो हटाई नहीं जा सकती, हां इतना अवश्य करने के लिए तैयार हूं कि दसवीं की परीक्षा में पंजाबी में अनुत्तीर्ण होनेवाले छात्रों को अनुत्तीर्ण नहीं माना जाएगा और इस विषय में उत्तीर्ण होनेवाले छात्रों के अंक कुल योग में जुड़ जाएंगे। प्रोफेसर साहेब ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि ऐसा करने से हरयाणा के विद्यार्थियों को हानि होगी। क्योंकि इस विषय में उत्तीर्ण होनेवाले विद्यार्थी जालन्धर डिवीजन के ही अधिक होंगे और कुल योग में अंक जुड़ने से नौकरियों में तथा प्रौद्योगिक संस्थाओं में प्रवेश के लिए उन्हें ही लाभ होगा। अत : आप ऐसा कीजिए कि पंजाबी में उत्तीर्ण छात्रों के अंकों को कुल योग में न जोड़िए। जो छात्र स्वेच्छा से इसे पढ़ना चाहें, वे पढ़ें। प्रोफेसर साहेब के इस सुझाव को कैरों मानने के लिए तैयार नहीं हुए और बातचीत गई। बात टूटने की सूचना प्रोफेसर साहेब ने कुम्भाराम को पहुंचवा दी।

प्रोफेसर साहेब जानते थे कि इनके गिरफ्तारी वारण्ट पुरुषोत्तमदास टण्डन के प्रभाव के कारण कैरों को निरस्त करने पड़ गए हों, परन्तु वह देर तक इन्हें जेल से बाहर रखना पसन्द नहीं करेगा। हुआ भी ऐसा ही और दोबारा प्रोफेसर साहेब के वारन्ट गिरफ्तारी कर दिए गए। वारन्ट गिरफ्तारी की सूचना मिलते ही प्रोफेसर साहेब रोहतक को छोड़कर दिल्ली चले गये। दिल्ली में ये सीधे डॉ० सरूपसिंह सांघी (जिला रोहतक तथा भूतपूर्व कुलपति दिल्ली विश्वविद्यालय) के घर गए और वहां से विश्वविद्यालय परिसर में अपने पुराने सहपाठी प्रिंसिपल मंगतराम (हिन्दू कालेज) के घर चले गये। प्रिंसिपल मंगतराम को सारी स्थिति से अवगत कराकर, उनसे कहा कि आपके यहां बहुत देर तक ठहरना उचित नहीं है अत : आप अपना कोई कोट, पैन्ट और कमीज मुझे दे दीजिये। ऐसा ही हुआ और प्रोफेसर साहेब ने अपनी चिर–परिचित टोपी, कुर्ता और धोती उतार दी और उनके

स्थान पर पैन्ट, कोट और कमीज पहन लिया। जिस टोपी को इन्होंने स्कूल में पढ़ते समय अंग्रेज अधिकारी के कहने पर भी नहीं उतारा था, उसे हिन्दी प्रेम के कारण स्वेच्छा से थोड़े समय के लिए उतार दिया। अब प्रोफेसर साहेब विश्वविद्यालय में पढ़ानेवाले प्राध्यापक लग रहे थे। इन्हें अपने कालेज जीवन की सुमधुर स्मृतियां इस वेला में अवश्य याद आई होंगी और एक बार मुस्कराकर रह गए होंगे। यहां देर लगाना उचित नहीं था, ये प्रात : काल साढ़े तीन बजे पैदल ही निकल पड़े। अभी दिन होने में समय था, अत : इधर–उधर घूमते रहे और साढ़े पांच बजे डॉ० गणपतराम वर्मा (चौटाला) के पास दरियागंज (दिल्ली) पहुंच गए। डाक्टर वर्मा पुराने कांग्रेसी थे। डाक्टर वर्मा से प्रोफेसर साहेब का परिचय देवीलाल के कारण हो चुका था। इसके अतिरिक्त डॉ० गणपतराम दरियागंज दिल्ली आर्यसमाज के प्रधान भी थे।

यहां रहते हुए प्रोफेसर साहेब ने सोचा कि आंख मिचौनी का खेल छोड़कर सत्याग्रह करने की घोषणा करके गिरफ्तार हो जाना चाहिए। अत : इन्होंने दिवान हाल दिल्ली आर्यसमाज से सम्पर्क स्थापित किया। १५ नवम्बर, १९५७ ई० को सत्याग्रह करके गिरफ्तार होने की घोषणा कर दी। प्रोफेसर साहेब के सत्याग्रह करने सम्बन्धी इश्तीहार लोगों में वितरित कर दिये गए। डॉ० गणपतराम के यहां से प्रोफेसर साहेब बंगाली मार्केट के सेठी उप–नामक व्यक्ति के पास चले गए। इनका वहां रहना सुरक्षित न समझकर, इन्हें कृष्णनगर में एक आर्यसमाजी के घर ठहराया गया।

सत्याग्रह वाले दिन अचकन और धोती पहनकर टोपी जेब में रखी और मफलर बांधकर अपने आपको एक व्यापारी का रूप दे दिया। इसके बाद ये अपने साथियों के साथ अन्य सवारियों से खचाखच भरे तांगे में बैठकर , पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन के लिए चल पड़े। वहां से तांगे से उतरकर फव्वारा चौक होते हुए भागीरथ प्लेस का मार्ग पकड़कर, पूर्व सुनिश्चित योजना के अनुसार दिवान हाल दिल्ली के पीछे वाली गली में एक मकान में बैठ गए। ठीक समय (गिरफ्तारी का समय ५ बजे निश्चित था) गिरफ्तारी देने के लिए ४–५ आदमियों के बीच में होकर, दिवान हाल पहुंच गए तथा मंच पर जाकर मफलर उतार दिया और चिर–परिचित टोपी पहर ली। इतने में घोषणा हुई कि आप लोगों के सामने प्रोफेसर शेरसिंह भाषण देंगे।

इस घोषणा के होते ही लोगों खचाखच भरे दिवानहाल में हिन्दी तथा आर्यसमाज के नारे लगने लगे। इधर पुलिस भी जो कि लगभग १०० की संख्या में थी और प्रोफेसर साहेब को दिवानहाल में आने से पूर्व पकड़ना चाहती थी, हक्की–बक्की रह गई। सोचने लगी कि प्रोफेसर साहेब दिवान हाल में कैसे पहुंच गए। पुलिस की इच्छा हुई कि प्रोफेसर साहेब को इसी समय गिरफ्तार कर लिया जाए। किन्तु मंच से घोषणा की गई कि पुलिस इस परिस्थिति में प्रोफेसर साहेब को न पकड़े, क्योंकि ये सत्याग्रह करके स्वयं ही अपने आपको पुलिस के हवाले हुए करने की इच्छा से ही दिवान हाल आए हैं। प्रोफेसर साहेब ने भाषण देते लोगों के समक्ष हिन्दी सत्याग्रह करने की पूर्व पीठिका से लेकर, लोगों को हिन्दी के प्रति अब क्या करना आदि बातें रखीं। इसके बाद गिरफ्तारी के लिए प्रस्तुत होगए। दिवान हाल आर्यसमाज के अधिकारियों ने इससे पूर्व ५० सत्याग्रहियों को प्रोफेसर साहेब के साथ सत्याग्रह करने के लिए तैयार कर लिया था। इस प्रकार ५० सत्याग्रहियों के साथ प्रोफेसर साहेब को पकड़कर दिल्ली कोतवाली में ले जाया गया।

यहां से प्रोफेसर साहेब को रात के समय एक लारी में बैठाकर पुलिस सुरक्षा में नाभा जेल ले जाया गया। यहां पर इन्हें थोड़े समय के लिए ही रखा गया। यहां पर इनकी मुलाकात चौधरी उदयसिंह मान एम.एल.सी. से भी हुई, जो कि हिन्दी सत्याग्रह के कारण रोहतक पुलिस द्वारा पहले ही पकड़ लिए थे। यहां से प्रोफेसर साहेब को पटियाला जेल भेज दिया गया। इसी जेल में वीरेन्द्र (सम्पादक प्रताप), पं० श्रीराम शर्मा, लाला जगतनारायण, चौ० बदलूराम, स्वामी रामेश्वरानन्द, स्वामी भीष्म और प्रोफेसर साहेब के अन्यतम साथी महाशय भरतसिंह आदि सत्याग्रही कैद थे। जेल के अन्दर सभी प्रकार का हास्य विनोद होता रहता था। एक दिन पण्डित श्रीराम शर्मा ने प्रोफेसर साहेब से कहा कि देखो वे कैसे पागल निकले कि आर्यसमाजी न होते हुए भी आर्यसमाजियों के बहकावे में आकर गिरफ्तार होगए। भई आर्यसमाजियों का भूत ही ऐसा होता है। परन्तु इन्हें तो रोहतक याद आरहा है। प्रोफेसर साहेब ने कहा कि आर्यसमाजी बन जाओ, सब भूल जाओगे।

सितम्बर के अन्तिम सप्ताह में हिन्दी आन्दोलन की समाप्ति होगई और सभी सत्याग्रहियों को छोड़ देने का निर्णय होगया। परन्तु सरकार ने यह निर्णय भी ले लिया कि इस सत्याग्रह के सम्बन्ध में जिन लोगों पर हिंसा से सम्बन्धित मुकदमे बनाए गए हैं, उन्हें बाद में छोड़ा जाएगा। इस निर्णय को सुनकर प्रोफेसर साहेब ने कहा

कि हम अपने साथियों को छोड़कर छूटना चाहते। यदि छूटेंगे तो सभी साथ छूटेंगे, अन्यथा सभी जेल में ही रहेंगे। प्रोफेसर साहेब ने जेल से ही मजिस्ट्रेट को अपने निश्चय की सूचना दे दी। मजिस्ट्रेट ने प्रोफेसर साहेब से कहा कि जेल में उन कैदियों की जमानत कौन लेगा, जिन पर हिंसा से सम्बन्धित मुकदमे बने हुए हैं। प्रोफेसर साहेब ने उत्तर दिया कि ये उन कैदियों की जमानत देने को तैयार हैं। इस बात को सुनकर मजिस्ट्रेट ने कहा कि आप तो स्वयं कैदी हैं, जमानत कैसे दे सकते हैं? इसके उत्तर में प्रोफेसर साहेब ने उत्तेजना के स्वरों में कहा कि कल तक तो वे मन्त्री थे तथा अच्छे नागरिकों में गिने जाते थे, आज क्या होगया कि उन पर विश्वास नहीं किया जारहा? वे कोई असामाजिक और अनैतिक अपराधों में दण्डित कैदी तो नहीं हैं, फिर जमानत क्यों नहीं ली जाती? अन्त में मजिस्ट्रेट ने प्रोफेसर साहेब की जमानत पर उन कैदियों को भी छोड़ देने की स्वीकृति प्रदान करदी, जिन पर हिंसा से सम्बन्धित मुकदमे थे।

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः98-104

# औपनिवेशिक भारत में रेलवे के विकास पर गोपाल कृष्ण गोखले के विचार

–डा. अखिल कुमार गुप्ता
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग, श्री वैष्णव विद्यापीठ विश्वविद्यालय, इन्दौर, मध्य प्रदेश

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

औपनिवेशिक भारत में अंग्रेजों के द्वारा स्थापित कई प्रालियों पर आज भी चर्चा होती रहती है जिसमें से एक रेलवे भी है। आज के विमर्श में जो विषय या प्राली प्रासांगिक हैं वो तत्कालीन समय में चर्चा का विषय अवश्य रही होगी। भारत में स्थापित रेलवे पर कई विचारकों ने अपने विचार रखे जिनमें आर्थिक विश्लेषण की अधिकता रही है। रेलवे के विकास पर दादाभाई नौरोजी तथा आर.सी. दत्त के विचारों ने पूरे भारतीय प्रबुद्ध समाज को प्रभावित किया। भारतीय राष्ट्रीय अर्थशास्त्रियों में डब्ल्यू. सी. बनर्जी, जी. बी. जोशी, दीनशा एदलजी वाचा, जी. एस. अय्यर तथा गोपाल कृष्ण गोखले ने उस चिन्तन को और विस्तार दिया जिसकी शुरूआत दादाभाई नौरोजी ने की थी। गोपाल कृष्ण गोखले ने दादाभाई नौरोजी एवं दीनशा एदलजी वाचा की परम्परा को विकसित कर और आगे बढ़ाया क्योंकि वह न सिर्फ राजनीतिक अर्थशास्त्री थे बल्कि संसद सदस्य भी रहे। गोखले ने अपने राजनीतिक जीवन के कई अवसरों पर भारतीय परिस्थितियों तथा अंग्रेजों की नीतियों को ध्यान में रखते हुए रेलवे पर अपने विचार स्पष्ट किए।

बेल्वी कमीशन के समय भारत के राजस्व का प्रयोग भारत की सीमाओं से बाहर के प्रदेश जीतने के लिए किया जाता था। यूरोप में नियुक्त कर्मचारियों को इसी से विनिमय क्षतिपूर्ति भत्ता दिया जाता था जिसका कोई औचित्य नहीं था। अभी असैनिक पदों पर अंग्रेज नियुक्त थे। यूरोपीय व्यापारियों को ऐसी रियायत दी गई थी जो शोषण का कारण बन गई थी। लोक निर्माण कार्यों के इंजीनियरों ने वेतन बढ़ाने के लिए आन्दोलन आरम्भ कर दिया था और जिन नई रेलवे लाइनों का निर्माण आरम्भ किया गया था उनका उद्देश्य विदेशियों को भारत के उन संसाधनों का शोषण करने में सहायता पहुँचाना था जिनका पहले उपयोग नहीं किया गया था।[1] रेलों ने अंग्रेज व्यापारियों को भारत के विभिन्न प्रदेशों के शोषण के लिए और अधिक अवसर सुलभ कर दिए थे। रेल की पटरियां आरम्भ में तो देश के सभी भागों में सेनाओं का आना–जाना सुगम बनाने के लिए बिछाई गईं थीं परन्तु आगे चलकर इस काम का उद्देश्य केवल विदेशी व्यापारियों का लाभ पहुँचाना अधिक जान पड़ता था।

रेल विषयक नीति के एक भाग के रूप में गैर सरकारी रेलों को प्रोत्साहन दिया गया, कभी–कभी तो उन्हें वित्तीय सहायता भी दी गई। उन कंपनियों के कुछ हिस्सेदार ऐसे असैनिक कर्मचारी थे जो इस देश में नौकरी करते थे। फिर इसमें अचम्भे की क्या बात थी कि उन कंपनियों की स्थापना करने वाले रियायतें और सुविधाएं पा लेते थे।गोखले ने इस प्रकार के भेदभाव की बात कही।[2] अपने वक्तव्य के संबंध में दिए गए मौखिक भाषण में उन्होंने इस प्रश्न पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला। उन्होंने यह तो स्वीकार किया कि रेलों के कारण संचार व्यवस्था में सुधार हुआ और अकालग्रस्त इलाकों में भोजन तथा चारा पहुँचाने में रेल बहुत ही उपयोगी रही है फिर भी रेलों का विस्तार वास्तव में उन मानवार्भित कारणों से न किया जाकर व्यापारिक कारणों से प्रेरित होकर है

अर्थात इसके आन्तरिक यातायात की अपेक्षा दूसरे अर्थ में बड़े पैमाने पर अनाज और कच्चा माल भेजने के लिए ही किया गया है। भारत से बाहर भेजी जाने वाली मूल्यवान सामग्री के बदले में यहाँ विदेशों में बना वह सस्ता और अनावश्यक सामान आता था जिसके वितरण में रेलें जैसी सरकारी एजेंसियां सहयोग देती थीं। गोखले ने आग्रहपूर्वक यह विचार व्यक्त किया कि आयात किया गया वह माल स्वदेशी उद्योगों का नाश कर रहा है और दस्तकारों तथा छोटे शिल्पकारों को फिर खेती करने के लिए विवश कर रहा है। अंग्रेजी व्यापारिक कंपनियां नील, चाय, काफी तथा अन्य वस्तुओं को बाहर भेजने के लिए रेलों का विस्तार चाहती हैं।[3] गोखले के अनुसार तत्कालीन समय में रेलवे का विकास मुख्य रूपसे व्यापारिक उद्देश्यों की पूर्ति करना था।

उन दिनों रेलों में घाटा हो रहा था और यह स्वाभाविक भी था। विदेशी व्यापारियों को दी जाने वाली अनेक रियायतों और सुविधाओं के रहते रेलों द्वारा मुनाफा कैसे हो सकता था? इसका अर्थ यह नहीं है कि रेलों से लाभ नहीं हो रहा था। उनसे लाभ तो होता था पर वह भारत को नहीं मिलता था। भारतीय नेता यदि क्रुद्ध होकर रेलों का और विस्तार रोक देने की बात कहते थे तो इसका कारण यह नहीं था कि वे उन्नति नहीं चाहते थे, उसका वास्तविक कारण था भारतीयों के हितों को हानि पहुँचाने वाला यह भेदभाव। बेल्वी आयोग के अध्यक्ष ने गोखले ने सीधा प्रश्न किया था–क्या आप वास्तव में आयोग को यह विश्वास दिला सकते हैं कि भारत मंत्री और भारत सरकार ने रेलों का यह काम मुख्यता अंग्रेजी वाणिज्य और वाणिज्यिक वर्गों के हित साधने के लिए ही उठाया है क्या यह आपका प्रत्यक्ष आरोप है। गोखले का उत्तर था–भारत में लोगों का यही विचार है क्योंकि तथ्य इसकी पुश्टि कर रहे हैं। अपन वक्तव्य के मर्थन में गोखले ने कहा, 'जब–जब भारत के वायसराय भारत से बाहर जाते हैं तभी कोई न कोई प्रतिनिधि मण्डल उनसे मिलता है और वे लोग ये रेलें बनाने के लिए उन पर दबाव डालते हैं और वह न्यूनाधिक रूप से यही वचन दे देते हैं कि वह अधिकतम प्रयास करेंगे। ये वचन अंततोगत्वा पूरे भी किए जाते हैं। वित्त आयोग का हवाला देते हुए गोखले ने कहा कि आयोग ने अकाल की रोकथाम के लिए 20,000 मील लम्बी रेलवे लाइने पर्याप्त समझी थीं। उन्होंने इस बात का भी उल्लेख किया कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भी इससे अधिक रेलों की न तो माँग की है न ही इसके लिए दबाव डाला है।[4] भारतीय रेलवे के संबंध में गोखले द्वारा कही गबातें प्रभावपूर्ण थीं लेकिन सरकार उनकी बातों को मानने को तैयार नहीं थी। इसलिए उन्हें बारबार अपनी माँगों को सरकार के समक्ष रखना पड़ा।

1902 से 1911 तक की अवधि में गोखले ने बजट के संबंध में 11 और अन्य विषयों के संबंध में 36 महत्वपूर्ण भाषण दिए। गोखले ने जिन विषयों पर भाषण दिए उनमें से कुछ थे–सरकारी गोपनीय बात अधिनियम, भारतीय विश्वविद्यालय अधिनियम, प्रेस विधेयक, ऋण में कमी अथवा उससे बचाव, रेलों की वित्त व्यवस्था, सरकारी व्यय में वृद्धि, सूती वस्त्र उत्पादन शुल्क इत्यादि। गोखले के द्वारा 1905 मे संसद सदस्य के रूप में अपने बजटीय भाषण में देश की आर्थिक समीक्षा करते हुए कहा कि–रेलवे वित्त एक नए चरण में पहुँच गया है। 1849 से आधी शताब्दी तक साल दर साल रेलवे को प्रत्येक वर्ष घाटा उठाना पड़ा, लगभग 60 करोड़ रूपये कुल व्यय हुआ। हमारी रेलवे प्रणाली ने अब जाकर राज्य के लिए कुछ लाभ की शुरूआत की है। इस बात पर पूर्ण विश्वास किया जा सकता है कि यह वृद्धि नियमित रूप से बढ़ेगी। आबकारी और सीमा शुल्क के अन्तर्गत राजस्व की वृद्धि लगातार बढ़ती हुई दिखाई दे रही है। रेलवे के अन्तर्गत राजस्व की पूरी बढ़त को छोड़कर भी आबकारी, सीमा शुल्क और अन्य प्रमुख मदों की बढ़ती आवश्यकता सार्वजनिक व्यय को इंगित करती है। हम अभी तक लगभग 12 करोड़ वार्षिक अतिरिक्त राशि से दूर हैं जिसका उद्देश्य लोगों के आनुशंगिक परिचित रूप से नैतिक और

भौतिक कल्याण को समर्पित है।[5] भारत में लगभग 50 वर्णों तक रेलवे कंपनियों को स्वयं घाटा उठाना पड़ा क्योंकि रेलवे निर्माण कार्य में लागत ज्यादा थी और किराए तथा माल यातायात को मिलाकर भी लाभ की पूर्ति नहीं हो रही थी।

गोखले ने केंद्रीय संसद में 1906 में रेलवे का आवश्यकता से अधिक निर्माण कार्य पर असहमति व्यक्त करते हुए भाषण दिया। उनका कहना था कि सरकार सेना पर सबसे ज्यादा व्यय कर रही है इसके उपरांत रेलवे पर खर्च किया जा रहा है। मेरे लार्ड (मालिक) आठ सालों के दौरान भारत सरकार का अधिशेश 35 करोड़ रूपयों के बराबर से कम नही है और यह पूरा पैसा भारत सरकार रेलवे पर खर्च कर रही है। इस उद्देश्य के लिए विशेष रूप से धन उधार लिया जा रहा है। अब वाणिज्यिक उपक्रम के रूप में रेलवे निर्माण के विरूद्ध मेरी कुछ भी कहने की इच्छा नहीं है। जब कि वो जल्द ही राज्य की हानि के बराबर धन का अनुमान नहीं लगा लेते लेकिन अब तो यह भी बन्द हो गया है। भविष्य के वर्षों में अब तो इस पर भी सन्देह नहीं किया जा सकता कि वह राजकोष से बढ़ा हुआ राजस्व लाएं। वाणिज्यिक आधार पर रेलवे निर्माण कार्य के लिए धन उधार लेने पर मुझे आपत्ति नहीं है। भले ही यहाँ तक कि सिंचाई कार्य पर धन का एक निश्चित भाग खर्च किया जाना चाहिए जो पिछले सालों में स्वीकृत किया गया। मैं इसका भी दावा नहीं करता जो ज्यादा अच्छा था लेकिन मैं मजबूती से इसके खिलाफ हूँ कि हमार अधिशेष रेलवे निर्माण कार्य के लिए समर्पित हो। जब उन्हें अविलंब रूप से कई दूसरे उद्देश्यों की आवश्यकता थी जो भले ही जनता के महत्वपूर्ण हितों का प्रभावित करते हों, उनकी अनदेखी की गई। मेरे लार्ड (मालिक) मै इस विषय के कुछ भाग पर अपने तर्क प्रस्तुत करता हूँ। पहले ही रेलवे पर कुल 250 लाख स्टर्लिंग (पाउंड) खर्च हो चुके हैं। कई सालों से यह भारत सरकार की पराकाष्ठा की ऊँचाई को दिखाता है कि देश में 20000 मील लम्बी रेलवे लाइन है। आज यातात के लिए लगभग 29000 मील लाइन खुली है और 2000 मील निर्माणाधीन है। आज रेलवे सबकुछ है, जन शिक्षा कुछ नहीं, उन्नत स्वच्छता कुछ नहीं, वित्त मंत्री को प्रत्येक रूपये पर अपने हाथ खड़े कर लेना चाहिए या वह प्रत्येक रूपया उधार लाएं या अधिशेष के कारण बचता है जो सिर्फ रेलवे निर्माण के कार्य के लिए समर्पित रूप से केवल बचाकर रख लिया जाता है। मेरे इस विषय पर विचार के उत्तर में सम्मानीय सदस्य ने पिछले वर्ष कहा—जब की अधिशेष वास्तविक रूप से अधिकार मे आता है या भाग्य से अप्रत्याशित लाभ मिलता है या किसी निरंतर स्रोत से मिलता है जो निश्चित नहीं है, तब मैं सोचता हूँ इसका कोई लाभ नहीं है। सिवाये इसके कि इसे किसी सार्वजनिक निर्माण कार्य के लिए समर्पित कर देना चाहिए।[6] गोखले और राज की सरकार के बीच कई बार ऐसी बहसें हुईं जिनमें उन्होंने भारत के लिए लाभदायक कार्यों की माँग की। गोखले का मानना था कि रेलवे निर्माण के साथ ही सार्वजनिक क्षेत्र से जुड़े अन्य कार्यों की तरफ भी सरकार को ध्यान देना जरूरी है।

1907 के बजटीय भाषण में गोपाल कृष्ण गोखले ने केंद्रीय वैधानिक समिति में 27 मार्च को भारत के वायसराय लार्ड मिंटो के समक्ष अपने आर्थिक विचार रखे। कई विषयों पर विचार करने के बाद गोखले ने 'पूँजीगत परिव्यय के अधिशेष के प्रयोग की ओर तर्क प्रस्तुत किए। उन्होंने कहा अब एक बड़े प्रश्न पर आता हूँ—मैंने जिसे ढूँढ निकाला है उसे दोबारा गंभीर और सुस्पष्ट ढंग से उस प्रक्रिया का विरोध करता हूँ जिसमें हमारा अधिशेष अब तक लगातार पूँजीगत परिव्यय के रूप में रेलवे निर्माण पर खर्च किया जा रहा है। मेरे लार्ड (मालिक) मैंने इस विषय पर पिछले वर्षों में भी कई बार चर्चा की है लेकिन वर्तमान व्यवस्था पर मुझे अन्याय ही मिला है। इसलिए मैं दृढ़तापूर्वक समिति से यह अवश्य पूछना चाहता हूँ और इसे मेरे साथ आपको भी सहन करना पड़ेगा

जिसकी मैं दोबारा फिर से वकालत करने जा रहा हूँ। इसे संक्षेप में जितना किया जा सकता है मैंने किया है, मेरे विचार इस विषय पर इसलिए हैं क्योंकि अचानक इस नीति में बदलाव क्यों किया गया। यह लगातार नौवां साल है जब राजस्व के वास्तविक अधिशेष को खर्च किया जा रहा है और यह पूर्णतया सिद्ध है कि अधिशेष के खर्च का युग समाप्त होने वाला नहीं है। पिछले नौ सालों में अधिशेष के रूप में कुल 37 करोड़ रूपया या 25 लाख स्टर्लिंग उच्च सीमा के साथ यह पूरी राशि लगभग रेलवे के पर खर्च की गई है। अब अधिशेष का पैसा अधिक से अधिक लोगों से वसूल किया जाएगा या गलत हिसाब से दूसरे अन्य तरीकों से जब सरकार की आवश्यकता रहेगी तो इसकी पूर्ति की जाएगी।[7] गोखले लगातार इस तथ्य को सभी के सामने रखते आए कि सरकार जितना पैसा रेलवे निर्माण कार्य पर खर्च कर रही है उसे अन्य मदों में भी खर्च करना ज्यादा जरूरी है जिससे भारत के अन्य क्षेत्रों में भी बदलाव तथा विकास हो सके।

1909 में अपने भाषण में गोपाल कृष्ण गोखले ने रेलवे निर्माण में अधिशेष के दुरूपयोग पर चर्चा की। उन्होंने कहा मैंने कई बार रेलवे वित्त पर इस समिति के समक्ष अपने विचार रखे और इसलिए मैं आज इस विषय पर केवल एक अस्थायी जिक्र को समझाने की कोशिश करूँगा। सरकार ने अगले वर्ष रेलवे पर पूँजीगत परिव्यय के लिए 10 लाख स्टर्लिंग खर्च के लिए प्रस्तावित किए हैं। फिर भी इस साल क्या हुआ, मैं विश्वास करता हूँ कि हमारी रेलवे को वाणिज्यिक सफलता के लिए आज स्थापित किया गया है। इस सबके बावजूद यह केवल मात्र वित्त का मामला नहीं है। इसके अतिरिक्त यह रेलवे और सिंचाई जैसे महत्वपूर्ण प्रश्नों से भी संबंधित है। सरकार को कोई आपत्ति लागत पर नहीं होनी चाहिए या कुछ भी वो अपनी इच्छा से रेलवे निर्माण कार्य पर खर्च करें जो दृढ़ता से उन्हें कुल में से जितना धन प्राप्त किया है। इस साल का अनुभव निःसन्देह रेलवे निर्माण के लिए उधारी पर जोर देकर सावधान रहने की आवश्यकता है लेकिन मेरा दृष्टिकोण इस प्रश्न पर कोई भी विचार करना नहीं है। सरकार फिर भी पिछले सालों में उपलब्ध कराए गए रेलवे निर्माण के लिए ऋण–पैसे से संतुष्ट नहीं है।[8] गोखले साल दर साल यह बात उठाते रहे कि रेलवे के निर्माण कार्य के साथ ही प्राथमिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा था साफ–सफाई पर भी सरकार को खर्च करना चाहिए।

गोखले ने 1910–11 के दौरान अधिशेष धन और स्वच्छता के विषय पर चर्चा करते हुए लोगों का ध्यान पुनः एक बार रेलवे की ओर खींचा। वर्ष 1878–1899 से शुरू करते हुए हम पाते हैं कि हमारे पास दस वर्षों के दौरान लगातार दस वर्षों का अधिशेष लागत में 25 लाख स्टर्लिंग या 12 करोड़ होगा। उनके पास इतना विशाल संचय हमारी प्रणाली के अन्तर्गत आने वाले खातों से सबसे पहले रेलवे निर्माण में जाएगा और फिर हमारी अनुत्पादक ऋण में कमी करना है। साधारणतया रेलवे के विरूद्ध कुछ भी नहीं कहा जा सकता लेकिन वर्तमान में जब उद्देश्य ज्यादा जरूरी और ज्यादा महत्वपूर्ण धन है तो मैं यह नहीं सोचता कि सरकार न्याय कर रही है जिस प्रकार से अधिशेष, राजस्व का एक बड़ा हिस्सा दूसरी दिशा में लगाया जा रहा है।[9] गोपाल कृष्ण गोखले ने विधानमंडल की कार्यवाहियों से लेकर प्रतिवेदन तथा संसदीय समिति में अपने भाषणों में भी रेलवे पर अनावश्यक व्यय पर आपत्ति दर्ज की।

गोखले ने 1910–11 के दौरान वित्तीय चर्चा पर रेलवे वित्त पर बहस की। गोखले रेलवे के अन्तर्गत कार्य खर्च में 1 करोड़ रूपये की कमी पर द्रवित हुए। उन्होंने कहा, श्रीमान मैं आगे की कार्यवाही के लिए आज्ञा चाहता हूँ। यह समिति सलाह देती है कि आगामी वर्ष में स्टेट रेलवे के कार्य खर्च में 1 करोड़ रूपये की कमी की व्यवस्था करती है। श्रीमान, मेरी इच्छा है कि यदि यह मेरे लिए संभव होता कि इस अधिनियम पर सुझाव

देता जिसे माननीय सर टी. आर. वेयेन (रेलवे बोर्ड अध्यक्ष) के द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है। तब मैं इस प्रस्ताव से पीछे हट जाता जिसे मैंने पिछले दो सालों से तैयार किया था।

दुर्भाग्यवश मैं ऐसा न कर सका। निश्चित ही था इससे पीछे हट जाना। मुझे ऐसा महसूस हो रहा है कि मैंने यह प्रश्न पूछकर समिति को विभाजित कर दिया है। आगे वो असाधारण खर्च कार्य की बढ़त पर चर्चा करते हैं। इस प्रस्ताव पर आगे बढ़ते हुए, श्रीमान मैं आपसे अभिव्यक्ति की इजाजत चाहता हूँ। यदि मेरी बात को मान लिया जाता है तो मेरी सहानुभूति रेलवे बोर्ड के साथ रहेगी जिसे उन्हें लगता है कि दो विपत्ति के बीच में प्रतीत होता है। माननीय सदस्य के भाषण के साथ न्याय करते हुए मैंने पाया कि रेलवे प्रशासन लन्दन में उनके बोर्ड का प्रतिनिधित्व करता है जिसकी शिकायत है कि वह रेलवे बोर्ड के प्रशिक्षण पर नियंत्रण करता है। हम दूसरी तरफ इस समिति में से कुछ और किसी भी कीमत पर उनके द्वारा कार्य खर्च पर अनुज्ञात के किसी भी मामले पर उनकी शिकायत पर झुके हुए हैं।[1] गोखले स्वयं को साधारण व्यक्ति मानकर रेलवे बोर्ड की कार्य प्रणाली तथा नियंत्रण के बारे में सहमत नहीं होते हैं और बहस आगे चलती रहती है।

बजट व्यवस्थित ढंग से अधिक होने पर वो अपने तर्क प्रस्तुत करते हैं। फिर से एक दूसरे बिन्दु पर मैं इस समिति का ध्यान आकर्षित करते हुए वर्णन करता हूँ और यह इस प्रकार है–पिछले चार सालों से बोर्ड या जो लोग जिम्मेदार हैं क्योंकि मैं डरा हुआ हूँ। यह रेलवे प्रषासन ही है जो अनाधिकृत कार्य लिए आ रहा है जो वास्तविक में जिम्मेदार हैं। किसी भी स्थिति में हमें इस समिति में बोर्ड की जिम्मेदारी और प्रशासन की जिम्मेदारियों को संभालना चाहिए क्योंकि यह इसकी बारी है लेकिन पिछले चार सालों से हम यह पाते हैं कि बजट व्यस्थित ढंग से होने के बावजूद भी कार्य खर्च का मामला अधिक हो जाता है।[11] गोखले का कहना था कि साल दर साल बजट में व्यवस्थित ढंग से धन का आवागमन हो रहा लेकिन रेलवे के कार्य खर्च में हमेशा बढ़ोत्तरी हो रही है। 'स्टेट रेलवेज को राज्य प्रबंधन के लिए वरीयता' विषय पर चर्चा करते हुए गोखले ने कहा–इस पर मेरी 2 शिकायतें हैं। अब मैं एक सुझाव देना चाहता हूँ और सोचता हूँ कि यह बहुत ही वांछनीय है यदि स्टेट रेलवेज का प्रबंधन उनकी प्रबंधन कंपनियों की बजाय राज्य करे तो ज्यादा अच्छा है। मैं जानता हूँ कि यह मेरा प्रश्न यहाँ पर भिन्न मत का है लेकिन इसके अतिरिक्त दूसरी चीजों से यह त्वरित ज्यादा खर्चिला है या कम खर्चिला है, इस पर मेरी दो राय हैं। पहली सुस्पष्ट लाभ वाली है जिसका मैंने अभी दावा किया है और दूसरी यह है कि राज्य प्रबंधन के अन्त से यह अधिक आर्थिक होगी। आप साधारण सार्वजनिक कार्यों की सूची की तुलना कर सकते हैं, सार्वजनिक कार्य अधिकारियों के व्यक्तिगत से रेलवे अधिकारियों के व्यक्तिगत से। सर टी. आर. वेयेन, चेयरमैन रेलवे बोर्ड ने गोखले के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया गोखले ने निम्नांकित रूप से उत्तर दिया। उन्होंने कहा–सर, मैं माननीय सर टी. आर. वेयेन के द्वारा पराजित अवलोकन का संक्षिप्त उत्तर देना चाहता हूँ। उन्होंने संकेत दिया कि 1909 में राजस्व के अन्तर्गत कुल आय जैसे उन्होंने यहाँ बताया 12.43 लाख थी। वह यथार्थ में वही संख्या थी जो आपने 1906–1907 के बजट में 12.52 बतलाई थी।[12] गोखले का कहना था कि प्रतिवर्ष जिस प्रकार से व्यय में वृद्धि हो रही है उसका सबसे ज्यादा प्रभाव रेलवे पर पड़ रहा है क्योंकि इसी मद में खर्च अपेक्षाकृत अधिक है। गोखले के द्वारा कई बार तथ्य देने के बाद भी वित्त मंत्री उनकी बातों को नजरअंदाज कर देते थे और उनके कथन को मत के आधार पर ससंद में अस्वीकार कर दिया जाता था।

**इंचकेप समिति**–इस समिति ने वित्त समिति की 150 करोड़ रूपये के पूँजीगत व्यय की नीति का विरोध किया

और कहा कि अधिक धन तभी व्यय करना चाहिए जब वह रेलों की आय में उतनी वृद्धि कर सके कि उससे उसकी अतिरिक्त ब्याज की वसूली हो सके। समिति ने रेलों के संचालन व्यय में महत्वपूर्ण कमी करने का सुझाव दिया। इस समिति ने अकवथ समिति द्वारा बनाई गई रेल प्रशासन व्यवस्था का समर्थन किया और हांस निधि बनाने, नियंत्रण का अधिक विकेंद्रीकरण करने तथा रेलों की हिसाब पद्धति की विविधन परीक्षा करने के भी सुझाव दिये।[13] भारतीय इसी प्रकार के बदलाव के लिए कोशिश कर रहे थे कई संसदीय समितियों तथा बहसों में यही मुद्दे उठाए जा रहे थे लेकिन सफलता नहीं मिल पा रही थी। अंग्रेजों के ऊपर भी दबाव था कि रेलवे में सुधार किया जाए इसलिए सर जेम्स मैके की अध्यक्षता में लार्ड इंचकैप जाँच की नियुक्ति की गई। गोखले ने 23 फरवरी 1912 को केंद्रीय विधायिका समिति में इस प्रस्ताव पर कई प्रश्न पूछे। उन्होंने कहा–गत वर्ष एक समाचार प्रेस के पास गया है, पहला संकेत यही मिला कि हम इसकी जाँच करने आ रहे हैं। कहा गया कि लार्ड इंचकैप भरी सर्दियों में कुछ निश्चित जाँच पड़ताल करने के लिए भारत आ रहे हैं। मामला मुख्य रूप से रेलवे बोर्ड और रेलवे कंपनियों के बीच का है। गोखले सहित भारत के किसी भी व्यक्ति को इस बात की जानकारी नहीं थी कि वो अचानक से जाँच के लिए आ ही जाएंगे। इस विषय पर एक सम्मेलन हुआ जिसमें मि. क्लार्क सदस्य, वाणिज्य और उद्योग तथा सर जेम्स मेस्टन वित्त विभाग की ओर से उपस्थिति हुए।[14] गोखले का कहना था कि लार्ड इंचकैप मुख्यता प्रशासनिक कार्यों को देखने में विशेषज्ञ है और उन्हें ये काम कैसे दिया जा सकता? लेकिन उनके मत को नहीं माना गया और समिति ने उनके प्रस्ताव को मताधिकार का प्रयोग करके खारिज कर दिया गया।

गोपाल कृष्ण गोखले ने रेलवे के संबंध में हमेशा इस बात पर आपत्ति की कि रेलवे से प्राप्त होने वाली राशि में से भारत में रेलवे पर बहुत ही कम खर्च किया जाता है जबकि इंग्लैंड में ज्यादा खर्च किया जाता है बल्कि भारत में रेलवे का निर्माण और कार्य इंग्लैंड की अपेक्षा बहुत सस्ता है। भारत में कैसे भी लेकिन यह कह सकता हूँ कि निर्माण खर्च में सबसे कम हमारी रेलवे पर ही नहीं बल्कि यह तथ्य है कि भारत के सभी औद्योगिक स्वामित्व पर इसी प्रकार से खर्च किया जाता है। हमारे पास श्रम बहुत सस्ता है जबकि पूँजी बहुत ज्यादा है इसलिए लाभ के लिए अवश्य ही बहुत बड़ा अन्तर है और यह इंग्लैंड की स्थिति में कार्य खर्च के हिसाब से काफी कम है। केवल यही एक कार ा नहीं है कि भारतीय रेलवे के पर कुल कार्य खर्च का एक छोटा सा प्रतिषत खच किया जाता है जबकि इंग्लैंड में ऐसा नहीं होता है इसलिए वास्तविकता में कुछ सिद्ध करने के लिए नहीं है।[15] गोखले के रेलवे वित्त पर भाषण तथा लेखन में न सिर्फ सही आँकड़ों का समावेश था बल्कि सांख्यिकी के आधार पर विश्लेषण होता था। यह बात सही है कि गोपाल कृष्ण गोखले ने विशुद्ध रूप से रेलवे वित्त और इससे जुड़े हुए विषयों पर चर्चा की लेकिन कई जगहों पर इस व्यवस्था के फायदे भी गिनाए। तत्कालीन भारत के विषय में यह बिल्कुल सही है कि अंग्रेजों ने इस व्यवस्था का विकास अपने फायदे के लिए किया और भारतीयों के साथ भेदभाव किया जाता रहा। हम इस तथ्य से मुँह नहीं मोड़ सकते लेकिन इस बात को नकार भी नहीं सकते कि स्वयं गोखले ने कभी आने जाने के लिए रेलवे की मनाही की है इसे एक नए नजरिये से और भी देख सकते हैं कि उस समय यातायात के अन्य साधनों में रेलवे सबसे ज्यादा विकसित, सुलभ, आरामदेह, सस्ती तथा तेज थी लेकिन कांग्रेस तथा स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े प्रत्येक क्रार्यकर्ता के आने–जाने के लिए सिर्फ यही एक ही विकल्प भी था। इसलिए सिर्फ इसकी हानियां को ध्यान में रखते हुए रेलवे के लाभों को भुलाया नहीं जा सकता है।

**संदर्भ–**


1. देवगिरीकर, त्र्यबंक रघुनाथ, गोपाल कृष्ण गोखले, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1980, पृ. 47.
2. वही, पृ. 49.
3. वही, पृ. 50.
4. वही, पृ. 51.
5. पटवर्धन, आर. पी. एंड डी. वी. अम्बेक, (एडीटेंड) द स्पीचेस एंड राइटिंग्स ऑफ गोपाल कृष्ण गोखले, वाल्यूम–1–इकनोमिक, द डेक्कन सभा, पूना, 1962, पृ. 77.
6. वही, पृ. 101.
7. वही, पृ. 112.
8. वही, पृ. 145.
9. वही, पृ. 165.
10. वही, पृ. 179–180.
11. वही, पृ. 181.
12. वही, पृ. 183.
13. सिंह, शिवध्यान, पूर्वोक्त, पृ. 245.
14. पटवर्धन, आर. पी. एंड डी. वी., अम्बेक, पूर्वोक्त, पृ. 343–344. 15. वही, पृ. 494.

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः105-108

# हिंदी में रोजगार की संभावना एवं चुनौतियाँ

–सरिता शोधार्थी
महात्मा गांधी, अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

निज भाषा उन्नति अहे, सब उन्नति को मूल
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिए को सूल।1

किसी देश की राष्ट्र भाषा वही मानी जाती है, जिसका अपना देश की संस्कृति व सभ्यता से गहरा संबंध हो। किसी देश की राष्ट्रभाषा वह होती है, जहाँ की बहुसंख्यक जनता वह भाषा बोलती हो और जानती हो। हिंदी के संदर्भ में यह सभी बातें सही ठहरती है। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की प्रगति में हिंदी भाषा और साहित्य की महत्वपूर्ण भूमिका थी। उस समय साहित्यकार जानते थे कि देश की भाषा से उन्नति की जासकती है। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने ''साहित्य की महत्ता'' शीर्षक निबंध में लिखा है कि ''आवश्यकता, अनुकूलता, अवसर और अवकाश होने पर हमें एक नहीं अनेक भाषाएं सीखकर ज्ञानार्जन करना चाहिए, ज्ञान जहां भी मिलता हो ग्रहण कर लेना चाहिए। परंतु अपनी भाषा और उसी साहित्य को प्रधानता देना चाहिए, क्योंकि अपना, अपने देश, जाति का उपकार और कल्याण अपनी ही भाषा के साहित्य की उन्नति से हो सकता है। ज्ञान, विज्ञान धर्म और भाषा सदैव लोक भाषा में होनी चाहिए। अतएव अपनी भाषा के साहित्य की सेवा और अभिवृद्धि करना सभी दृष्टिकोण से हमारा परम धर्म है।''2 हिंदी भाषा में प्रारंभिक शिक्षा के संदर्भ में महात्मा गांधी के विचार बहुत महत्वपूर्ण है ''मातृभाषा मनुष्य के विकास के लिए उतनी ही स्वाभाविक है, जितनी कि छोटे बच्चों के लिए माँ का दूध और कुछ हो भी कैसे सकता है। बच्चा अपना पहला पाठ अपनी माँ से ही सीखता है। इसलिए मैं बच्चे के मानसिक विकास के लिए उन पर माँ की भाषा को छोड़कर कोई दूसरी भाषा लादना मातृभूमि के प्रति पाप समझता हूँ।''3

हिंदी भारत की राजभाषा और करोडों की मातृभाषा है। करोडों व्यक्ति हिंदी बोलते हैं, समझते हैं, और उसमें काम भी करते हैं। डॉ. भोलानाथ तिवारी हिंदी के संदर्भ में कहते हैं कि ''हिंदी राजस्थान, हरियाणा, मध्यप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, उत्तरप्रदेश तथा बिहार की सामान्य भाषा और राजभाषा तो है ही, पूरे भारत की घोषित राजभाषा भी है। शिक्षा का माध्यम, राजकाज, आदि के अतिरिक्त राज्य के स्तर पर भी अपनी भाषा के रूप में भारत इस का प्रयोग कर रहा है।''4

प्राचीन समय में यह देखा जाता था कि हिंदी कहाँ–कहाँ बोली जाती है और वर्तमान समय में यह देखा जाता है कि हिंदी कहाँ नहीं बोली जाती। इस बात से इतना तो अंदाजा लगाया जा सकता है कि आज हिंदी की स्थिति में कितना परिवर्तन हुआ है। आज हिंदी बोलने, पढ़ने, समझने और उसमें काम करने वालों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है। हिंदी में लिखा जा रहा प्रवासी साहित्य भी इसका एक बड़ा उदाहरण है कि विदेशों में जाने के बाद भी भारतीय लोग हिंदी में साहित्य लिख रहे हैं और हिंदी को बढ़ावा दे रहे हैं। हिंदी भाषा के विकास में राजभाषा के निर्देश भी काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिसे देखना जरूरी हो जाता है। राज भाषा निर्देश

के अनुसार ''संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए। उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों का माध्यम बन सके और उसकी प्रति में हस्तक्षेप किये बिना हिंदुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्तरूप शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक हो वहाँ उसके शब्दभंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से गौणतः अन्य भाषाओं से शब्दग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।''5

हिंदी से देश के कई भागों में कार्य किये जा सकते हैं। हिंदी भाषा की लिपि देवनागरी है। बहुत से लोगों की मातृभाषा और इस का प्रयोग और वैज्ञानिक गुणों के कारण हिंदी भाषा को कराडों लोगों द्वारा इसे सीखा जा सकता है। इसलिए हिंदी में रोजगार की कई संभावनाएँ दिखाई देती हैं जिस इस प्रकार देखा जा सकता है– अनुवाद के क्षेत्र में– वर्तमान दौर में विज्ञान और तकनीकी शिक्षा की प्राथमिक जानकारी प्रत्येक व्यक्ति के लिए जरूरी हो गयी है, इस ज्ञान की आम आदमी तक पहुंच उसकी अपनी भाषा में होतो उसके समझने के लिए आसानी हो जाती है। यही स्थिति हिंदी भाषी लोगों के साथ है। यहां पुनः अनुवाद का महत्त्व स्थापित होता है। वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग इस दिशा में लगातार कार्य करता है। साथ ही विभिन्न उच्च विश्वविद्यालयों में अनुवाद का अध्ययन और अध्यापन रोजगार के नए मार्ग खोलता है।

अनुवाद में हिंदी का भविष्य काफी उज्जवल है। आज एक बड़े स्तर पर अनुवाद का कार्य चल रहा है। आज एक बड़ी मात्रा में अंग्रेजी से न केवल हिंदी अपितु उर्दू का हिंदी से रूपातंरण तथा विदेशी भाषाओं से भी आज हिंदी के रूपांतरण का कार्य चल रहा है। आज विदेशी छात्र भी विश्विद्यालय में आकर हिंदी का ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं अतः अनुवाद के कारण आज हिंदी में रोजगार की संभावनाएं काफी अग्रसर हुई है बशर्ते एक और भाषा कौशल व्यक्ति के पास हो। आज हिंदी में अनुवाद के बड़े–बड़े कोर्स भी चल रहे हैं जिसमें डिप्लोमा लेकर उन्हें रोजगार के लिए शक्तिशाली बनाया जा रहा है। मीडिया और हिंदी–आज हिंदी मीडिया का चलन तेजी से चल रहा है। आज हिंदी पत्रकारिता के कई बड़े बड़े कोर्स हैं जिस से हिंदी में रोजगार बढ़े हैं। बीबीसी हिंदी पत्रकारिता इस संदर्भ में एक नये आयाम के रूप में उभरकर आई है। मीडिया और हिंदी का संबंध तो बहुत पुराना है किंतु आज हिंदी पत्रकारिता के कौशल पर ध्यान देने की जरूरत है वेब दुनिया पर संजय द्विवेदी लिखते हैं कि ''मीडिया की दुनिया में इन दिनों भाषा का सवाल काफी गहरा हो गया है। मीडिया में जैसी भाषा का इस्तेमाल हो रहा है उसे लेकर शुद्धता के आग्रही लोगों मे ंकाफी हाहाकार व्याप्त है। चिंता हिन्दी की है और उस हिन्दी की जिसका हमारा समाज उपयोग करता है। बार–बार ये बात कही जा रही है कि हिन्दी में अंग्रेजी की मिलावट से हिन्दी अपना रूप–रंग–रस और रगं खो रही है। सो, हिन्दी को बचाने के लिए एक हो जाइए।''6

प्रौद्योगिकी और हिंदी–वर्तमान समय तेजी से कंप्यूटर और प्रौद्योगिकी की ओर बढ़ रहा है। ऐसे समय में हर कोई अपने आपको दूसरे से आगे रखना चाहता है ऐसे में सवाल यह है कि अधिकांश प्रौद्योगिकी और संचार का माध्यम तो अंग्रेजी ही है तो कैसे हिंदी इस क्षेत्र में अपनी जगह बना रही है। आज संचार में हिंदी अपनी एक अलग जगह बना रही है। आज हिंदी के सिंबल और हिंदी भाषा को कंप्यूटर और प्रौद्योगिकी में जगह मिल गयी है। इसका एक उद्धरण हिंदी में आने वाले इमोजी भी है जिसे व्यक्तिगत बातचीत के दौरान प्रयोग किया जा रहा है। आज फेसबुक से लेकर व्हाट्सएप्प में हिंदी के फॉन्ट और सिंबल मौजूद है। मानक हिंदी के अनुसार हिंदी में व्याकरण जांच, स्पेल चौकर, विलोम, पयार्यवाची आदि शब्दों की जानकारी देने वाला प्रारंभिक सॉफ्टवेयर सहजरूप में उपलब्ध होना चाहिए, जिससे तकनीक की सहायता से आज हिंदी में रोजगार की

संभावना को और अध्कि को बढ़ाया जा सके। आगामी तकनीकी नवाचार में हिंदी को वैज्ञानिक एवं कलात्मक रूप से बनाएं रखना जरूरी है, ताकि इस भाषा की लोकप्रियता में इजाफा होता रहे।

विज्ञापन और हिंदी–भूमंडलीकरण, बाजारवाद, तथा सूचना प्रौद्योगिकी ने वर्तमान युग को विज्ञापन का युग बना दिया है। हर दूसरी सड़क पर बड़े –बड़े विज्ञापन लगे रहते हैं। विज्ञापन के द्वारा किसी बात को अकि जनता तक पहुँचाया जा सकता है। हिंदी अपनी उपयोगिता के कारण आज बाजार की प्रिय भाषा बन गयी है। बदलते दौर में अंग्रेजी का प्रचलन काफी बढ़ा है किंतु काम तो फिर भी हिंदी में ही करना होगा। ये अब लिखने वाले कि मर्जी है कि वह स्क्रिप्टरोमन या देवनागरी में लिखे। यह हिंदी की ही ताकत है कि वह सोनिया गांधी और कैटरीना कैफ से भी हिंदी बुलवा ही लेती है। अतः विज्ञापन की दुनियां में हिंदी अपनी एक अलग पैठ बनाये हुए है। टीवी पर चलने वाले विज्ञापन भी हिंदी में ही आते हैं। विज्ञापन के लेखन से भी हिंदी में रोजगार की संभावना अधिक है। रेडियोजॉकी और समाचार वाचक–रेडियोजॉ की और समाचार वाचक के रूप में आज रोजगार की संभावना काफी बढ़ी हैं। आज का युवा वर्ग इसके प्रति खासा आकर्षित होता हुआ दिखाई दे रहा है। इस क्षेत्र में नावेद और अमीनसयानी काफी प्रसिद्ध हैं जिसके कारण हिंदी रेडियो और समाचारवाचन में रोजगार की संभावना बढ़ी हैं। हिंदी में क्रिएटिवराइटिंग–आज हिंदी क्षेत्र में रचनात्मक लेखन काफी तेजी से उभर रहा है। इस क्षेत्र में स्वतंत्र लेखन और नियमित लेखन किया जा सकता है। फिल्म, रेडियो, टीवी, वेबसाइट पोर्टल पर हिंदी में लोकप्रिय लेखन किया जा सकता है और बाहर रहकर भी अपनी सेवाएं दी जा सकती हैं। इसी कड़ी में ब्लॉग लेखन भी आया है। जिस पर अच्छा लिखकर रोजगार प्राप्त किया जा सकता है। भूमंडलीकरण के दौर में हिंदी बाजार की भाषा बन सके, बोलने–समझने, पढ़ने–लिखने से लेकर रोजगार में हिंदी प्रयोग की जाए, इसके लिए भाषा का सरल, भावात्मक एवं शुद्ध होना जरूरी है। परिनिष्ठित एवं शुद्धता ने नाम पर क्लिष्टता उसे जन प्रयोग से दूर कर सकती है।

आज भले ही हिंदी में संभावनाएं काफी बढ़ी हैं किंतु इसके साथ ही इसकी कई चुनौतियां भी हैं। हिंदी में पढ़ाने और अनुवाद तथा सरकारी नौकरी के अलावा अभी तक हिंदी में ऐसा कोई रोजगार का अवसर नहीं है जिसके अंतर्गत परिवार को पालने के लिए आय को अर्जित किया जा सके यह सबसे बड़ ीचुनौती हिंदी के सामने तो है ही साथ ही ऐसी कई चुनौतियां भी है, जिसे दूर करके हिंदी में रोजगार की गारंटी दी जा सकती है। हिंदी को हीनता से मुक्त करना–अंग्रेजी के बढ़ते चलन में आज हिंदी पढ़ने, लिखने और हिंदी में काम करने वाले लोग खुद को हीन दृष्टी से देखते हैं क्योंकि कहीं न कहीं यह हिंदी के साथ हो रही दूर्दशा का भी कारण है। एक दिन विदेश में जाकर हिंदी बोल देने से हिंदी की हीनता खत्म नहीं होगी, यह हीनता तब खत्म होगी जब इसमें रोजगार अधिक से अधिक प्राप्त होंगे तभी हिंदी को हीनता से बचाया जा सकता है।

हिंदी व्यापार की भाषा नहीं–देश में हिंदी बोलने और समझने वालों की संख्या में कमी नही है इसके बावजूद व्यापार की भाषा आज भी अंग्रेजी है। उत्पाद जिसको बेचना है वह हिंदी भाषी और बेचने वाला विक्रेता भी हिंदी भाषी किंतु बड़ी बड़ी कंपनियां जहां से व्यापार हो रहा है वहां सारी बातचीत और कागज अंग्रेजी में उत्पादों के नाम भी अंग्रेजी में। ऐसे में हिंदी में रोजगार बड़े स्तर पर कैसे संभव हो सकता है। भारत की अर्थव्यवस्था काफी तेजी से उभरर ही है ऐसे में अनेक देश भारत में निवेश करना चाहते है। भारत को देश में आने वाली कंपनियों के साथ यह अनुबंध करना चाहिए कि वह हिंदी में काम करें। चीन की अर्थव्यवस्था भारत के दससाल बाद उभरना शुरू हुई थी किन्तु आज चीन विकसित और शक्तिशाली अर्थव्यवस्था के रूप में विश्व

में उपस्थित है उसका एक कारण उसकी अपनी भाषा में व्यापार करना है। जिसके कारण वह इतनी तेजी से विकसित हो पाया है। भारत को भी यदि हिंदी में रोजगार को बढ़ाना है तो उसे व्यापार की भाषा ''हिंदी'' करना होगा तथा बाजार का हिन्दी करण करना होगा। हिंदी में रोजगार सृजन बढ़े, इसके लिए निरंतर इस भाषा का प्रचार प्रसार होना चाहिए। इस भाषा में साहित्य सृजन खूब होता है, लेकिन इसके प्रसार के लिए जरूरी है कि हिंदी साहित्य के अतिरिक्त अन्य अनुशासन की किताबें यथा विज्ञान, भूगोल, अर्थशास्त्र, चिकित्सा, कानून, तकनीक, कंप्यूटर आदि हिंदी में अधिकाधिक लिखीं जाएं, ये न केवल हिंदी भाषी लोगों को उनकी भाषा में ज्ञान प्रदान करेंगी बल्कि हिंदी का प्रसार एवं रोजगार सृजन भी होगा।

**संदर्भ स्रोतः–**


1. भारतेन्दु ग्रंथावली, दूसरा खण्ड, संकलनकर्ता तथा संपादन, ब्रजरत्न दास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पहला संस्करण संवत् 1991, हिन्दी की उन्नति पर व्याख्यान
2. महावीर प्रसाद द्विवेदी, रचना संचयन, चयन एवं संपादन, भरत यायावर, साहित्य अकादमी, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2006, पृष्ठ 141
3. ''भारतीय संस्कृति की संवाहिका है हिन्दी''– प्रो. नरेश मिश्र, राजभाषा भारती, अंक 154, जनवरी–मार्च 2018
4. डॉ. भोलानाथ तिवारी, हिन्दी भाषा, किताब महल, संस्करण 2004
5. भारत का संविधान, द्विभाषा संस्करण, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 2005, पृष्ठ 190
6. संजय द्विवेदी, वेब दुनिया, https%//m&hindi-webdunia-com/hindi&article/ hindi&112112800031_1-html\amp=1

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः109-111

# वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा और संभावनाएं

–डॉ रेणु कंसल
सहायक आचार्य , बाबा मस्थनाथ यूनिवर्सिटी

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

आज का समय भूमंडलीकरण का है, जिसका असली चेहरा बाजार के रूप में हमारे सामने उपस्थित हुआ है। तेजी से फैलती बाजार–संस्कृति ने हमारी राष्ट्रीय अस्मिता, खानपान, पहनावा, भाषा, संस्कृति आदि को प्रभावित किया है। बच्चों के सपने में बाजार का प्रवेश हो चुका है। मनुष्य की अस्मिता सुरक्षित रखने के लिए भाषा एक सशक्त माध्यम है। आज दुनिया में लगभग साठ हजार भाषाएं किसी न किसी रूप में बोली और समझी जाती हैं, लेकिन आने वाले समय में नब्बे प्रतिशत से अधिक का अस्तित्व खतरे में है। भाषाओं के इस विलुप्तीकरण के दौर में हिंदी अपने को न केवल बचाने में सफल हो रही है, बल्कि उसका उपयोग–अनुप्रयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। यह भाषा लगभग डेढ़ हजार वर्ष पुरानी है और इसमें डेढ़ लाख शब्दावली समाहित है।

संप्रति हिंदी को अंतरराष्ट्रीय दर्जा प्राप्त है, क्योंकि यह अनेक विदेशी भाषाओं को न केवल स्वीकार करती, बल्कि विश्व की समस्त भाषाओं को आत्मसात करने की क्षमता रखती है। हिंदी के विकास के लिए विश्व की पैंतीस सौ विदेशी कृतियों का हिंदी में अनुवाद किया जा चुका है। यह संख्या भी कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी ने हमें विश्व में एक नई पहचान दिलाई है। हिन्दी दिवस भारत में हर वर्ष '14 सितंबर' को मनाया जाता है। हिन्दी विश्व में बोली जाने वाली प्रमुख भाषाओं में से एक है। विश्व की प्राचीन, समृद्ध और सरल भाषा होने के साथ–साथ हिन्दी हमारी 'राष्ट्रभाषा' भी है। वह दुनियाभर में हमें सम्मान भी दिलाती है। यह भाषा है हमारे सम्मान, स्वाभिमान और गर्व की। हम आपको बता दें कि हिन्दी भाषा विश्व में सबसे ज्यादा बोली जाने वाली तीसरी भाषा है। धीरे–धीरे हिन्दीभाषा का प्रचलन बढ़ा और इस भाषा ने राष्ट्रभाषा का रूप ले लिया। अब हमारी राष्ट्रभाषा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी बहुत पसंद की जाती है। इसका एक कारण यह है कि हमारी भाषा हमारे देश की संस्कृति और संस्कारों का प्रतिबिंब है। आज विश्व के कोने–कोने से विद्यार्थी हमारी भाषा और संस्कृति को जानने के लिए हमारे देश का रुख कर रहे हैं। एक हिंदुस्तानी को कम से कम अपनी भाषा यानी हिन्दी तो आनी ही चाहिए, साथ ही हमें हिन्दी का सम्मान भी करना सीखना होगा।

हिन्दी का वैश्विक विस्तार उन लोगों को मुंह चिढ़ाने के लिए पर्याप्त है, जो इसे राजभाषा से राष्ट्रभाषा नहीं बनने देना चाहते। चीनी (मंदारिन) के बाद यह विश्व की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। यह विज्ञान, व्यापार, कामकाज एवं साहित्य की भाषा तो है ही, प्रेम की भी भाषा है। यही प्रेम हिन्दी का आकर्षण है, और इसी प्रेम से हिन्दी सभी को प्रेमपाश में बांधने में सक्षम है। जिस भाषा में इतनी खूबियां हों, उसकी स्थिति विश्व मंच पर सुदृढ़ एवं मुखर तो होगी ही।

भूमंडलीकरण के मौजूदा दौर में हिंदी वैश्विक बाजार की सशक्त भाषा बन चुकी है। पहले राष्ट्रीय आंदोलन और फिर हिंदी फिल्मों ने इस देश की संपर्क भाषा बना दिया है। हाल के दिनों में आईटी प्रोफशनल

हिंदी का पश्चिमी देशों तक ले गए हैं। दुनियाभर में उसका प्रसार हो रहा है। उधर टीवी चैनल हों या विज्ञापन उद्योग बाजारवादी अर्थव्यवस्था पर हिंदी का जादू सिर चढ़कर बोल रहा है। बहुराष्ट्रीय कंपनियां बड़े पैमाने पर अपने उत्पादों के विज्ञापन न सिर्फ हिंदी में तैयार करवा रही हैं, बल्कि उनमें क्षेत्रीय लहजा अपनाने पर जोर दे रही हैं। अभिप्राय यह है कि बाजार ने अपनी जरूरतों को ध्यान में रखकर हिंदी जैसी भाषा को ज्यादा संप्रेषणीय बनाया है।

जो लोग हिंदी के विश्व मंच पर प्रतिष्ठापित होने को लेकर संशकित रहते हैं, उन्हें यह याद रखना चाहिए कि हम 10 जनवरी को 'विश्व हिंदी दिवस' अकारण नहीं मनाते हैं। हिन्दी को वैश्विक पहचान दिलाने एवं विश्व मंच पर इसे स्थापित करने के उद्देश्य से वर्ष 1975 में 10 से 14 जनवरी तक नागपुर में पहला 'विश्व हिन्दी दिवस' आयोजित किया गया था। इस उपलक्ष्य में प्रति वर्ष 10 जनवरी को विश्व हिन्दी दिवस मनाने का निर्णय वर्ष 2006 में हमारे विदेश मंत्रालय द्वारा लिया गया था। इसके पीछे का मकसद साफ है, विश्व मंच पर हिन्दी की अलख जगाना।

हिन्दी ने विश्व मंच पर न सिर्फ अपनी श्रेष्ठ पहचान बनाई है, अपितु यह उस पर मजबूती से खड़ी भी है। इससे साबित होता है कि इसमें विश्व भाषा बनने की अद्‌भुत क्षमता है। एक अच्छी संपर्क भाषा होने के सारे गुण हिन्दी में विद्यमान हैं। इन्हीं ने हिन्दी को सार्वभौमिक बनाया है। कुछ देश तो ऐसे हैं, जहां हिन्दी का रुतबा देखते ही बनता है। जैसे, मारीशस एवं सूरीनाम। विश्व हिंदी का केंद्रीय सचिवालय मॉरीशस में बनना और हिंदी को प्रौद्योगिकी से जोड़ने के लिए किए जाने वाले सतत प्रयास इसे संयुक्त राष्ट्र की भाषाओं में स्थान दिलाने का प्रयास है। बाजार के कारण भी हिंदी का प्रचार–प्रसार व्यापक हो रहा है।

आज विश्व में सबसे ज्यादा पढे जानेवाले समाचार पत्रों में आधे से अधिक हिन्दी के हैं। इसका आशय यही है कि पढा–लिखा वर्ग भी हिन्दी के महत्त्व को समझ रहा है। वस्तुस्थिति यह है कि आज भारतीय उपमहाद्वीप ही नहीं बल्कि दक्षिण पूर्व एशिया, मॉरीशस,चीन,जापान,कोरिया, मध्य एशिया, खाडी देशों, अफ्रीका, यूरोप, कनाडा तथा अमेरिका तक हिंदी कार्यक्रम उपग्रह चौनलों के जरिए प्रसारित हो रहे हैं और भारी तादाद में उन्हें दर्शक भी मिल रहे हैं। आज मॉरीशस में हिंदी सात चौनलों के माध्यम से धूम मचाए हुए है। विगत कुछ वर्षों में एफ.एम. रेडियो के विकास से हिंदी कार्यक्रमों का नया श्रोता वर्ग पैदा हो गया है। हिंदी अब नई प्रौद्योगिकी के रथ पर आरूढ होकर विश्वव्यापी बन रही है। उसे ई–मेल, ई–कॉमर्स, ई–बुक, इंटरनेट, एस.एम. एस. एवं वेब जगत में बडी सहजता से पाया जा सकता है। इंटरनेट जैसे वैश्विक माध्यम के कारण हिंदी के अखबार एवं पत्रिकाएँ दूसरे देशों में भी विविध साइट्स पर उपलब्ध हैं।

हिंदी विश्व के प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण देशों के विश्व विद्यालयों में अध्ययन अध्यापन में भागीदार है। अकेले अमेरिका में ही लगभग एक सौ पचास से ज्यादा शैक्षणिक संस्थानों में हिंदी का पठन–पाठन हो रहा है। आज जब २१वीं सदी में वैश्वीकरण के दबावों के चलते विश्व की तमाम संस्कृतियाँ एवं भाषाएँ आदान –प्रदान व संवाद की प्रक्रिया से गुजर रही हैं तो हिंदी इस दिशा में विश्व मनुष्यता को निकट लाने के लिए सेतु का कार्य कर सकती है। उसके पास पहले से ही बहु सांस्कृतिक परिवेश में सक्रिय रहने का अनुभव है जिससे वह अपेक्षाकृत ज्यादा रचनात्मक भूमिका निभाने की स्थिति में है। हिंदी सिनेमा अपने संवादों एवं गीतों के कारण विश्व स्तर पर लोकप्रिय हुए हैं। उसने सदा–सर्वदा से विश्वमन को जोडा है। हिंदी की मूल प्रकृति लोकतांत्रिक तथा रागात्मक संबंध निर्मित करने की रही है। वह विश्व के सबसे बडे लोकतंत्र की ही राष्ट्र भाषा नहीं है बल्कि

पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, फिजी, मॉरीशस, गुयाना, त्रिनिदाद तथा सुरीनाम जैसे देशों की सम्पर्क भाषा भी है। वह भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों के बीच खाडी देशों, मध्य एशियाई देशों, रूस, समूचे यूरोप, कनाडा, अमेरिका तथा मैक्सिको जैसे प्रभावशाली देशों में रागात्मक जुडाव तथा विचार–विनिमय का सबल माध्यम है।

हिंदी में काम करने का, हिंदी को विश्व स्तर की भाषा बनाने का कार्य प्रगति पर है ।यहां यह बात स्पष्ट कर देना मैं अपना कर्तव्य समझती हूं कि साहित्यिक महत्व ,विचारों की महत्ता ,आदि इन सबका ओचित्य तभी है, जब इन सब को संवैधानिक आधार मिले। कोई भी विचार, कानून तब बनता है जब उसे सरकारी अनुमति प्राप्त होती है ।और वह तभी प्रभावशाली भी हो पाता है। इसलिए केवल वैचारिकता ही उपयोगी नहीं है। उसके लिए हमारे देश का सर्वश्रेष्ठ कानून ''संविधान'' में इसका क्या प्रावधान किया गया है, यह जानना भी अत्यंत आवश्यक है।

यदि निकट भविष्य में बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था निर्मित होती है और संयुक्त राष्ट्र संघ का लोकतांत्रिक ढंग से विस्तार करते हुए भारत को स्थायी प्रतिनिधित्व मिलता है तो वह यथाशीघ्र इस शीर्ष विश्व संस्था की भाषा बन जाएगी। यदि ऐसा नहीं भी होता है तो भी वह बहुत शीघ्र वहाँ पहुँचेगी। वर्तमान समय भारत और हिंदी के तीव्र एवं सर्वोन्मुखी विकास का द्योतन कर रहा है और हम सब से यह अपेक्षा कर रहे हैं कि हम जहाँ भी हैं, जिस क्षेत्र में भी कार्यरत हैं वहाँ ईमानदारी से हिंदी और देश के विकास में हाथ बँटाएँ। सारांश यह कि हिंदी विश्व भाषा बनने की दिशा में उत्तरोत्तर अग्रसर है।

**संदर्भः–**


1. हिंदी का वैश्विक परिदृश्य– सतीश कुमार
2. साहित्य, समाज और शिक्षण
3. वैश्विक परिदृश्य में हिन्दी का स्वरूप– डॉ. राम किनकर पांड्या

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः112-115

# प्रेमचंद का गोदानः समाज– उत्थान के लिए 'वरदान'

–रीतू रानी

सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक

♦♦♦

रखने और बचाए रखने के लिए प्रेमचंद जी द्वारा बताया गया सेवा और त्याग का मार्ग ही सर्वोत्तम उपाय दिखाई दे रहा है।

सामाजिक उत्थान में नारी का अतुलनीय योगदान–प्रेमचंद जी का मानना है कि समाज के कल्याण के लिए नारी की भूमिका पुरुष के बराबर की है। उनकी सजगता, कर्मठता बुद्धिमता, संवेदनशीलता एवं दृढ़ता के बिना समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन हा ही नहीं सकते। इनके सहयोग के बिना समाज अपने विकास की कल्पना भी नहीं कर सकता। इसी धारणा को उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया है कि"नारी का कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत है यदि वे पुरुषों का अंधानुकरण करेंगी तो इस से समाज का कोई कल्याण नहीं होगा। नारी की विद्या और अधिकार हिंसा और विध्वंस में नही अपितु सृष्टि और पालन में है। "वे आगे कहते हैं कि समाज के भले के लिए नारी को अपने– आपको मिटाना नहीं चाहिए बल्कि नारी को समाज–कल्याण के लिए अपने अधिकारों की रक्षा करनी पड़ेगी''2

गोदान के मुख्य पात्र होरी की पत्नी धनिया को एक ऐसी ही नारी के रूप में चित्रित किया गया है जो अपने बच्चों और पति के जीवन में सुख का उजाला करने के लिए स्वयं आजीवन कड़ी मेहनत की भट्टी में जलती रहती है। परंतु आजकल के समाज में कहीं–कहीं विरोधाभास भी देखने को मिल रहा है कि कुछ महिलाएँ भी कुछ पुरुषों की दानवी प्रवृत्तियों की साथि न बनकर विध्वंस, हिंसा और कलह को बढ़ावा देने में लिप्त हो रही हैं इस के लिए उन्हों ने गोदान में उन महिलाओं से पूछा भी है और विनती भी की है कि "क्या आप इस दानव लीला में सहयोग देकर, इस संग्राम–क्षेत्र में उतरकर संसार का कल्याण करेंगी? मैं आपसे विनती करता हूँ, नाश करने वालों को अपना काम कर ने दीजिए, आप अपने धर्म का पालन किए जाइए।" (171)

उन्होंने मातृत्व को गौरवशाली पद बताते हुए कहा "माता काका म जीवन–दान देना है, जिसके हाथों में अतुल शक्ति है। वह धर्म और त्याग की सजीव प्रतिमा है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना, सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है"(214)

उन्होंने नारियों को दान और त्याग का सुझाव भी दिया उनका मानना है कि यह नारी की सबसे बड़ी विभूति है। इसी आधार पर समाज का भवन खड़ा है"(360) इसलिए महिलाओं को सदैव दान देने के लिए और त्याग करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।3 संगठन ही शोषण से बचने की एक मात्र शक्ति–प्रेमचंद जी का मानना है कि समाज में किसी भी प्रकार का शोषण हो उसका सामना करने के लिए संगठन की शक्ति ही सब से शक्ति शाली हथियार के रूप में काम आती है इसलिए सबसे पहले आपसी वैमनस्य और स्वार्थ को त्याग कर संगठित होकर रहना चाहिए। अक्सर देखने में यह आता है कि शोषण के प्रमुख कारणों में सब से पहला कारण संगठन का अभाव होता है। हम एक दूसरे से ईर्ष्या करते हैं, हमारे अंदर प्रेम और भाई चारे की भावना समाप्त होती जा रही है यदि हम राम राज्य लाना चाहते हैं जिसमें न अन्याय हो, न अत्याचार हो, न किसी प्रकार का आतंक हो तो उसके लिए सबसे पहले हमें अपने अंदर एकता और संगठन की भावना को पल्लवित करना होगा। अंधविश्वास और स्वार्थ की भावना पर करारा प्रहार करना होगा। इसके बिना शोषण से बचना कोरी कल्पना सिद्ध होगी। उन्होंने कुछ लोगों के स्वभाव पर व्यंग्य और चोट करते हुए कहा है कि" ईर्ष्या और बैर केवल आनंद के लिए है। हमें नीचता और कुटिलता में ही निःस्वार्थ और आनंद मिलता है। हमें दूसरों के रोने पर हँसी आती है।"13

वर्तमान समय में यदि हम समाज का उत्थान चाहते हैं तो हमें अपनी कुटिलता, स्वार्थ, ईर्ष्या, बैर एवं

अमानक्कारी जैसे नकारात्मक भावों को पूर्ण रूप से तिलांजलि देनी होगी तभी हम उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं।4 धार्मिक पाखंड का खंडन–गोदान का होरी जीवन के सभी क्षेत्रों में धर्म के प्रति अंधी आस्था रखता है। यह धर्म भीरु है इसलिए धर्म काडर उसे कई बार ऋण लेने और चुकाने के लिए मजबूर कर देता है। जैसे – पंडित दाता दीन  का कर्ज सिर्फ इसलिए चुकाता है क्योंकि वह ब्राह्मण है। वह सोचता है" अगर ठाकुर या बनिए के रुपए होते तो उसे ज्यादा चिंता ना होती, लेकिन ब्राह्मण के रुपए! उसकी एक पाई भी दबगई, तो हड्डी तोड़ कर निकलेगी। भगवान ना करें कि ब्राह्मण काकोप किसी पर गिरे। वंश में कोई चुल्लू भर पानी देने वाला, घर में दिया जलाने वाला भी नहीं रहता। "वहीं दूसरी जब एक बार भोला उसकी गाय खोलकर लेजाता है तब भी है उसका विरोध करने की वजह यह कहकर बात को खत्म करने की कोशिश करता है कि "मैं ने धर्म परयह बात छोड़ दी। "वह धर्म से इतना डरता है कि जीवन पर्यंत अनेक आपत्तियों  को अपने आप गले लगाता रहता है और जीवनभर गरीबी और शोषण की मार सहता रहता है।

इस उपन्यास में उसकी धर्म के प्रति अंधभक्ति के कारण हमें अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। परंतु उसकी पत्नी धनिया गरीब, अनपढ़ एवं गँवार होते हुए भी होरी को समय–समय पर धर्म के नाम पर न डरने की सलाह देती है। एक बार जब गाय की चोरी के आरोप में होरी के भाई के घर की तलाशी लेने की बात पुलिस कहती है तो होरी इसे अपने भाई की बेइज्जती समझता है और भाई की बेइज्जती को बचाना अपना धर्म समझता है। इसके लिए भी वह 30 का कर्ज लेना स्वीकार कर लेता है। उसकी पत्नी धनिया इस बात का पुरजोर विरोध करती है  और उससे रुपए छीन लेती है। नागिन की तरह फुंकार कर बोली "यह रुपए कहाँ लिए जा रहा है ,बता? भला चाहता है, तो सब लौटा दे, नहीं तो कहे देती हूँ। घर के परानी रात –दिन मरे और दाने–दाने को तरसें, लत्ता भी पहनने को मयस्सर ना हो और अंजुलि–भर रुपए लेकर चला है इज्जत बचाने! ऐसी बड़ी है तेरी इज्जत जिसके घर में चूहे लोटें, वह भी इज्जतवाला है। दारोगा तलासी हीतो लेगा। ले–ले जहां चाहे तलासी। एक तो सौ रुपए की गाय गई, इस पर यह पलेथन! वाह री तेरी इज्जत!"

वह धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझती है पर धर्म के पाखंड का खंडन करते हुए अपने साहस और व्यावहारिकता का परिचय देती है। वह जहाँ एक ओर अपने पति होरी को धर्म के पाखंड पर आड़े हाथों लेती हैं वहीं दूसरी ओर धर्म के ठेकेदारों द्वारा धर्म का डर दिखाए जाने पर भी अपनी अविवाहित गर्भवती  बहू झुनिया का मानवता के नाते साथ देती है और अपने घर में आश्रय देती है और धर्म के ठेकेदारों पर व्यंग्य करते हुए कहती है "हम कोकुल–परतिष्ठा इतनी प्यारी नहीं है महाराज, कि उस के पीछे एक जीवन की हत्या कर डालते। ब्याह न सही ,पर उसकी बांह तो पकड़ी है मेरे बेटे ने ही। किस मुंह से निकाल देती? वही काम बड़े–बड़े करते हैं, मुदा उनसे कोई नहीं बोलता, उन्हें कलंक ही नहीं लगता। वही काम छोटे आदमी करते हैं, उनकी मरजाद बिगड़ जाती है। नाक कट जाती है। बड़े आदमियों को अपनी नाक दूसरों की जान से प्यारी होगी, हमें तो अपनी नाक इतनी प्यारी नहीं।"इस प्रकार धनिया स्वाभिमानी नारी है। अक्सर लोग गरीबी की दुहाई देकर स्वाभिमान ताक पर रख देते हैं परंतु वह विपरीत परिस्थितियों में भी स्वाभिमान से अपने जीवन को जीती है। एक दिन जब दाता दीन  उसे हाँफती हुई देखकर डाँटता है और कहता है। "अगर यही हाल है तो भीख भी माँगोगी। वह उसे तुरंत फटकारते हुए कहती है। भीख मांगो तुम, जो भिकमंगों की जात हो। हम तो मजूर ठहरे, जहाँ काम करेंगे, वहीं चार पैसे पाएँगे।"पंडित को करारा उत्तर मिल गया और वह चुप हो गया।

वर्तमान समाज में भी अनेक ऐसे किसान एवं गरीब मजदूर हैं जो होरी की भाँति धर्म भीरुता के कारण

शोषण के शिकार हो रहे हैं। यदि उनके परिवार में एक भी स्त्री धनिया की भाँति अपने परिवार के पुरुषों को धर्म की अंधभक्ति छोड़कर वास्तविक जीवन की सच्चाइयों को जानकर व्यवहार करने का पाठ पढ़ाए तो अनेक परिवार कर्ज एवं शोषण जैसी भयानक पीड़ा से मुक्त हो सकते हैं।5 युवा पीढ़ी के लिए विशुद्ध प्रेम का संदेश–वर्तमान समय में समाज में युवक–युवतियों के प्रेम प्रकरणों की संख्या में दिनोंदिन बढ़ोतरी होती जा रही है। हमें यहाँ–वहाँ युवक–युवती जोड़े के रूप में उठते बैठते नजर आ ही जाती हैं। कॉलेज जीवन में तो यह आम बात हो गई है, परंतु प्रश्न यह उठता है कि क्या वे वास्तव में एक दूसरे को प्रेम करते हैं? क्या वे वास्तव में प्रेम की परिभाषा को समझते हैं? उत्तर मिलेगा–शायद नहीं। प्रेम के सच्चे स्वरूप को न समझने के कारण ही आजकल प्रेम प्रसंगों में वासना की प्रवृत्ति अधिक बढ़ती जा रही है। विवाह से पहले यौन संबंध बनाना फिर प्रेमी–प्रेमिका में से किसी एक के न कहने पर उसके मुँह पर तेजाब फेंक देना, हत्या कर देना, ब्लैक मेल करना आदि समस्याओं से युवा पीढ़ी जूझ रही है। किसी भी देश की युवा पीढ़ी उस देश की धुरी होती है। उनके विकास में ही देश का विकास छिपा होता है, परंतु यदि युवा पीढ़ी खोखले प्रेम की अग्नि में आहूत हो जाए तो यह समाज के लिए अत्यंत चिंता का विषय हो जाता है। इस उपन्यास में युवा पीढ़ी के लिए मालती और डॉक्टर मेहता के प्रेम के माध्यम से यह स्पष्ट संदेश दिया गया है कि प्रेम की अंतिम परिणति के वल विवाह नहीं होता। विवाह न होने की स्थिति में प्रेम का अर्थ होता है अपने साथी के जीवन को सार्थक, सेवामय और सफल बनाने के लिए अपनी स्वार्थ वृत्ति, अरमानों और अभिलाषाओं को एक– दूसरे पर न्योछावर कर देना चाहिए। प्रेम पाने का नहीं देने का नाम है। प्रेम की इमारत त्याग की नींव पर खड़ी होती है। आजकल युवक–युवती प्रेम संबंध सिर्फ इसलिए बनाते हैं जिससे उनकी धन संबंधित और तन संबंधित आवश्यकताएँ पूरी होती रहेंगी। ऐसे संबंध समाज के उत्थान में बाधा हैं। आज के युवक–युवतियों को पहले अपने जीवन के लक्ष्य को निर्धारित करना चाहिए और फिर ऐसे साथी का चुनाव करना चाहिए जो तुम्हारे जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने में तुम्हारी सहायता करें। तुम्हारे परिवार एवं समाज के कल्याण के भागीदार बनें।

सन्दर्भ–सूची–

1. डॉ. अशोक तिवारी, प्रतियोगिता साहित्य, साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा (उ.प्र.)
2. गोदान, मैपल प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, नॉएडा (उ.प्र.)

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः116-119

# भारतीय संविधान और हिंदी भाषा का विकास

–डॉ० अर्चना कुमारी
सहायक प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, अस्थलबोहर, रोहतक

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

हमारा संविधान एक लिखित संविधान है। हमारे देश का संविधान बहुत प्रयासों के बाद 2 वर्ष, 11 माह तथा 18 दिन की अवधि में निर्मित हुआ था। संविधान निर्मात्री सभा के अथक प्रयासों से तथा डॉ० भीमराव अंबेडकर जी की अध्यक्षता में लिखित संविधान ने अपना पूर्ण रूप लिया। यह 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। प्रत्येक देश के संविधान में वह कानून, नियम, कर्तव्य होते हैं जो वहां के लोगों के जन–जीवन को सुचारू रूप से चलाने में सहायक होते हैं। भारत का संविधान भारत का सर्वोच्च विधान है। भारत का संविधान संसार के किसी भी गणतांत्रिक गणराज्य का सबसे लंबा लिखित संविधान है। संविधान में अनेक विषयों पर दिशानिर्देश दिए गए हैं। इन्हीं विषयों में एक विषय है हिंदी भाषा। भाषा अपने विचारों की अभिव्यक्ति का एक जरिया है और यह ज्ञान संचय का एक माध्यम भी है। भाषा का ज्ञान विकास की दिशा में एक सीढ़ी का काम करता है। जिस पर मानव चढ़ता हुआ विकास की ऊंचाइयों पर पहुंच जाता है। बालक के सर्वांगीण और समुचित विकास के लिए और लगातार आगे बढ़ने के लिए विचारों की अभिव्यक्ति की भाषा पर समुचित अधिकार प्राप्त करने की आवश्यकता है। भाषा के द्वारा ही वह अपने समाज से व्यवहार करता है व सामंजस्य स्थापित करता है। भारत में अनेक प्रकार की भौगोलिक स्थितियों और सामाजिक विभिन्नताओं के कारण अनेकभाषाएं और बोलियां बोली जाती हैं। इनमें से हिंदी को भारत संघ की राजभाषा होने का अवसर या यूं कहिए गौरव मिला है। हिंदी भाषा को समझने व बोलने वालों की संख्या भारत में सबसे अधिक है। यह भाषा उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, बिहार, राजस्थान ,दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा आदि राज्यों में बहुलता के साथ अपनाई जाती हैं। हालांकि इन क्षेत्रों में अनेक बोलियां या उपभाषाएं बोली जाती हैं। तब भी इनको हिंदी भाषी क्षेत्र ही माना जाता है।

स्वतंत्रता से पहले ही भारत की अधिकतर जनता ने स्वतंत्रता के साथ–साथ हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा मिले, इसकी मांग शुरू कर दी थी और इसकी मूक स्वीकृति दे दी थी। आश्चर्य की तो बात यह है कि इस भाषा के प्रचार प्रसार के लिए अहिंदी भाषियों ने अपना बढ़–चढ़ कर अमूल्य योगदान दिया है। जैसे पंजाब में गुरु नानक देव जी, गुजरात में दादूदयाल जी तथा स्वामी दयानंद सरस्वती जी, महाराष्ट्र के संतनाम देव जी तथा मणिपुर तथा असम में वैष्ण व राजाओं ने धार्मिक साहित्य तथा राज–काज में हिंदी को प्रथम स्थान प्रदान किया।संविधान के निर्माताओं ने इसी मांग और उदाहरणों को देखते हुए 14–9–1949 को हिंदी को भारत संघ की राज भाषा का दर्जा देकर, इसके बारे में संविधान में प्रावधान बना दिए।

संविधान के भाग 17 के अनुच्छेद 343 से लेकर 351 तक राजभाषा हिंदी के बारे में प्रावधान किए गए हैं। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं को मान्यता मिली हुई है।जैसे हिंदी, पंजाबी, उर्दू, कश्मीरी, संस्कृत, असमिया, उड़िया, बांग्ला, गुजराती, मराठी, हिंदी, तमिल, तेलुगू, मलयालम, कन्नड़, मणिपुरी,

कोंकणी, नेपाली, संथाली, मैथिली, बोडो तथा डोगरी। मूल संविधान में वर्णित भाषाओं के अलावा 21वें संविधान संशोधन द्वारा सिंधी भाषा, 71वें संविधान संशोधन द्वारा कोंकणी, नेपाली ,मणिपुरी तथा 92वें विधान संशोधन द्वारा संथाली, मैथिली, बोडो तथा डोगरी भाषा को आठवीं अनुसूची में जोड़ा गया। इन भाषाओं में से हिंदी भाषा को सारे भारत में अत्यधिक महत्व दिया गया। इसीलिए हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। अब प्रश्न उठता है कि हिंदी को राजभाषा का दर्जा क्यों प्राप्त हुआ ? इसके बारे में हम कह सकते हैं किः–

1 भारत संघ की आधी से अधिक आबादी, इसका मातृभाषा के रूप में प्रयोग करती है।

2 हिंदी को ही पंजाब, महाराष्ट्र, गुजरात ,बंगाल ,तमिलनाडु ,असम, आदि के लोग व्यापार कार्यों आदि में एक संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग करते हैं।

3 हिंदी को सीखने में अधिक कठिनाई नहीं होती। यह सरल भाषा है।

4 स्वतंत्रता संग्राम के दौरान हिंदी भाषा को ही राष्ट्रीयता की भावना जगाने के लिए प्रयोग में लाया गया था। हिंदी भाषा के इन्हीं गुणों को देखते हुए हिंदी को ही राजभाषा का स्थान प्राप्त हुआ।

हिंदी भाषा की संवैधानिक स्थितिः–अनुच्छेद 343 (1):–संविधान के किस अनुच्छेद के अनुसार हिंदी राजभाषा और लिपि देवनागरी होगी तथा 343 (2):–के अनुसार संविधान के प्रारंभ के 15 वर्षों तक अंग्रेजी का प्रयोग पहले की तरह किया जाएगा, ऐसा प्रावधान रखा गया।

अनुच्छेद 344:–भारत के राष्ट्रपति द्वारा 5 वर्ष की समाप्ति पर एक आयोग का गठन किया जाएगा और यह आयोग राजभाषा के संबंध में दिशा–निर्देश देगा तथा राजभाषा के ऊपर विचार करने के लिए एक समिति का गठन किया जाएगा। यह समिति राजभाषा हिंदी के तथा देवनागरी लिपि पर अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को देगी। राष्ट्रपति द्वारा आयोग तथा समिति के प्रतिवेदन के आधार पर निर्देश जारी किए जाएंगे।

अनुच्छेद 345:– राज्य का विधानमंडल विधि के अनुसार राजकीय कामों के लिए, उस राज्य में काम में लाई जाने वाली भाषा या हिंदी भाषा के प्रयोग पर विचार कर सकता है तथा जब तक किसी राज्य का विधानमंडल ऐसा नहीं करेगा, तब तक पहले की तरह से अंग्रेजी में ही काम होता रहेगा।

अनुच्छेद 346:–दो या दो से अधिक राज्यों के बीच संपर्क की भाषा आपसी सहमति से संघ की राजभाषा होगी।

अनुच्छेद347:–यदि किसी राज्य में लोगों द्वारा किसी भाषा को बड़ी मात्रा में स्वीकृति प्राप्त हो तथा वह राज्य उसे सरकारी कामों में प्रयोग के लिए स्वीकृति या मान्यता देदे और इस पर राष्ट्रपति भी अपनी स्वीकृति देदे तो उस भाषा का प्रयोग विधि सम्मत माना जाएगा।

अनुच्छेद 348 :–जब तक भारतीय संसद कोई कानून नहीं बनाती, तब तक सर्वोच्च तथा उच्चन्यायालय के सभी कार्य अंग्रेजी भाषा में होंगे। इसी प्रकार संसद या विधानमंडल में पेश होने वाले सभी विधेयक, संशोधन या अध्यादेश भी अंग्रेजी भाषा में पेश किए जाएंगे।

अनुच्छेद 349:–संविधान लागू होने के शुरुआती 15 वर्षों की अवधि तक संसद के किसी सदन से पारित राजभाषा संबंधी विधेयक या राजभाषा संबंधी कोई भी संशोधन राष्ट्रपति की बिना मंजूरी के स्वीकृत नहीं किया जाएगा। इस पर राजभाषा संबंधी आयोग की सिफारिश तथा स्वीकृति के बाद ही राष्ट्रपति स्वयं विचार कर अपनी स्वीकृति देंगे।

अनुच्छेद 350:–इसमें प्रत्येक व्यक्ति को प्राधिकृत भाषा में संघ या राज्य के अधिकारियों से याचना करने

का अवसर प्रदान किया गया है।

अनुच्छेद 350 (।):—राज्य का कर्तव्य यह है कि वह प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय या मातृभाषा में दे।

अनुच्छेद 351:—संघ का कर्तव्य है कि राजभाषा हिंदी का विकास करें।

हिंदी का विकासः—हिंदी को संविधान द्वारा भारत की राजभाषा स्वीकार कर लिया गया परंतु वास्तविकता देखी जाए तो हिंदी को अभी तक वह सम्मान नहीं मिला है। भारत में अनेक भाषी लोग रहते हैं। भाषाओं की बहुलता होने से देश में एक ऐसी स्थिति बन गई है जिस भाषावाद कहते हैं। जिससे हिंदी को बहुत नुकसान सहना पड़ रहा है। इसी की आड़ लेकर कुछ स्वार्थी लोग इसको राजभाषा का सम्मान मिले, इसका विरोध करने का कोई भी अवसर नहीं छोड़ते। हिंदी एक ऐसी भाषा है जिसमें अनेक देशज—विदेशज शब्दों को आसानी से अपने में आत्मसात करने का गुण है।

डॉ० राजेंद्र प्रसाद जी ने कहा हैः— ''हिंदी चिरकाल से ऐसी भाषा रही है जिस ने मात्र विदेशी होने के कारण किसी शब्द का बहिष्कार नहीं किया''

महात्मा गांधी के अनुसार ''हिंदुस्तान में सर्वमान्य हो सकने वाली अगर कोई लिपि है तो वह देवनागरी है। यदि राष्ट्रीय एकता समृद्ध करनी है, तो देवनागरी लिपि को अपनाना होगा'' महात्मा गांधी ने हिंदी को स्वराज्य की वाहिनी माना था। आज से वर्षों पहले भारतेंदु हरिश्चंद्र ने कहा किः—

निज भाषा उन्नति है, सब उन्नति को मूल।

बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटे नहि यका सूल।।

इन सब उदाहरणों को देखते हुए हम कह सकते हैं कि हिंदी को राजभाषा का जो गौरव और सम्मान मिला है वह हिंदी के अलावा और किसी भाषा को मिलना सही नहीं था क्योंकि भारत में अधिकतर जनता द्वारा हिंदी बोली या समझी जाती है।

आज हिंदी हमारी राजभाषा तो है परंतु इसे राजभाषा को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए और इसके व्यापक प्रचार प्रसार के लिए संघ ने अनेक योजनाओं को मूर्त रूप दिया हैः—

(1) वैज्ञानिक तथा तकनीकी बोर्ड की स्थापना कीः—1950 में शिक्षा मंत्रालय ने शब्दावली निर्माण के लिए वैज्ञानिक तथा तकनीकी बोर्ड की स्थापना की। सन 1779 में प्रकाशित कानूनी शब्दावली, जिसमें 34000 से अधिक कानूनी शब्दों के हिंदी पर्याय प्रकाशित होना, इसका उदाहरण है।

(2) हिंदी भाषा तथा देवनागरी के टाइपराइटरों का उत्पादनः—औद्योगिक विकास विभाग तथा टाइपराइटर बनाने वाले कारखानों के सहयोग से इनका उत्पादन बढ़ाया गया।

(3) देवनागरी लिपि के कंप्यूटर का उत्पादनः—हिंदी भाषा तथा देवनागरी लिपि तथा अन्य भारतीय भाषाओं का प्रयोग करने की दृष्टि से इलेक्ट्रॉनिक आयोग द्वारा लगातार विकास की दिशा मे ंकदम बढ़ाए जा रहे हैं।

(4) राजभाषा विभाग का गठनः—गृहमंत्रालय के अधीन राजभाषा विभाग का जून, 1975 में गठन किया गया। केंद्र सरकार के कार्यालयों में सरकारी कामकाजों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देना, इस विभाग का लक्ष्य है।

(5) राजभाषा अधिनियम का गठनः—सरकारी कामकाज के लिए हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए 1976 में राजभाषा अधिनियम बनाया गया।

(6) केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान का गठन किया गया।

(7) समितियों का गठनः–संसदीय राजभाषा समिति, हिंदी सलाहकार समिति, केंद्रीय हिंदी समिति, केंद्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति आदि समितियां लगातार हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार में अपना सहयोग दे रही हैं। इनके अलावा कवि सम्मेलनों, नाटकों, संगोष्ठीयो, हिंदी शोधो, हिंदी पत्र–पत्रिकाओं के द्वारा यह कार्य बड़े जोर शोर से किया जा रहा है। इसी प्रकार से कंप्यूटर, विज्ञापन, टेलीविजन, इंटरनेट आदि के द्वारा भी यह कार्य भली–भांति किया जा रहा है।

इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि संघ ने संविधान के 351वें अनुच्छेद में लिखे हुए कर्तव्य को भलीभांति निभाया है। इन सभी प्रयासों का ही परिणाम है कि आज हिंदी भारत की सीमा में ही ना बंधकर विश्व पटल पर भी अपना परचम लहरा रहीहै। इसी के परिणामस्वरूप 10 जनवरी को विश्व हिंदी दिवस मनाया जाता है। हिंदी की इन्हीं उपलब्धियों को देखकर पंडित गोविंद बल्लभपंत के कहे शब्द साकार हो रहे प्रतीत होते हैंः–''हिंदी का प्रचार और विकास कोई रोक नहीं सकता''। इसीलिए हम सबको भी हिंदी भाषा के प्रचार प्रसार के लिए लगातार कार्य करते रहना चाहिए। क्योंकि हिंदी ही ऐसी भाषा है जो सब से प्रभावशाली रूप को पेश करती हैं।

एनीबेसेंट ने भी कहा हैः–''भारत के विभिन्न प्रांतों में बोली जाने वाली, विभिन्न भाषाओं में जो भाषा सबसे प्रभावशाली बनकर सामने आती है वह है–हिंदी। वह व्यक्ति जो हिंदी जानता है, पूरे भारत की यात्रा कर सकता है और हिंदी बोलने वालों से हर तरह की जानकारी प्राप्त कर सकता है''।

इसीलिए हमें अपनी राजभाषा हिंदी का सम्मान करना चाहिए तथा राष्ट्रभाषा यह नहीं बन पाई इस पर रोष नहीं प्रकट करना चाहिए। राष्ट्रभाषा का प्रश्न, भाषा का प्रश्न न रहकर अब वोटों की राजनीति का प्रश्न बन गया है। राष्ट्रभाषा, राजभाषा, अंतरराष्ट्रीय भाषा, मानक भाषा आदि के बारे में जो आवाज उठाई जाती हैं, वे सब कोरी राजनीतिक स्वार्थों की उपज है। इसीलिए हमें, आपको, सब को यह बात अपने दिमाग में याद रखनी है और यह मानना है कि राजभाषा के अभाव में देश गूंगा और उसकी जनता गूंगी है। माना कि इस संविधान में हिंदी भाषा के विकास के लिए प्रावधान किए गए हैं परंतु जब तक सभी भारतीय हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार के लिए एकजुट एवं प्रयत्नशील नहीं होंगे, तब तक सविधान निर्माताओं का सपना पूरा नहीं होगा।

**संदर्भः–**

(1) योगेश चंद्र जैन, हिंदी निबंध, अरिहंत पब्लिकेशंस इंडिया लिमिटेड

(2) भाई योगेंद्र, हिंदी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा–2

(3) डॉ० चतुर्वेदी, सामयिक निबंध, उपकार प्रकाशन आगरा–2

ISSN : 2321-8037
संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः120-122

# स्वामी दयानंद और आर्यसमाज की हिंदी भाषा को देन

–डॉ० विवेक आर्य

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

स्वामी दयानंद ने 1857 के स्वाधीनता संग्राम को असफल होते देखा था और उसके असफल होने का मुख्य कारण भारतीय समाज में एकता की कमी होना था। स्वामी दयानंद ने इस कमी को समाप्त करना आवश्यक समझा। उन्होंने चिन्तन–मंथन किया कि अगर भारत देश को एक सूत्र में जोड़ना है तो उसकी एक भाषा होना अत्यंत आवश्यक है। यह रिक्त स्थान अगर कोई भर सकता था तो वह हिंदी भाषा थी। स्वामी दयानंद द्वारा सर्वप्रथम 19वीं सदी के चौथे चरण में एक राष्ट्र भाषा का प्रश्न उठाया गया और स्वयं गुजराती भाषी होते हुए भी उन्होंने इस हेतु आर्यभाषा (हिंदी) को ही इस पद के योग्य बताया। अपने जीवन काल में स्वामी जी ने भाषण, लेखन, शास्त्रार्थ एवं उपदेश आदि हिंदी में देने आरंभ किये जिससे हिंदी भाषा का प्रचार आरंभ हुआ और सबसे बढ़कर जनसाधारण के समझने के लिए हिंदी भाषा में वेदों का भाष्य किया। इससे हिन्दू साहित्य और भाषा को नये उपादान प्रदान किये और प्रत्येक आर्यसमाजी के लिए हिंदी भाषा को जानना प्रायः अनिवार्य कर दिया गया।

स्वामी जी इससे पहले संस्कृत में भाषण करते थे इसलिए केवल पठित पंडित वर्ग ही उनके विचारों को समझ पाता था। कालांतर में जब उन्होंने हिंदी भाषा में व्याख्यान प्रारंभ किये तो उससे जन साधारण की उपस्थिति न केवल अधिक हो गई अपितु जनता के लिए उनके प्रवचनों को ग्रहण करना आसान हो गया। स्वामी जी ने अपने संपर्क में आने वाले सभी देशी राजाओं को अपने राजकुमारों को हिंदी के माध्यम से धार्मिक शिक्षा दिलवाने की सलाह दी थी जिससे उनमें देश–भक्ति का सूत्र पात हो सके।

स्वामी जी द्वारा अपने सभी ग्रन्थ हिंदी भाषा में रचे गये जैसे सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वेद–भाष्य आदि। इनके सैकड़ों संस्करण छपे और देश में उनके प्रचार से हिंदी भाषा के प्रचार को जो गति मिली उसका पाठक सहजता से अनुमान लगा सकते हैं।

1882 में भारतीय शिक्षण संस्थाओं में भाषा के निर्धारण को लेकर 'हन्टर कमीशन' के नाम से कोलकाता में आयोग का गठन सर विलियम हंटर की अध्यक्षता में किया गया था। स्वामी दयानंद ने इस कमीशन के समक्ष हिंदी को शिक्षा की भाषा निर्धारित करने के लिए आर्यसमाजों को निर्देश दिया कि वे हिन्दी भाषा के समर्थन में हंटर आयोग में अपनी सम्मति भेजें। फर्रुखाबाद, देहरादून, मेरठ, कानपुर, लखनऊ आदि आर्यसमाजों को भी इस विषय पर कोलकाता पत्र भेजने को कहा था।

हिंदी भाषा भारतीय जनमानस की मानसिक भाषा है इसलिए उसे ही पाठ्यक्रम की भाषा के रूप में स्वीकृत किया जाये ऐसा समस्त आर्यसमाज द्वारा हिंदी भाषा के प्रचार के लिए प्रयत्न किया गया था। निश्चित रूप से हिंदी भाषा के प्रचार के लिए यह कार्य ऐतिहासिक महत्व का था।

स्वामी जी के देहांत के पश्चात् आर्यसमाज के सदस्यों ने हिंदी भाषा के प्रचार प्रसार में दिन रात एक कर दिया। आर्यसमाज के सदस्यों द्वारा लाखों पुस्तकें हिंदी भाषा में अलग अलग विषयों पर लिखी गई। गद्य,

पद्य, काव्य, निबन्ध आदि सभी प्रकार के साहित्य की रचना हिंदी भाषा में हुई। हजारों पत्र–पत्रिकाओं का हिंदी भाषा में प्रकाशन हुआ। सैंकड़ों पाठशालाओं, विद्यालयों, गुरुकुलों के माध्यम से हिंदी भाषा का सम्पूर्ण भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में जैसे मारीशस, फिजी, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में भी हिंदी भाषा का प्रचार प्रसार हुआ। आर्य दर्पण (आर्य समाज का सर्वप्रथम हिंदी पत्र) , आर्य भूषण, आर्य समाचार, भारतसुदशा प्रवर्तक, वेद प्रकाश, आर्य पत्र, आर्य समाचार, आर्य विनय, आर्य सिद्धांत, आर्य भगिनी आदि अनेक पत्र तो विभिन्न आर्य संस्थाओं द्वारा 20 वीं शताब्दी आरम्भ होने से पहले ही निकलने आरम्भ कर दिए थे। 20 वीं शताब्दी में इनकी संख्या इतनी थी कि इस लेख में उन्हें समाहित करना संभव नहीं हैं। पाठक इस उल्लेख से समझ सकते हैं कि आर्यसमाज के प्रचार का माध्यम हिन्दी होने के कारण हिंदी भाषा के उत्थान में आर्यसमाज का क्या योगदान था।

स्वामी जी के प्रशंसक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की हिंदी भाषा को देन से साहित्य जगत भली प्रकार से परिचित है। कालांतर में मुंशी प्रेमचंद, कहानीकार सुदर्शन, आचार्य रामदेव, बनारसी दास चतुर्वेदी, इंद्र विद्यावाचस्पति, सुमित्रानंदन पन्त, मैथिलिशरण गुप्त, पदम् सिंह शर्मा आदि से आरंभ होकर हरिवंश राय बच्चन, विष्णु प्रभाकर, क्षितीश वेदालंकार आदि तक हजारों की संख्या में आर्यसमाज से दीक्षित और अनुप्राणित साहित्यकारों ने हिंदी साहित्य की रचना की जिससे हिंदी समस्त भारत की साहित्यिक भाषा के रूप में स्थापित हो गई।

स्वामी श्रद्धानंद ने अपने पत्र सद्धर्म प्रचारक को एक रात में उर्दू से हिंदी में परिवर्तित कर दिया, उन्हें आर्थिक हानि अवश्य उठानी पड़ी पर उनके पत्र की प्रसिद्धि को देखते हुए उसे पढ़ पाने की इच्छा ने अनेकों पाठकों को देवनागरी लिपि सीखने के लिए प्रेरित किया।

पत्रकारिता में नये आयाम आर्यसमाज के सदस्यों के स्थापित किये। पंजाब के सभी प्रसिद्ध अखबार जैसे प्रताप, केसरी, अर्जुन, युगांतर आदि अनेक पत्र हिंदी में ही निकलते थे, जो आर्यसमाजियों ने ही चलाए थे। पंजाब के जन आंचल में उस काल में उर्दू मिश्रित फारसी भाषा बोली जाती थी जिसके प्रचार में उर्दू पत्र जमींदार आदि का पूरा सहयोग था।

सैकड़ों गुरुकुलों, डीएवी स्कूल और कॉलेजों में हिंदी भाषा को प्राथमिकता दी गई और इस कार्य के लिए नवीन पाठ्य क्रम की पुस्तकों की रचना हिंदी भाषा के माध्यम से गुरुकुल कांगड़ी एवं लाहौर आदि स्थानों पर हुई जिनके विषय विज्ञान, गणित, समाज शास्त्र, इतिहास आदि थे। यह एक अलग ही किस्म का हिंदी भाषा में परीक्षण था जिसके वांछनीय परिणाम निकले।

विदेशों में भवानी दयाल सन्यासी, भाई परमानन्द, गंगा प्रसाद उपाध्याय, डॉ0 चिरंजीव भारद्वाज, मेहता जैमिनी, आचार्य रामदेव, पंडित चमूपति आदि ने हिंदी भाषा का प्रवासी भारतीयों में प्रचार किया जिससे वे मातृभूमि से दूर होते हुए भी उसकी संस्कृति, उसकी विचारधारा से न केवल जुड़े रहे अपितु अपनी विदेश में जन्मी सन्तति को भी उससे अवगत करवाते रहे।

आर्यसमाज द्वारा न केवल पंजाब में हिंदी भाषा का प्रचार किया गया अपितु सुदूर दक्षिण भारत में, आसाम, बर्मा आदि तक हिंदी को पहुँचाया गया। न्यायालय में दुष्कर भाषा के स्थान पर सरल हिंदी भाषा के प्रयोग के लिए भी स्वामी श्रद्धानंद द्वारा प्रयास किये गये थे।

वीर सावरकर हिंदी भाषा को स्वामी दयानंद के देन पर लिखते हैं–''महर्षि दयानंद द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश में जिस हिंदी के दर्शन हमें मिलते हैं, वही हिंदी हमें स्वीकार है। यह सरल, अनावश्यक विदेशी शब्दों से अलिप्त होकर भी अत्यंत अर्थ वाहक तथा प्रवाही है। महर्षि दयानंद ही सर्वप्रथम नेता थे, जिन्होंने 'हिंदुस्तान

के अखिल हिन्दुओं की राष्ट्र भाषा हिंदी है। ऐसा उद्घोष व प्रयास किया था।
(सन्दर्भ–वीर वाणी, पृष्ठ–64)

शहीद भगत सिंह ने पंजाब की भाषा तथा लिपि विषयक समस्या के विषय में अपने विचार भाषण के रूप में प्रस्तुत करते हुए हिंदी भाषा के समर्थन में कहा था कि–

'बहुत से आदर्शवादी सज्जन समस्त जगत को एक राष्ट्र, विश्व राष्ट्र बना हुआ देखना चाहते हैं। यह आदर्श बहुत सुंदर हैं। हमको भी इसी आदर्श को सामने रखना चाहिए। उस पर पूर्णतया आज व्यवहार नहीं किया जा सकता, परन्तु हमारा हर एक कदम, हमारा हर एक कार्य इस संसार की समस्त जातियों, देशों तथा राष्ट्रों को एक सुदृढ़ सूत्र में बांधकर सुख वृद्धि करने के विचार से उठना चाहिए। उससे पहले हमको अपने देश में यही आदर्श कायम करना होगा। समस्त देश में एक भाषा, एक लिपि, एक साहित्य, एक आदर्श और एक राष्ट्र बनाना पड़ेगा, परन्तु समस्त एकता से पहले एक भाषा का होना जरूरी है, ताकि हम एक दूसरे को भली भान्ति समझ सके। एक पंजाबी और एक मद्रासी बैठकर केवल एक–दूसरे का मुंह ही न ताका करें, बल्कि एक–दूसरे के विचार तथा भाव जानने का प्रयत्न करें। परन्तु यह पराई भाषा अंग्रेजी में नहीं, बल्कि हिंदुस्तान की अपनी भाषा हिंदी में होना चाहिए।

महात्मा गाँधी हिंदी भाषा के कितने बड़े समर्थक थे इसका पता उनके इस कथन से मिलता है जब उन्होंने कहा था की जगदीश चन्द्र बसु आदि विद्वानों के आविष्कार जनता की भाषा में प्रकट किये जाते तो जिस प्रकार तुलसी रामायण जनता की भाषा में लिखी होने के कारण अपनी चीज बनी हुई हैं, उसी प्रकार से विज्ञान की चर्चायें, विज्ञान के आविष्कार जनता के जीवन को प्रभावित करते। स्वामी दयानंद और आर्यसमाज की हिंदी भाषा को देन निश्चित रूप से अविस्मरणीय एवं अनुकरणीय है।

संगम Impact Factor : 2.636 www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed & Refereed Journal
Vol. 10, Issue 9
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक पृष्ठः 123-126

# हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श

–निरुत्पल बोरा
शोधार्थी, एम.फिल. हिन्दी विभाग, विश्वभारती विश्वविद्यालय, शांतिनिकेतन

♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦♦

आजकल साहित्य की विचारधाराओं में स्त्री विमर्श व्यापक चर्चा का विषय रहा है। ऐसी सूरत में सिमोन दा बाउवार से लेकर प्रभा खेतान, तसलीमा नसरीन, मैत्रेयी पुष्पा अपने सृजन एवं बेवाक विचारों के लिए चर्चा में रही हैं। हिन्दी कथा साहित्य प्राचीन विधा है। पुरातन काल से ही भारतीय वांगमय में असंख्य स्त्री समस्या से जुड़ी हुई असंख्य कहानियाँ बिखरी हुई हैं। ग्यारहवीं सदी में सर्वप्रथम 'वृहत कथामंजरी' तथा गुणाढ्य रचित 'कथासरित्सागर' की रचना हुई थी। संस्कृत साहित्य में 'दशकुमारचरित' की रचना हुई। पंचतंत्र को कहानियों का इनसाइक्लोपीडिया कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसी दौरान फारस देश में लोक साहित्य 'सिंदबाद जहाजी' तथा 'सहस्ररजनी कथा' में मध्ययुगीन नारी की सामाजिक स्थिति तथा उत्पीड़न चित्रण मिलता है। पश्चिम कथाकारों में मोंपाशा, बालनाक, एमिलभोला, एहटोनी चेखव लियो तालस्ताय के साहित्य में भी स्त्री विमर्श को रेखांकित किया गया है। डॉ० विमल कीर्ति लिखते है, "थेरीगाथा नारी स्वतंत्रता को प्रकट करनेवाला प्रथम ग्रंथ है।"1 आज साहित्य में स्त्री विमर्श आन्दोलन के रूप में उभर रहा है किन्तु हमारे साहित्य में वाल्मीकि रामायण तथा आदियुग से शुरू हो चुका था। आज स्त्री विमर्श के नाम पर पुरूषों द्वारा कविता कहानी के जरिए से स्त्रियों को दयनीय दिखाने की कवायद शुरू हो गई है। अब समय आ गया है कि स्वयं लेखिकाओं को भी आत्मावलोकन करना चाहिए महज चका– चौंध के जुमलो से साहित्य का निर्माण नहीं होता है।

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए लोक धरातल में महत्व को प्रेमचंद जी ने अपने कथा साहित्य में व्यापक प्रयोग किए है। भारतवर्ष में अनेक वर्षों से नाना प्रकार की कुप्रथाओं का बोलबाला रहा है। प्रेमचंद हिन्दी के उन लेखकों में से एक है, जिनके साहित्य पर अलग–अलग दृष्टिकोण से विचार हुआ है। हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श सर्वप्रथम प्रेमचंद के कथा साहित्य में मिलता है। उनके सभी उपन्यासों में नारी उत्पीड़न को पूरी शिद्दत से चित्रण किया गया है। 'निर्मला', 'मनोरमा' तो पूरी तरह नारी समस्याओं पर आधारित उपन्यास है। 'कफन' कहानी दलित नारी के वेदनामय जीवन की करुण गाथा है। "गोदान में प्रेमचन्द जिस तरह धनिया और मालती का चित्रण करते है वे भी पश्चिम और भारतीयता की बहस उलझकर रह जाते है। बल्कि स्त्रीत्ववादी दृष्टि से देखें तो जयशंकर प्रसाद प्रेमचन्द से कहीं अधिक प्रगतिशील दिखाई देते है। वह ही हैं जो धरुवस्वामिनी में पति के जीवत रहते धरुवस्वामिनी का विवाह उसकी पसंद के पुरुष चन्द्रगुप्त से करने की वकालत करते है।" (क्षमा शर्मा)2 भारत में स्त्री विमर्श को सार्थक मंच प्रदान करने में राजा राममोहन राय, बाल गंगाधर तिलक, सर सैयद अहमद खान, दयानंद सरस्वती, ज्योतिबाफूले, महात्मा गांधी का योगदान रहा है, वे हिन्दी साहित्य सृजकों को प्रेरित करते रहे हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात देश का विभाजन भयंकर त्रासदी लेकर आया। मानवता कराह उठी ऐसे खोफनाक दौर में हिन्दी के कथाकारों ने विभाजन की त्रासदी से उत्पीड़ित जन की पीड़ा की अभिव्यक्ति कर बर्बरता के

खिलाफ आवाज उठाई। स्वतंत्रतोत्तर पीढ़ी के कहानीकारों ने न केवल सामाजिक सरोकार पर बल दिया उन्होंने कथ्य, शिल्प तथा भाषा की दृष्टि से साठोत्तरी कहानी को नई आधारभूमि दी। सन् 1960 के बाद देश राजनैतिक एवं सामाजिक वातावरण में अस्थिरता देखने के लिए मिलती है। स्वतंत्रता प्राप्ति का लक्ष्य भटकने लगा ऐसी स्थिति में मोहभंग का दौर शुरू होता है।

स्त्री विमर्श पर चर्चा करने से पहले हमें एक नजर साहित्य के उद्देश्य को भीदेखना होगा। वहस चल रही है, स्त्री लेखन या स्त्री के लिए साहित्य लेखन। यदि स्त्री की स्थिति को गंभीर चिंता का विषय मानकर साहित्य सृजन को स्त्री लेखन का नाम दिया जाए तो यह केवल साहित्य के एकांगी पक्ष को ही प्रतिफलित करेगा। अगर हम नारी उत्थान एवं मुक्ति की बात करें तो हमारा वांगमय स्त्री लेखन से भरा हुआ है। भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति का अति गंभीरता से चिंतन हुआ है। प्रेमचंद एवं प्रेमचंदोत्तर साहित्य में नारी की स्थिति का विस्तार से वर्णन हुआ है। प्रेमचंद के उपन्यासों में सभी नारी पात्र सामाजिक विसंगतियों से जूझते मिलेंगे। 'बड़े घर की बेटी', 'अलगोझया, 'कफन' कहानियों में नारी की वेदना का मार्मिक चित्रण किया है। प्रेमचंद के समकालीन जयशंकर प्रसाद की 'आकाशदीप', 'मधुलिका' जैसी कहानियों में नारी के त्याग, राष्ट्र भक्ति, अनुराग के उदात्त रूप का चित्रण मिलता है। प्रेमचंद जी ने कहा है कि जब पुरुष में नारी के गुण आ जाते हैं तो वह देवता बन जाता है। प्रेमचंदोत्तर साहित्यकारों में जैनेन्द्र कुमार, यशपाल, भगवती चरण वर्मा, शिवपूजन सहाय की कहानियों में नारी संघर्ष की सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है। यशपाल रचित 'दिव्या'में प्राचीन भारतीय समाज में अपनी पहचान से जूझती दिव्या की मार्मिक वेदना का चित्रण किया गया है। भगवती चरण वर्मा की 'चित्रलेखा' में काम एवं मोक्ष प्रेम से जूझती नारी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाल गया है।

शिव पूजन सहाय की कहानी 'कहानी का प्लाट' की भग जोगिनी नारी शोषण एवं वेदना का सजीव रुप मूर्ति मान करती है। यदि साहित्य को नर–नारी सृजन या दलित–स्वर्ण सृजन में बांध कर देखे तो यह साहित्य चिन्तन की विपरीत प्रक्रिया है। यह सर्वविदित है कि विश्व साहित्य में किसी भी सृजन में मनुष्य को ही साहित्य का लक्ष्य बनाया गया है, अब तो चाहे किसी भी वर्ण या लिंग का हो इस से फर्क नहीं पड़ता। आदिकाल से आधुनिक काल तक साहित्य की यात्रा मानवीय संवेदना से जुड़ी है किसी वर्ग या श्रेणी से नहीं। हिन्दी साहित्य में साठ के दशक में श्रीमती मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, मृदुला गर्ग, उषा प्रियं वदा प्रतिष्ठित महिला कथाकारो ंने साहित्य सृजन किया। यहां यह उल्लेखनीय है मन्नू जी का उपन्यास" महाभोज" आजादी केबाद उत्पन्न राजनैतिक कलुषका चित्रण करता है। उपन्यास कथा एवं शिल्प की दृष्टि से महत्वपूर्ण है लेकिन इस उपन्यास में नारी विमर्श जैसा कोई विषय नहीं है। मन्नू भण्डारी रचित 'महाभोज' भारतीय राजनीति तथा सामाजिक शोषण का पर्दा फाश करता है। दूसरी तरफ मन्नू जी के उपन्यास 'आपका बंटी' में प्रेमविवाह परिवार विघटन से उपजी त्रासदी का सुन्दर चित्रण है तथा नारी मनोदशा को रेखांकित करता है।

स्त्रीविमर्श को लेकर आजकल बहस जारी है कि सहानुभूति तथा स्वानुभूति का साहित्य कैसा होना चाहिए। साठ के दशक में पुरुषो ंने भी स्त्री की वेदना को अपने सृजन में महत्वपूर्ण स्थान दिया है। धर्मवीर भारती के कथा साहित्य में नारी की उपस्थिति स्त्री–स्वतंत्र के वैचारिक पक्ष को पूरी ताकत से प्रस्तुत किया है। भारती के उपन्यास 'गुनाहों के देवता' में सुधा के अनुराग एवं प्रेम पीड़ा की अभिव्यक्ति है। भारती की कहानियों को नारी वेदना का दस्तावेज कहा जाये तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। भारती की कहानी 'आश्रम, 'बंदगली का आखिरी मकान', 'गुलकी बन्नों' सामाजिक विषमता भावनात्मक चित्रण मिलता है। स्त्री विमर्श चिन्तन को दिशा देने में

कमलेश्वर जी ने प्रभावशाली मंच प्रस्तुत किया है। साठ के दशक में नई सर्जनात्मक शक्ति ने नए यथार्थ को जन्म दिया। कमलेश्वर ने 'देवा की माँ' कहानी में स्त्री मुक्ति को प्रभावशाली शैली में प्रस्तुत किया है। इस कहानी में नारी का स्वाभिमान तथा पुरुष अहं का टकराव तथा उससे मुक्ति पाने की छटपटाहट मिलती है। मांस का दरिया कहानी में उन्होंने देह व्यापार व्यथा को शब्द दिए है। उनकी कहानियाँ नारी संघर्ष और अंतर्विरोधों का दर्ज करती है। कमलेश्वर के समकालीन राजेन्द्र यादव की कहानी'जहाँ लक्ष्मी कैद है', मोहन राकेश की कहानी' आद्रा, 'मिसपाल' स्त्री विमर्श की बेमिसाल रचना है। इसी दौरान सुरेन्द्र वर्मा का उपन्यास'मुझे चाँद चाहिए' काफी चर्चा में रहा है। उपन्यास में नायिका परम्परावादी परिवार की 'सिलबिल' अपने संघर्ष वर्षा वशिष्ट बन कर ख्याति अर्जन करती है, अपना सफर तय करती है।

यदि हम स्वस्थ आदर्श नारी विमर्श की बात करें तो महादेवी वर्मा का गद्य सृजन नर–नारी एवं सामाजिक बानगी का वांगमय कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। उनके अनुसार,"हमें न किसी पर जय चहिए, न किसी से पराजय, न किसी पर प्रभुता चाहिए, न किसी पर प्रभुत्व, केवल अपना वह स्थान वे स्वत्व चाहिये जिनका पुरुषों के निकट कोई उपयोग नहीं है, परंतु जिनके बिना हम समाज का उपयोगी अंग नहीं बन सकेगी।"3 मानवीय संवेदना के संदर्भ में उन्होंने प्रगतिशील रचनात्मक साहित्य लिखा है।

साठ के दशक में महिला लेखन सृजन के क्षेत्र में नये प्रतिमान स्थापित किये हैं। कृष्णा सोबती की चर्चा करना जरूरी है उन्होंने अपनी संयमित अभिव्यक्ति और सुधरी रचनात्मकता से हिन्दी कथा साहित्य को विलक्षणता जगी दी है। उनकी प्रमुख कृतियों में 'ए लड़की', 'मित्रों मर जानी', 'डार से बिछुड़ी', 'यारो के यार', 'सूरजमुखी अंधेरे के' आदि हैं। मृदुला गर्ग हिन्दी के अन्यतम महिला कथाकार हैं जिन्होंने नारी के जमीर को जगाने का प्रयास किया है। उनकी कहानियाँ' संगति–विसंगति' संग्रह में प्रकाशित हुई हैं। श्रीनगर मे ंजन्मी चन्द्रकान्ता ने अपने सृजन में सामाजिक और राजनैतिक के लिए जानी जाती है। उनके संग्रह' ऐलान गली जिंदा है, अपने–अपने कोणार्क और यहाँ वितख्ता बहती है' मानवीय संवेदना से ओत–प्रोत रचना है। ममता कालिया की कहानियाँ अपने परिवेश से जुड़ी घटनाओं के बीच लिखी गई है। लेखिका ने स्त्री को नर–नारी के संबंध के दायरे में ही नहीं देखा है। उन्होंने समाजकी जटिल संरचना में स्त्री की स्थिति और नियति दोनों को परिभाषित किया है। सुमन राजे लिखते हैं, "यह विचित्र किन्तु सत्य है कि लोक नायक तो बहुत हैं, जिनमें से कई लोक महाकाव्य के नायक भी हैं, पर स्त्री नायिकाएं सिर्फ स्त्री के कंठ में हैं।"4 इस दौर के कथाकारों में मैत्रेयी पुष्पा, चित्रा मुदगल, नासिरा शर्मा, सूर्य बाला जैसे महिला कथाकारों ने महिलाओ ंको प्रगतिशील विचारध ारा की ओर प्रेरित करने का प्रयास किया है। नारी के अधिकारों पर पलायनवादी तर्क प्रस्तुत होते रहते हैं। चित्रा मुद्गल के शब्दों में, "नारी चेतना की मुहिम स्वयं स्त्री के लिए अपने अस्तित्व को मानवीय रूप में अनुभव करने और करवाने का आंदोलन है की मैं सम्मानपूर्वक रहने की अधिकारी हूँ।"

सन1 960 और 1970 के बीच हिन्दी कथा साहित्य में चौकाने वाले परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। इन्ही सामाजिक सरोकारों के सत्य को उजागर करने के लिए प्रगतिशील साहित्यकारों ने'सारिका'पत्रिका को मंच बनाया। सारिका के माध्यम से सार्थक बहस शुरू हुई तथा कथा साहित्य पर परत–दर–परत अनुसंधान करते हुए नये आन्दोलनों को जन्म दिया। इसी कड़ी में दलित विमर्श, स्त्री विमर्श चर्चित प्रगतिशील सृजन विचारध ाराओं ने साहित्य में जगह बनाई। सामाजिक विसंगतियों में ही साहित्य ने नये आन्दोलन को जन्म देता है। सारिका पत्रिका के गणिका विशेषांक, दलित विशेषांक, देवदासी विशेषांक ने साहित्य को जनवादी विचारधारा से

प्रेरित किया। स्त्री विमर्श बहुआयामी विस्तृत विषय है जो साहित्य की अन्य विधाओं में भी सृजित हुआ है। भारतेन्दु युगीन साहित्य में गद्य–नाटक तथा कविताओं में भारतीय नारी की विडंबनापूर्ण स्थिति का वर्णन मिलता है। हिन्दी के प्रमुख मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत, पंचवती में सर्वप्रथम सीता उर्मिला के माध्‍म से भारतीय नारी की स्थिति पर प्रकाश डाला है। प्रसाद, निराला, महादेवी, पंत, दिनकर आदि की रचनाओं में नारी पीड़ा की अभिव्यक्ति मिलती है। इतना ही नहीं भारतेन्दु युगीन कवियों ने अबला को सबला बनाने के लिए प्रेरित किया। 'हमें अबला कोई न समझो हम भारत की नारी हैं।' (लम्बे हाथ, रफी और साथी)

**संदर्भ ग्रंथ–सूची :**


1. डॉ० विमल कीर्ति, थेरी गाथा, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली, 21 (भूमिका)
2. क्षमा शर्मा, स्त्रीत्ववादी विमर्शः समाज और साहित्य,राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
3. महादेवी वर्मा, शृंखला की कड़ियाँ, अपनी बात से,
4. सुमन राजे, इतिहास में स्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ, 140

# माता जीतोजी कन्या महाविद्यालय, सूरतगढ़

एवं

# गीना देवी शोध संस्थान, भिवानी

के संयुक्त तत्त्वाधान में आयोजित

## मुख्य विषय - समकालीन हिन्दी साहित्य में सामाजिक विमर्श

## एक दिवसीय राष्ट्रीय सेमिनार, 19 अक्टूबर 2022

**आमंत्रित वक्तागण :-**

**डॉ. आशा रानी**
सहायक प्रोफेसर,
पंजाबी यूनिवर्सिटी रिजनल सैन्टर
भटिण्डा (पंजाब)

**डॉ. सुनयना**
पाठ्यक्रम समन्वयक जनसंचार
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
गुजविप्रौवि, हिसार (हरियाणा)

**डॉ. अल्पना शर्मा**
सहायक प्रोफेसर,
आईएएसइ विश्वविद्यालय
सरदारशहर (राजस्थान)

**डॉ. सौरभ गर्ग**
डीन, विधि संकाय
टांटिया विश्वविद्यालय
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

**डॉ. प्रवेश कुमारी**
सहायक आचार्य,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

**सिमरन सिंह**
मैनेजर, किन्नर अस्मिता
संस्था प्रोग्राम
मुम्बई (महाराष्ट्र)

**अर्चना कोचर**
वरिष्ठ साहित्यकार
एवं प्रबंधक
पंजाब नैशनल बैंक

**प्रो. नरेन्द्र सोनी**
तकनीकी सहायक एवं
स. प्रोफेसर, डीएन कॉलेज,
हिसार (हरियाणा)

**डॉ. मोहिनी दहिया**
प्राचार्या/मुख्य संयोजिका
माता जीतोजी कन्या महाविद्यालय
सूरतगढ़ (राजस्थान)

**डॉ. सुशीला आर्या**
सहायक प्रोफेसर/संयोजिका
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय
भिवानी (हरियाणा)

**डॉ. रेखा सोनी**
निदेशक/सम्पादक संगम,
गीना देवी शोध संस्थान
भिवानी (हरियाणा)

**डॉ. नरेश सिहाग,** एडवोकेट
सचिव/आयोजक,
गीना देवी शोध संस्थान
भिवानी (हरियाणा)

सम्पर्क :
8708822674
8107889265

संगोष्ठी ऑनलाईन/ऑफलाईन आयोजित होगी।

Emali : narendersoni24@outlook.com